आरोग्य शास्त्र

अर्थात्

सर्वदा स्वस्थ्य रहने के अचूक और परीक्षित साधन

लेखकः–

यज्ञ चिकित्सा के आविष्कारक, क्षय चिकित्सा में विशेष ख्याति प्राप्त, सफल और प्रसिद्ध विशेषज्ञ 'सुखमय जीवन', 'देव यज्ञ', 'यज्ञ चिकित्सा' इत्यादि इत्यादि पुस्तकों के लेखक–

श्री डा० फुन्दनलाल, एम. डी.,

डी. एस., एल. एम. आर. ए. एस., (लन्दन)

भूतपूर्व मेडिकल आफ़िसर टी० बी० सेनेटोरियम

(जबलपुर) प्रेमनगर, भूड़, बरेली।

प्रकाशकः–

स्वास्थ्य भण्डार

प्रेमनगर, भूड़, बरेली।

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथमवार १०००] सं० २००७ वि० 1950

मुद्रकः–

विष्णु स्वरूप विद्यार्थी

अध्यक्ष–आर्य प्रिंटिंग एण्ड पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ।

सॉफ्ट कॉपीः–

स्वास्थ्य भंडार

वैशाली नगर, जयपुर (राज.) 2026

मूल्य:– निशुल्क डाउनलोड

मुद्रक

विष्णु स्वरूप विद्यार्थी

अध्यक्ष–आर्य प्रिंटिंग एण्ड पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ।

भेंट

श्री ....

....

की सेवा में

....

....

की ओर से ।

समर्पण

संसार के नवयुवको !

आप भावी संसार के निर्माता हैं। इस निर्माण कार्य में सहायता देने वाली वह सामग्री आपकी भेंट की जाती है जिसे अपनाने से आप न केवल अपना किन्तु अपने सम्बन्धियों तक का जीवन सुखमय बना सकेंगे, फिर आपकी इच्छा हो तो इन उपदेशों को अपने देश में ही नहीं, समस्त संसार के हित के लिये अधिक से अधिक जनता तक पहुचायें। इतिहास हमें बताता है कि भारत कभी जगत गुरु के आसन पर विराजमान था। इसका मुख्य कारण यही था कि हमारे पूर्वज जहां स्वयं वैदिक पथ पर चलकर सर्वदा आरोग्य रहते हुये ऋषि मुनि की पदवी प्राप्त किया करते थे वहां संसार के हित के लिये उन अमूल्य सिद्धान्तों का संसार भर में प्रचार करते थे उनका मूल मन्त्र था–

अयो निज: परोवेत्ति गणना लघु चेतसाम्।
उदार चरितानां तु वसुधैव हि कुटुम्बकम्॥

यदि आपने मेरी भेंट को स्वीकार किया तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

आपका
परम हितैषी
डा० फुन्दनलाल

*ओ३म् *

भूमिका

भगवान पर विश्वास रखनेवाले हमारे बुद्धिमान पूर्वज वैद्य (डाक्टर) को भी पूज्य समझते थे। जनता स्वस्थ्य अवस्था में ही उनसे उपदेश प्राप्त कर उनको धन-धान्य से पूर्ण रखती थी। राज्य की ओर से भी दक्षिणा मिलती थी। उस समय के वैद्य भी जहां सादा और प्राकृतिक जीवन बिता कर स्वयं आध्यात्मिक उन्नति किया करते थे। वहां उन प्राकृतिक नियमों का उपदेश किया करते थे जिससे लोग रोगी ही न होयें। किसी संक्रामक रोग फैलने पर जहां वैद्य की अपकीर्ति थी वहां उसका कार्य-भार भी बढ़ जाता था। अतः वह जीवन-भर इसी अनुसन्धान में लगा रहता था कि जनता में रोग न फैलने पायें। पर आज स्वस्थ्य अवस्था में कोई डाक्टर की बात भी नहीं पूछता। अतः डाक्टर भी अपना कर्त्तव्य केवल रोगियों की चिकित्सा करना समझते हैं। तथा रोगियों की अधिक संख्या की खोज में रहते हैं। चूँकि विदेशी सभ्यता को अपनाने के कारण उनकी आवश्यकतायें भी बढ़ गई हैं अतः कोई कोई तो धन के लोभ में अनुचित कार्य भी करते हैं। इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप आज रोग और रोगियों की संख्या बराबर बढ़ रही है जब तक जनता और चिकित्सक दोनों की यह मनोवृत्ति न बदलेगी, लाख उपाय करने पर भी यह संख्या बढ़ती ही रहेगी। यह पुस्तक अपने पूर्वज ऋषि मुनि वैद्यों की प्राचीन भावना को लक्ष्य में रखकर लिखी गई है अतः इसमें उन प्राकृतिक और अनुभूत साधनों का वर्णन है, जिनके द्वारा मनुष्य सर्वदा स्वस्थ्य रह कर दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है। इस पर आचरण करने से आप न कभी रोगी होयेंगे न डाक्टर की आवश्यकता पड़ेगी। पर याद रखें इसका अधिक प्रचार तब ही हो सकेगा जब आप भी उसी प्राचीन भावना को अपनावेंगे, जिसमें सबका लाभ है। अर्थात् स्वास्थ्य अवस्था में वैद्य का सम्मान।

इस पुस्तक में जो कुछ लिखा गया है वह 46 वर्ष के अनुभव के आधार पर नि:स्वार्थ भावना से लिखा गया है। अतः उसका कोई मूल्य नहीं हो सकता। जनता की प्राचीन भावना न होने के कारण कागज़ और छपाई भी वैसी नहीं है जैसी हम चाहते थे। फिर भी इसका मूल्य लागत से कुछ अधिक प्रतीत होता है इसका कारण कुछ तो समाचार पत्रों के विज्ञापन दरों की असाधारण वृद्धि है और कुछ जनता में प्राचीन भावना की जागृति करके उसी के प्रचार में व्यय करने का विचार है। यदि जनता ने इसे अपनाया तो दूसरी आवृत्ति और अच्छे ढंग से छापी जावेगी। यह तब ही सम्भव होगा जब प्रत्येक पाठक इसका प्रचार करना अपना कर्त्तव्य समझें क्योंकि जितना इसका प्रचार होगा उतना ही रोग संसार से मिटता जावेगा।

आपका शुभचिन्तक–

डा० फुन्दनलाल

विषय-सूची

क्रम सं.	विषय	पृष्ठ
1.	**उपदेश 1 -** विचार	1
2.	**उपदेश 2 -** प्रसन्नता	11
3.	**उपदेश 3 -** परिश्रम अथवा पुरूषार्थ	16
4.	**उपदेश 4 -** जलवायु	33
5.	**उपदेश 5 -** जल	41
6.	**उपदेश 6 -** हमारा भोजन	58
7.	**उपदेश 7 -** (क) हमारा भोजन	78
8.	**उपदेश 8 -** (ख) विटामिन	81
9.	**उपदेश 9 -** (ग) शरीर के तत्व	84
10.	**उपदेश 10 -** हमारे भोजन के विभाग	92
11.	**उपदेश 11 -** भोजन की सूची पाचन के विचार से	95
12.	**उपदेश 12 -** भोजन संबंधी फुटकर नियम	99
13.	**उपदेश 13 -** दूध और मांस	105
14.	**उपदेश 14 -** प्रकृति अथवा स्वभाव	117
15.	**उपदेश 15 -** ऋतु चर्चा	119
16.	**उपदेश 16 -** भोजन पर राष्ट्रीय दृष्टि	121
17.	**उपदेश 17 -** पाचन क्रिया	123
18.	**उपदेश 18 -** वस्ती कर्म (एनीमा)	124
19.	**उपदेश 19 -** ब्रह्मचर्य	136
20.	**उपदेश 20 -** नींद व विश्राम	139
21.	**उपदेश 21 -** उपसंहार	142

उपदेश (1)

विचार

आरोग्य रहने के लिये सबसे प्रथम और आवश्यक साधन उसका विचार; संकल्प अथवा भावना है। क्योंकि मनुष्य वही बना करता है जो वह मन से विचार करता है। अथर्ववेद में बताया गया है कि काम[1] संकल्प सब से प्रथम प्रकट हुआ, इसका भाव यही है कि किसी काम की सिद्धि के लिये सबसे पहले उसकी कामना अर्थात् विचार का उत्पन्न होना है। इस से भी स्पष्ट शब्दों में एक और स्थान पर वेद ने बताया है कि मनुष्य के संकल्प में[2] तेजस्विता होती है और वह मनुष्य की भवितव्यता का स्वामी होता है। अतः जो मनुष्य सदा आरोग्यता का इच्छुक है, उसे कभी भूल कर भी रोगी होने का विचार न करना चाहिये, किन्तु सर्वदा आरोग्यता का ही विचार रखना चाहिये। जो मनुष्य यह सोचता है कि मैं स्वस्थ्य हूं, मेरी पाचन शक्ति बहुत बलवान है, मेरे पुट्ठे दृढ़ बन रहे हैं, मैं वेद के आदेशानुसार देखता - सुनता और पूरा स्वस्थ्य रहता हुआ कम से कम 100 वर्ष तक जीवन धारण करूँगा, वह अवश्य ही आरोग्य रहता है। क्योंकि सर्वदा आरोग्यता का विचार करते करते वह प्राकृतिक साधन जिन में आरोग्यता निहित है उसके स्वभाव में प्रवेश कर जाने के कारण कोई भी अप्राकृतिक बात उसे अखरने लगती है। कोई 35 वर्ष पुरानी बात है, हम नगर के बीच एक बड़े घर में जिसे हम स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़ा अच्छा समझते थे रह रहे थे। एक दिन एक योगी महात्मा को बहुत आग्रह करके अपने घर ले आए। दिसम्बर का महीना था, रात के समय नगर का धुआं नीचे ही मंडराया करता था जिसे उससे पहले हमने कभी अनुभव नहीं किया, पर जब वह महात्मा जी उससे घबरा कर जाने की शीघ्रता करने लगे तब हमारा ध्यान भी उस ओर गया। कहने का मतलब यह है कि स्वास्थ्य का हर दम विचार रखनेवाला उन महात्मा जी की भांति शुद्ध वायु में

---

[1] कामो जज्ञे प्रथमः अथर्व 9-2-19

[2] काम: उग्रत: ईशान: अथर्व 98-2-3

स्वांस लेने का अभ्यासी होने के कारण जहां भी थोड़ी भी अशुद्ध वायु होगी, तुरन्त ताड़ लेगा।

हमारे पूर्वज ऋषि-मुनि क्योंकि वेद के अनुसार जीवन व्यतीत करते थे, अतः उन्होंने अपने अनुभव के आधार पर जो उपनिषद् ब्राह्मण इत्यादि ग्रन्थ लिखे हैं उनसे भी संकल्प अथवा विचार की प्रधानता सिद्ध होती है। जैसे –

(1) मनुष्य जिस जिस बात की इच्छा करता है वह उसके संकल्प ही से पूरी हो जाती है। छां० 8-2-1

(2) मनुष्य पहले मन में संकल्प करता है, फिर उसे प्रकट करता है फिर उसी के अनुकूल आचरण करता है और जैसा आचरण करता है वैसा ही उसे फल मिल जाया करता है। ऐसे पाश्चात्य विद्वान भी जिन्होंने आत्मवाद के महत्व को कुछ समझा है, इस विषय में वेद के इस सिद्धान्त का मुक्त कंठ से अनुमोदन करते हैं। मार्डन (Marden) अमरीका का एक उत्कृष्ट लेखक समझा जाता है जिसने Every Man a King तथा Getting On इत्यादि अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। वह अपने ग्रन्थों में लिखता है:–

  (a) Man can renew his body by renewing his thoughts - अर्थात् मनुष्य अपने विचारों को नया करने से अपने शरीर को नया कर सकता है। फिर एक दूसरे स्थान पर लिखता है –

  (b) Control your thought and you control the destiny - अर्थात् तुम अपने संकल्प का नियंत्रण करके अपनी भवितव्यता को नियंत्रित कर सकते हो ।

  (c) Poverty itself is not so bad as the poverty thought - अर्थात् अकिंचनत्व स्वयं इतना बुरा नहीं है जितना संकल्पित अकिंचनत्व बुरा होता है ।

(d) Thoughts is the stuff, out of which things are made अर्थात् - विचाररूपी कच्चे माल से सब कुछ बना है इत्यादि।

(2) इसी प्रकार बैनेट (Bannet) अमरीका का दूसरा विद्वान है जिसने न केवल अपने लेख से, किन्तु अपने जीवन से वेद के इस सिद्धान्त को सत्य सिद्ध किया है। बैनेट ने अपने जीवन के 50 वर्ष बड़ी असावधानी से स्वास्थ्य रक्षा के नियमों की अवहेलना करते हुये बिताये थे, उसकी इस आयु का एक फ़ोटो उसकी पुस्तक में दिया है। बाल सफ़ेद, माथे में शिकन और गले में झुर्रियाँ पड़ी हुई और समस्त शरीर की त्वचा ने मांस को छोड़ दिया है। इस फ़ोटो को देखने से उसकी आयु 70 वर्ष की मालूम पड़ती है। 50 वर्ष की आयु में उसे युवा बनने का विचार उत्पन्न हुआ अब उसने उन विचारों को कार्यरूप में परिणित करने के लिये जहां भोजन में सुधार किया, वीर्य का संयम किया वहां दो बातें और कीं -(1) समस्त शरीर के हलके व्यायाम जिन्हें आदमी लेटे लेटे ही कर सके। (2) अपने विचारों को उपयोगी बनाना इन दोनों बातों का अभ्यास करते हुए उसने 20 वर्ष व्यतीत किये। 70 वर्ष की आयु का फिर एक फ़ोटो उसी ग्रन्थ में दिया है उस फ़ोटो के देखने से मालूम होता है कि वह 30 - 35 वर्ष के युवा पुरुष का चित्र है। बुढ़ापे के सब चिन्ह उस पर से जाते रहे हैं। इसी बैनेट ने एक ग्रन्थ लिखा है जिसका नाम है Old Age, its Causes and Prevention. अर्थात् बुढ़ापा, उसके कारण तथा बचाव। इस ग्रन्थ में लेखक ने एक प्रश्न उठाया है कि आदमी बूढ़ा क्यों होता है, वह कहता है कि जब मनुष्य का शरीर बनानेवाले सब कण (Cells) टूट - फूटकर और उनके स्थान में नये, बन कर दो वर्ष में नये हो जाते हैं, तो फिर आदमी को बूढ़ा क्यों होना चाहिये। इसका उत्तर बैनेट महाशय ने यह दिया है कि आदमी बूढ़ा अपने विचारों के कारण होता है। जैसा-जैसा वह बुढ़ापे की बातों को सोचता जाता है उसी के अनुसार वह होता जाता है। इस सिद्धान्त की पुष्टि में जहां उसका स्वयं अपना जीवन

है वहां उसने एक उदाहरण फ्रांस की एक लड़की का दिया है, जो इस प्रकार है। फ्रांस की एक 18 वर्षीय युवती ने अपना विवाह सम्बन्ध वहां के एक युवक से निश्चय किया। युवक धन हीन था और पाश्चात्य देशों में श्री पिंगल आचार्य की बनाई हुई, श्री: स्त्रीय वाली परम्परा बहुत अंश तक मानी जाती है। उसने लड़की से कहा कि सम्बन्ध पक्का है, पर जब तक धन न हो विवाह का कुछ आनन्द नहीं है अतः मैं कुछ समय के लिये धनोपार्जनार्थ अमेरिका जाऊंगा जहाँ 6 घण्टे काम करके मज़दूर भी 25 रू नित्य प्रति कमा सकता है। लड़की समझदार थी, राज़ी हो गई। उस युवक ने 3 वर्ष परिश्रम करके पर्याप्त धन पैदा कर लिया। परन्तु किसी झगड़े में पड़कर उसे 15 वर्ष और विवशता पूर्ण रहना पड़ा। 18 वर्ष के पश्चात् जब वह लौटा तब उन दोनों का विवाह हुआ, पर आश्चर्य की बात यह थी कि 37 वर्ष की आयु हो जाने पर भी वह लड़की वैसी ही सुन्दर और युवा मालूम होती थी, जैसी 18 वर्ष की अवस्था में। वर के पूछने पर लड़की ने बताया "मैंने निश्चय किया था कि 18 वीं वर्ष में विवाह करूंगी विवाह निश्चय तो हो गया पर हो न सका" तब मैंने दूसरा निश्चय यह किया कि "विवाह जब भी होगा मैं उस समय तक अपने चेहरे के आकार-प्रकार को वैसा ही बनाये रखूंगी जैसा 18 वर्ष की आयु में था। इस दूसरे निश्चय की पूर्ति के लिये मैंने अपने कमरे में एक पूरा शरीर देखनेवाला शीशा रखा और दिन में पांच - दस बार मैं उसके सामने खड़ी होकर अपने शरीर को देखती और यह भावना बनाती कि मैं वैसी ही हूं, जैसी कल थी। मुझ में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। और न उस समय तक होगा जब तक विवाह नहीं हो जाता। परिणाम इसका यह हुआ कि मैं अब तक वैसी ही हूं जैसी 18 वर्ष की अवस्था में थी। इस उदाहरण को देते हुए बैनेट ने यही सिद्ध करने का यत्न किया है कि As a man thinketh so is he जैसा कि हमारे यहां भी

लोकोक्ति है "यो या श्रद्‌ध: स एव स:" अर्थात् मनुष्य वही बनता है जैसा वह विचार करता है।

(3) एक और अमरीकन विद्‌वान डाक्टर कैलॉग (Kallang) ने भी इसका समर्थन किया है डाक्टर साहब ने अपने ग्रन्थ "man the master piece" में लिखा है - मनुष्य के विचारों का चेहरे की खूबसूरती पर प्रभाव पड़ा करता है। अच्छे विचार और चरित्र वाले का चेहरा खूबसूरत हुआ करता है।

(4) मिल्टन का कहना है कि 'The mind is its own place, and in itself can make a heaven of hell, a hell of heaven" अर्थात् स्वर्ग को नरक और नरक को स्वर्ग बनाना केवल मन का काम है।

(5) इमरसन (Emerson) का कहना है "The effect of any writing on the public mind is mathematically measurable by its depth and thoughts. अर्थात् विचारों की गहराई से गणित द्‌वारा यह बतलाया जा सकता है कि किसी लेख का जनता पर क्या प्रभाव पड़ सकता है।

(6) डाक्टर कैलॉग ने बताया है कि मनुष्य के संकल्प यदि बुरे हैं तो वह उसे रोगी बना दिया करते हैं कैसे विचारों से मनुष्य को किस प्रकार के रोग हो जाया करते हैं। उनमें से कुछ का विवरण इस प्रकार है।

(क) मानसिक चिन्ताओं (mental anxiety) से वक्ष विस्फोट (Cross Cancer of breast) होते हैं।

(ख) चिन्ता, क्रोध और हृदय को धक्का लगने से पांडु रोग (jaundice) हो जाया करता है।

(ग) डाह, भय और उदासीनता से हृदय से संबन्धित अनेक रोग हो जाते हैं। इन रोगों से जब हृदय अत्यन्त निर्बल हो जाता है तब साधारण सदमा पहुंचने से भी उसकी गति बंद हो जाती है और मनुष्य मर जाता है।

(घ) अत्यन्त स्वार्थ, डाह और ईर्षा से तृष्णा (Covetousness) बढ़ जाती है और उससे यकृत और तिल्ली के रोग हो जाते हैं।

(ड) क्रोध और घृणा से गुरदे से सम्बन्धित रोग हो जाते हैं।

(च) उद्वेग से त्वचा के कार्य प्रभावित होते हैं।

(छ) विषय वासना के विचारों से प्रमेह आदि मूत्र सम्बन्धी रोग हो जाते हैं। इसी के साथ कहीं चिन्ता का भी समावेश हो जावे, तो फिर क्षय रोग हुआ ही समझो।

(7) आगरा मेडिकल स्कूल के पढ़े एक डाक्टर साहब कहते थे कि मनुष्य पर विचार का क्या प्रभाव पड़ता है इसकी जांच करने के लिये स्कूल के कुछ लड़के आधे आधे फर्लांग के अन्तर से नगर को आनेवाली एक सड़क पर स्टेथसकोप लेकर बैठ गये। और एक लकड़ीवाले को अपनी परीक्षा का लक्ष्य बनाया। लकड़ी वाला अपना बोझा उठाये सड़क से जब जाने लगा तब पहले लड़के ने कहा, थोड़ी देर में तुम मर जाओगे। लकड़ीवाले ने उसकी बात पर कुछ ध्यान न दिया और आगे बढ़ गया। दूसरे लड़के ने भी उससे यही कहा, पर उसने फिर भी कुछ ध्यान न दिया। जब आगे गया तब तीसरे लड़के ने भी ऐसा ही कहा, तब कुछ कुछ मन डिगने लगा और पाँचवें लड़के के कहने पर वह घबराने लगा और आठवें लड़के के भी यही कहने पर वह मूर्छित होकर गिर पड़ा। तब उसे उसी मूर्छित अवस्था में चिकित्सालय लाया गया। और उसका उपचार प्रारम्भ हुआ। होश आने पर जब परीक्षण की ठीक बात बताई गई तब वह अपना बोझा लेकर चला गया।

(8) इसी प्रकार की एक दूसरी घटना का उल्लेख यहां कर देना उचित होगा। एक ग्राम में यह प्रसिद्ध था, कि अमुक मैदान में पीपल के वृक्ष पर एक भूत रहता है। जो रात्रि में उस ओर जानेवालों को सताता है। उसी ग्राम में एक पहलवान रहता था। जो अपनी शक्ति के प्रदर्शन में कहने लगा कि मैं

भूत को भी पछाड़ सकता हूं। लोगों ने शर्त लगादी कि यदि अमुक वृक्ष के नीचे रात के 12 बजे अकेले जाकर गाय चरा लाओ, तो इतना धन देंगे। पहलवान गया, पर बचपन के भूत से डरने के संस्कार साथ लेकर गया। अतः रह रह कर उसे अपनी शर्त पर पश्चाताप हो रहा था। पर बात का पक्का था गया ही। ज्यूंही गाय बांधने को खूँटा गाड़ने लगा घबराहट में उसका कपड़ा उसी खूँटे के नीचे आ गया और दब गया जब वह खूँटा गाड़ कर सीधा होने को हुआ तो कपड़ा दबने के कारण सीधा न हो सका। जिसे उसने भूत का पकड़ना समझा क्योंकि विवेक और बुद्धि तो वह उसी समय खो चुका था। जब उसने भूत जैसी काल्पनिक चीज़ पर विश्वास किया शक्ति और लाठी के भरोसे इस स्थान पर आया था। पर अब इतना भयभीत हुआ कि जान बचाने की चेष्टा में इस ज़ोर से भागा कि कपड़ा फट कर उसका कुछ भाग उसी खूँटा के नीचे रह गया। और पहलवान मार्ग में ही गिर कर मूर्छित हो गया। दूर पर लगे हुये लोगों ने घर पहुँचाया और जब प्रातःकाल उसे फटा हुआ कपड़ा उसी स्थान पर दिखाया गया तब जाकर उसका मन भय रहित हुआ और ऐसा होते ही रोग मुक्त हो गया।

देखा ! आपने विचार और मन का प्रभाव विचार के ही प्रभाव को लक्ष्य करके नीति शास्त्र में कहा गया है कि माता-पिता आदि वृद्ध जनों की सेवा से विद्या, आयु, यश और बल बढ़ता है। बालक पन में जब हमने यह श्लोक पढ़ा तो शंका हुई कि वृद्धजनों की सेवा से आयु और बल कैसे बढ़ सकता है और हमने समझा कि यह बात केवल श्रद्धा उत्पन्न कराने को लिख दी है। पर जब "विचार" की महिमा और प्राणों का जीवन से सम्बन्ध समझ में आया। तब हमारा मस्तिष्क अपने पूर्वजों के आगे महान श्रद्धा से झुक गया। जिनका एक एक शब्द अनुभव और सत्य के आधार पर लिखा गया है। शंका हमें अपनी अज्ञानतावश ही होती है। और जो लोग इस विचार के हैं कि हमें विदेशों से बहुत कुछ सीखना है। उनसे हम यही प्रार्थना करते हैं कि यह तो नितान्त सत्य है कि हमें अभी बहुत कुछ

क्या सब कुछ ही सीखना है। पर पहले हम अपने प्राचीन साहित्य वेद-शास्त्र इत्यादि तथा उन की संस्कृति को सीखें, फिर विचार करें कि अब हमें दूसरों से कुछ सीखना है या उन्हें अपने और संसार के हित की दृष्टि से सिखाना है। हम विचार के पाठ में यह प्रकरण इस कारण ले आये हैं कि देश के ऐसे लोगों के विचार के ही कारण हमारा देश कंगाली, बीमारी और अज्ञानता की ओर बढ़ा चला जा रहा है और यदि हमने इन विचारों को न बदला, तो फिर हम शिष्य बनने का विचार रखने से सर्वदा शिष्य ही बने रहेंगे, गुरू कभी नहीं बन सकते।

विचार के सम्बन्ध में भगवान कृष्णा ने गीता में कहा है –

ध्यायतो विषयान्पुंस: संगस्तेषूपजायते।

संगात्संजायते काम: कामात्क्रोधोऽभिजायते॥

क्रोधाद्भवति संमोह: संमोहात्स्मृति विभ्रम:।

स्मृति भ्रंशाद बुद्धि नाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥

गीता २।६२।६३

अर्थात् बुरे विषयों का चिन्तन करने से वे साथी बन कर काम को उत्पन्न करते हैं, काम से क्रोध, क्रोध से अविवेक, अविवेक से स्मृति में गड़बड़ी, स्मृति में गड़बड़ी होने से बुद्धि का नाश होता है। और बुद्धि का नाश होने से मनुष्य का नाश हो जाता है। अतः यह स्पष्ट है कि बुरे विचारों से मनुष्य का नाश हो जाता है। कोई यह न समझे, सोचने से क्या। चाहे कुछ सोचते रहें, होगा तो करने से ही। यह ठीक है कि बिना कर्म के केवल भावना से काम नहीं हो जाता, पर कर्म पीछे है। पहले भावना है क्योंकि भावना का ही प्रभाव कर्म पर पड़ता है। सोचने का प्रभाव दूसरों पर भी पड़ता है। बहुत से लोग जब किसी अच्छे या बुरे भाव रखनेवाले एक सी बात सोचते हैं, तो उन विचारों का वायुमंडल बन जाया करता है। क्योंकि विचार शब्दमय होते हैं और शब्द प्राकृतिक होते हैं। पंचतन्मात्राओं में, जिनमें सूक्ष्म भूतों का विवरण दिया गया है। सबसे पहली तन्मात्रा शब्द ही है।

हमारे शास्त्र के इसी सिद्धान्त को समझ कर पेरिस के डाक्टर वेगडुक ने विचारों के फ़ोटो लेकर यह बात उन लोगों के लिये भी सरल कर दी है। जो केवल प्रत्यक्षवादी हैं और शास्त्रों के गूढ़तत्वों को नहीं समझते फ़ोटो लेकर देखा गया:–

(1) एक स्त्री अपने मरे बालक का चिन्तन कर रही थी। फ़ोटो लेने पर मरे बालक का चित्र आ गया।

(2) एक सिपाही अपने पत्नी का विचार कर रहा था। फ़ोटो लेने पर वैसा ही चित्र आगया।

हम ऊपर बता आये हैं, विचार अपने तक ही सीमित नहीं रहते, किन्तु बार बार विचारने और बहुत - से विचारों से वायुमंडल वैसा बन जाता है। यही कारण है कि मंदिर में जाने से पापी मनुष्य के हृदय में भी कुछ समय को पवित्रता के भाव और वेश्यागृह में जाने से सदाचारी मनुष्य के हृदय में भी कुछ दूषित भाव उत्पन्न हो जाते हैं। हमारा अपना अनुभव है कि हम ऋषि दयानन्द जी महाराज की जन्म शताब्दी के उत्सव पर मथुरा गये थे। जहाँ लगभग 10 लाख मनुष्यों ने अपने भावों से "मा गृध: कस्यधनम्" का वातावरण बनाया हुआ था।

हमें मार्ग में पड़ा हुआ एक रूमाल मिला, जिसमें तीन गिन्नी तथा एक कोटा का वापसी टिकट बंधा हुआ था। हमने वह रूमाल तुरन्त अपने लघु भ्राता को देकर कैम्प मैनेजर के पास जमा करने को भेज दिया। जहां से उसके मालिक को मिल गया। उस समय हमारे हृदय में न तो एक क्षण के लिये यह विचार आया कि हम इसे ले लें, न अपने इस कृत्य पर अभिमान की भावना उत्पन्न हुई। किन्तु जिस समय वह पदार्थ उसके मालिक को दिया गया, हम भी उत्सव में विद्यमान थे, पर हमने यह प्रगट करना भी आवश्यक नहीं समझा कि यह हमें मिला था। उसके कई वर्ष पश्चात् एक दिन दिवाली के प्रातःकाल जब हम ऊषाकाल में वायु सेवन को निकले, तो हमारे मकान के चबूतरे पर पड़ी एक अठन्नी मिली। हमने उसे उठा लिया। और यह अनुमान लगा लिया कि किन्हीं ही लोगों ने यहां बैठकर जुआ खेला है (जो उस समय अँग्रेजी राज्य में वैधानिक था) उन ही से

यह यहाँ छूट गई है। अशुद्ध धन समझ हमने उसे खर्च तो अब तक नहीं किया है। किसी धार्मिक संस्था को देना भी उचित नहीं समझा। पर उसे कोतवाली में जमा करने का भाव कभी उत्पन्न नहीं हुआ।

इन दोनों भावों का कारण दोनों स्थानों का वायुमंडल है। इसी प्रकार स्वास्थ्य के सम्बन्ध में वायुमंडल का प्रभाव पड़ा करता है। प्राचीन काल में लोग वैदिक जीवन बनाकर सर्वदा स्वस्थ्य रहने की बात सोचते थे, अतः दूसरों पर भी प्रभाव पड़ता था और वायुमंडल स्वस्थ्य मनुष्यों का बन जाया करता था। आज उसके विपरीत स्वास्थ्य विभाग लोगों को स्वस्थ्य रहने के प्राकृतिक नियमों को बताने की जिम्मेदारी न समझता हुआ केवल रोगों के सम्बन्ध में सोचता है अतः रोग बढ़ रहे हैं। अच्छे संकल्प मानसिक शक्ति बढ़ानेवाले हुआ करते हैं। मानसिक शक्ति के बढ़ जाने से मनुष्य का चेहरा प्रभावोत्पादक हो जाता है और आँखों में तेजस्विता आ जाती है। दूसरे निर्बल प्राणी उसकी इस शक्ति से प्रभावित हो जाते हैं। अतः एक मनुष्य अच्छे विचारों से वायुमंडल बनाने में सहायता किया करता है। इसलिये वेद में मन से अच्छा सोचने की अनेकों स्थान पर प्रार्थना की गई है। विचार के सम्बन्ध में इतना बताने के पश्चात् हम समझते हैं कि हमें अपने पाठकों से यह कहने का अधिकार है कि आरोग्यता प्राप्ति के लिये सब से प्रथम साधन यह विचार करना है कि "मैं आरोग्य हूँ कभी रोगी नहीं हो सकता।" मैं अपने आचरण से दूसरों को भी रोगी न होने देने में सहायता करूँगा। अपने इस संकल्प को शक्तिशाली और प्रभावोत्पादक बनाने के लिये कभी कोई कार्य ईश्वर आज्ञा के विरुद्ध अर्थात् वेद के विरुद्ध जिसे दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि प्राकृतिक नियम के विरुद्ध नहीं करूंगा, और सर्वदा स्वस्थ्य रहते हुये कम से कम सौ वर्ष बल्कि इससे भी अधिक जीवन धारण करके देश और धर्म की सेवा करूंगा, जिससे अपने अन्तिम जीवनोद्देश मोक्ष को प्राप्त कर सकूँ।

उपदेश (2)

प्रसन्नता

जिस प्रकार क्रोध से रक्त में उबाल आता और वह विष युक्त होकर रोग उत्पन्न करने का कारण हुआ करता है। उसी प्रकार प्रसन्नता से आरोग्यता प्राप्त होती है। जिन मनुष्यों का स्वभाव चिड़चिड़ा होता है वह प्राय: रोगी रहा करते हैं। और जो हँसमुख होते हैं वह प्राय: स्वस्थ्य रहते हैं, पर यह प्रसन्नता ऊपरी और कृत्रिम न होना चाहिये। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं कि प्रगटरूप में हँसते-बोलते रहते हैं, पर मन में दूसरों से डाह तथा अशुभ भावनायें रखते हैं। यह आरोग्य नहीं रह सकते क्योंकि जैसा कि पूर्व में बताया जा चुका है कि विचारों का प्रभाव सबसे प्रबल होता है। प्रसन्न रहने और हंसने से रक्त संचार ठीक होता है। उसका प्रभाव पाचन-क्रिया पर पड़ता है। और यह सब ही जानते हैं कि रक्तसंचार और पाचन स्वास्थ्य की मुख्य क्रियायें हैं। क्रोध अवस्था में मनुष्य के हाथ, पांव और मस्तिष्क काम नहीं कर सकते, शरीर निकम्मा सा हो जाता है। इसके विपरीत प्रसन्न अवस्था में मनुष्य में सोचने और कार्य करने की क्षमता बढ़ जाया करती है। चाहे प्रसन्नता के इन गुणों को सब जानते न हों, पर इच्छा तो सब की ही होती है कि हम सदा प्रसन्न रहें। किन्तु प्रत्येक व्यक्ति को सदा प्रसन्न रहने के साधनों का ज्ञान नहीं है, अतः हम उन साधनों पर कुछ प्रकाश डालने का प्रयत्न करते हैं:–

(1) प्रसन्न रहने का सब से पहला साधन ईश्वर विश्वास है। जो मनुष्य यह समझता है कि प्रभू रोम रोम में विराजमान रह कर हर समय प्रत्येक मनुष्य को शुभ कार्य करने की प्रेरणा करते हैं। और यदि वह उनकी आज्ञा का पालन करता है, तो उसे संसार में सुख ही सुख है दु:ख का नाम नहीं। और जब कभी वह आत्मा की आवाज़ की अवहेलना करके प्रभू के इस अमृतमय उपदेश के विरुद्ध कार्य करता है, तो मनुष्य के सुधार की दृष्टि से जैसे पुत्र को कुमार्ग से रोकने के लिये पिता ताड़ना करता है उसी प्रकार

भगवान मनुष्य को दु:ख रूपी दंड दिया करते हैं। दूसरे शब्दों में सुख आज्ञा पालन का पारितोषिक और दु:ख सुधार का यंत्र है। अतः यह सिद्धान्त बिल्कुल ठीक है कि ईश्वर जो करता है अच्छा करता है। इस सिद्धान्त का माननेवाला सर्वदा प्रसन्न रहता है। इस संबन्ध में एक मनोरंजक गाथा है:–

एक राजा का मन्त्री इसी सिद्धान्त का माननेवाला था। एक दिन राजा साहब ने कहा मंत्री जी आज तो हमारी उंगली चाकू से कट गई, मंत्री ने अपने सिद्धान्त के अनुसार यही कहा भगवन ईश्वर जो करता है अच्छा ही करता है। मंत्री राजा को बहुत प्रिय था और वह हर समय अपने साथ ही रखते थे। पर इस उत्तर से उस दिन राजा साहब को क्रोध आ गया और मंत्री को डिसमिस कर दिया। मंत्री ने फिर यही कहा कि ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा करता है, और अपने घर चला गया। मंत्री से जब कोई आकर सहानुभूति प्रकाशन अर्थ खेद प्रगट करता, तो वह प्रसन्नता पूर्वक यही कहता कि खेद की कोई बात नहीं। ईश्वर जो करता है, अच्छा करता है मेरी इसी में कुछ भलाई होगी। कुछ समय के पश्चात् एक दिन राजा आखेट में अपने सेवकों से बिछुड़ कर किसी अन्य राजा के राज्य में पहुच गया। वह राजा वाममार्गी अर्थात् वेद विरोधी था और उसे अपने विश्वास अनुसार उस दिन देवी पर मनुष्य बलि चढ़ानी थी। इस राजा के सिपाहियों ने अपनी सेना में बिछुड़े राजा को हृष्ट-पुष्ट देख बलिदान के लिये पकड़ लिया। जो ईश्वर विश्वासी नहीं होता उसमें आत्मिक बल की कमी होती है। अतः राजा कुछ न कर सका और बलि के अर्थ पुजारियों के सुपुर्द कर दिया गया। पुजारियों ने जब उसकी उंगली कटी हुई देखी, तो अंग-भंग मनुष्य की बलि देने में इनकार कर दिया। अतः राजा को छोड़ दिया गया। उस दिन उसकी समझ में आया कि मेरी उंगली का कटना भी मेरे हित में था। और उसी दिन से उसका भी यही सिद्धान्त हो गया कि "ईश्वर जो करता है

अच्छा करता है।" पृथक किये हुये मंत्री को फिर से सम्मान पूर्वक बुलाया और सारा वृत्तान्त सुनाकर अपने मत परिवर्तन का समाचार भी सुना कर कहा कि एक बात की मुझे अब भी शंका है कि इतने समय तक नौकरी से पृथक रहने में तुम्हारी क्या भलाई थी। मंत्री ने कहा महाराज ईश्वर तो सर्वदा अच्छा ही करता है, पर हर समय हम उस बात को समझ जावें ऐसा सम्भव नहीं है। क्योंकि हम अल्पज्ञ हैं। फिर भी आपकी शंका का उत्तर तो स्पष्ट है यदि मैं पृथक न किया गया होता, तो मैं भी अपने स्वभाव के अनुसार आपके साथ ही होता। आप तो अंग-भंग होने के कारण बच जाते और मेरी बलि चढ़ना अनिवार्य थी।

(2) प्रसन्नता का दूसरा साधन परोपकार वृत्ति है, जो मनुष्य यह समझता है कि मेरा भोग मेरे कर्मों के अनुसार निश्चित है वह तो बदल नहीं सकता। मुझे हर कार्य गीता में बताए सिद्धान्त के अनुसार निष्काम भाव से दूसरों के हित के विचार से करना चाहिये वह कभी अप्रसन्न नहीं रहता। चिन्ता, दुख, शोक सन्ताप खाली मन में ही अपना स्थान जमाया करते हैं। संसार के उपकार करने का कार्य इतना विस्तृत है कि उसमें व्यस्त मनुष्य को इन बातों के लिये समय ही नहीं मिलता।

(3) प्रसन्न रहने का तीसरा साधन चिन्ता के मर्म को समझना है। चिन्ता क्या वस्तु है ? मनुष्य जीवन में अनेकों घटनायें घटती हैं और अनेकों विचार आया जाया करते हैं। जिनमें कुछ प्रसन्न करनेवाले और कुछ चिन्ता उत्पन्न करनेवाले होते हैं। इनमें से जो चिन्ता उत्पन्न करने वाले हैं उन पर विचार करो उदाहरणार्थ तुम्हारा कोई सम्बन्धी रोगी है और रोग भी कठिन है। इससे तुम्हें भय प्रतीत होता है। और रह रह कर यह विचार आता है कि अब यह चला। यह भय मन में आया और तुम दुखी हुए। बार बार सोचने से मन का उसके सोचने का स्वभाव बन गया, और तुम चिन्ता ग्रस्त होने लगे। इसकी चिकित्सा यह है कि प्रथम तो मन का स्वभाव वेद भगवान

के आदेश अनुसार "शिव संकल्प" वाला अर्थात् सदा शुभ सोचने वाला बनाना चाहिये। अतः अशुभ भावना आते ही उसे चित्त से दूर भगा देना चाहिये। फिर यह सोचना चाहिये कि जिस बात को तुम सोच रहे हो वह तुम्हारे अधिकार में भी है, या तुम्हारे अधिकार से बाहर है। जैसे तुम्हारा सम्बन्धी रोगी है, तो तुम्हारा अधिकार तो इतनी ही बात में है कि उसे आराम से रखो, जिन प्राकृतिक अथवा वैदिक नियमों के तोड़ने से वह रोगी हुआ है, उन पर उसे पुन: लाओ और विदेशी औषधियों के विषयुक्त प्रभाव से रोग उत्पन्न हुआ है, तो उनका प्रयोग बंद करो और अच्छे वैदिक अथवा प्राकृतिक नियम जानने वाले चिकित्सक के आदेश पर चिकित्सा करो। बस इतना ही तुम्हारा कर्त्तव्य है और यही तुम्हारे अधिकार में है। इस से आगे आरोग्य करना अथवा मारना उस परम पिता के अधिकार में है जो केवल तुम्हारे लिये नहीं, किन्तु समस्त संसार की हित की दृष्टि से कार्य कर रहा है। वह जैसा उचित होगा वैसा करेगा। उसी में प्रसन्न रहने का स्वभाव बनाओ नहीं बनाओगे, तो तुम ही चिन्ता ग्रस्त रहकर दुखी रहोगे तुम्हारी चिन्ता से कोई परिवर्तन नहीं हो सकता।

(4) कुछ लोग धन की चिन्ता में घुला करते हैं, और जो कुछ पास होता है उसकी रक्षा न कर बीड़ी, सिगरेट, मदिरा, सिनेमा और व्यर्थ की फ़ैशन बनाने में व्यय करते हैं। पूरे पुरुषार्थ से धर्म पूर्वक धन कमाना और उसे सोच समझ कर अधिक से अधिक उपकार के कार्य में व्यय करना हमारा कर्त्तव्य है। इससे आगे फिर जो कुछ भगवान ने दिया है उसमें सन्तुष्ट रहना चाहिये क्योंकि जो कुछ हमारा है, वह कहीं जा नहीं सकता। जो हमारा नहीं है वह लाख उपाय करने पर भी हमको प्राप्त नहीं हो सकता। भगवान ने जिस स्थान पर हमें रखा है, वही सब से अच्छा स्थान है। ड्रामा का मैनेजर जिस व्यक्ति को जो पार्ट खेलने को कहता है, उसकी उन्नति इसी में है कि अपने पार्ट को भली प्रकार खेलें, पार्ट चाहे राजा का हो चाहे

चपरासी का इससे कोई सरोकार नहीं। प्रशंसा इस बात की है कि पार्ट ठीक ठीक अदा हो। ऐसे विचार बनाने और वैदिक साहित्य के स्वाध्याय से मनुष्य सर्वदा हर अवस्था में प्रसन्न रह सकता है।

उपदेश (3)

परिश्रम अथवा पुरुषार्थ

स्वस्थ्य वही रह सकता है जो परिश्रमी है। आलसी और काम चोर सर्वदा रोगी रहते हैं। एक प्रकार से स्वस्थ्य होने का चिह्न ही पुरुषार्थी होना है। जिस व्यक्ति को काम करने की उमंग है, उत्साह है और खाली बैठना बुरा प्रतीत होता है, वही वास्तव में स्वस्थ्य है; और वही संसार में सफल होता है। वेद भगवान का आदेश है कि मनुष्य के दाहिने हाथ में पुरुषार्थ है, तो बायें हाथ में सफलता है। भगवान ने रात्रि विश्राम तथा ध्यान करने को और दिन काम करने को बनाया है। अतः पुरुषार्थी बनने का प्रथम साधन ऊषाकाल में उठना है। इस विषय पर सब ही विद्वान सहमत हैं कि ऊषाकाल के उठने का एक विशेष महत्व है और इसके भीतर जीवन की सफलता का रहस्य निहित है। अतः इस सम्बन्ध में यहाँ कुछ लिखते हैं:–

ऊषाकाल

वेद भगवान का उपदेश है "हे मित्रों तुम प्रकाश की ओर चलनेवाले तेज पुञ्ज सूर्य की ओर ऊषा देवी को लक्ष्य करके सूर्य और ऊषा के आगमन – उदयकाल देख कर ही जागो।" इस समय को प्राचीन ग्रन्थों में अमृतवेला कहा है क्योंकि इस समय अमृत वर्षा होती है। इस अमृतपान के इच्छुक मनुष्य को उसी समय तुरन्त उठ बैठना चाहिये। वेद के इस उत्तम उपदेश का आयुर्वेद मुक्तकण्ठ से अनुमोदन करता है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थ भावप्रकाश में लिखा है "ब्राह्मे मुहूर्ते बुधेत स्वार्थी रक्षार्थ मानुष" अर्थात् स्वस्थ्य मनुष्य स्वस्थता की रक्षा के लिये ब्रह्म मुहूर्त में उठे। आधुनिक विद्वान भी चाहे इस पर आचरण कम करते हों, पर वेद के इस सत्य सिद्धान्त को मुक्तकण्ठ से स्वीकार करते हैं, उनका मत है :–

Early to bed and early to rise, Makes a man healthy wealthy and wise.

अर्थात् रात्रि को शीघ्र सोना और प्रातःकाल शीघ्र उठना मनुष्य को स्वस्थ्य, धनवान और बुद्धिमान बनाता है। मुसलमान भी वेद के इस उपदेश को मान ब्रह्म मुहूर्त में उठकर प्रातःकाल का नमाज़ पढ़ते हैं। जो फिर सो जाते हैं वह गलत करते हैं। वैज्ञानिक ढंग से ब्रह्म मुहूर्त में उठने के क्या लाभ हैं, इस पर भी विचार करना चाहिये:–

(1) इस समय जो समीर चलती है उसमें प्राण प्रद वायु का भाग बहुत अधिक रहता है और वह मनुष्य में विशेषरूप से जीवन का संचार करता है। वास्तव में प्राण ही जीवन है। सम्पादक लेखक विद्यार्थी सब ही मस्तिष्क सम्बन्धी काम करनेवालों का अनुभव होगा कि इस समय जो काम थोड़े समय में हो जाता है वह दूसरे समय अधिक काल में भी वैसा उत्तम नहीं होता। एक जज साहब कहा करते थे कि वह विद्यार्थी जीवन में सर्वदा केवल प्रातः 3 बजे से सूर्योदय पर्यन्त पढ़ा करते थे और फिर दिन भर गप्पें उड़ाते थे। फिर भी सर्वदा अच्छे नम्बरों से उत्तीर्ण होते रहे और जज बने।

(2) हम जो कुछ भोजन करते हैं उसका सार भाग तो रक्त बन कर हमारे शरीर का भाग बन जाता है शेष अवशिष्ट भाग मल रूप में वस्ती (कोलन) में जमा होता है। यह मल यदि ठीक मात्रा में उचित समय पर बिना किसी विलम्ब के साधारण अवस्था में निकल जावे, तो मनुष्य को कदाचित कोई भीतरी रोग न हो। रात्रि में ठंड के कारण उसमें सड़न इत्यादि नहीं होती। प्रातःकाल सूर्य की गर्मी उत्पन्न होने से पूर्व यदि उसका त्याग कर दिया जायगा, तो वह हमारे शरीर पर बिना कोई बुरा प्रभाव छोड़े शरीर से निकल जायगा पर जब सूर्य की किरणों का आगमन आरम्भ होता है, तो त्यागने योग्य भाग में सड़न उत्पन्न होकर एक प्रकार की भाप ऊपर उठने लगती है जो जिस अंग पर जम जाती है उसी अंग का रोग हो जाता है। जोड़ों पर जम कर गठिया, गुर्दों में जम कर कालिक पेन, किसी अन्य स्थान पर

जम कर वायु के रोग, आमाशय में मन्दाग्नि और मस्तिष्क पर जम कर नज़ला उत्पन्न करती है। इसी कारण भिन्न भिन्न नाम वाले अनेकों रोग उत्पन्न होते हैं। रोगों के अनेकों नाम है, पर कारण सब का प्रायः एक ही है। अर्थात् मल का कोलन में सड़ते रहना और इसका मुख्य कारण सूर्योदय के पश्चात् उठना है।

(3) लोगों का अनुभव होगा कि अंधेरे से जब एक दम खूब प्रकाश में आयें अथवा प्रकाश से एक दम खूब अंधेरे में जावें तो आँख को धक्का सा लगता है और दृष्टि एक दम मन्द पड़ जाती है। पर क्रमशः प्रकाश से अंधेरे में या अंधेरे से प्रकाश में आवें तब ऐसा नहीं होता क्योंकि धीरे धीरे ऐसा होने से आँख को धक्का नहीं लगता। जो लोग ऊषाकाल में उठते हैं उनकी आँख को क्रमशः प्रकाश मिलता है, अतः वह धक्का नहीं लगता। पर जो सज्जन दिन चढ़े उठते हैं उनकी बंद आँख अंधेरे से एक दम प्रकाश में खुलती है, अतः धक्का लगता है और आँख की दृष्टि कम हो जाती है। आज वैदिक सभ्यता से विमुख लोगों की जो प्राय: देर में उठते हैं आँख पर चश्मा और प्राचीन काल के हमारे पुरुषाओं की तीन तीन सौ वर्ष की आयु में भी आँख की रोशनी का बना रहना इसका पुष्ट प्रमाण है। यद्यपि इस अन्धेपन के और भी अनेकों कारण हैं, पर उनमें का मुख्य कारण रात्रि को देर तक जागना और दिन में सोना है।

(4) मल की गर्मी से भाप ऊपर उठ कर दातों पर जम जाती है जो फिर टारटर का रूप धारण करके मसूढ़ों को गला देती है और आज का प्रसिद्ध रोग पायोरिया उत्पन्न करती है और यह सब जानते हैं कि पायोरिया बड़ा भयानक रोग है जिससे मन्दाग्नि तो उत्पन्न होती ही है, कभी कभी क्षय रोग भी हो जाता है। इसी प्रकार की अनेकों हानियां देर से उठने से होती हैं, और समय भी नष्ट होता है, अतः पुरुषार्थी मनुष्य को सब से पहला परिश्रम यही करना चाहिये कि वह ऊषाकाल में उठ बैठे। उठने पर सब

से पहले उस प्रभू का स्मरण और धन्यवाद करे, जिसकी असीम कृपा से हम स्वस्थ्य शरीर तथा संसार के सारे पदार्थ पाते हैं। इसके पश्चात् शरीर की मशीन को कार्य में लगाने से पूर्व उसकी सफ़ाई करे। शौच जाकर मल-मूत्र का त्याग करे। हाथ-मुँह धोकर और दातुन करके दांत और जीभ हलक़ तालू पर जमा हुआ मल दातुन और उंगली की सहायता से साफ़ करे। मुंह में पानी भर कर आंख खोल कर शुद्ध जल के दस दस छीटे आंख पर मारे, और फिर नाक से पानी सुड़क कर मुह के भीतर का चेप निकाल दे। इस प्रकार नित्य प्रति सफ़ाई करने से नज़ला और वायु के सब रोग शांत होते हैं। आंख की ज्योति बढ़ती है और शरीर में कार्य करने की क्षमता उत्पन्न होती है। यदि दाँत में कोई रोग हो या निर्बल हों, तों मल-मूत्र त्याग करते समय दांतों को परस्पर खूब ज़ोर से दबा कर रखना चाहिये। इस से दांत मज़बूत होते हैं। इतना करने के पश्चात् शुद्ध वायु सेवन को किसी उद्यान बाटिका अथवा नदी किनारे भ्रमण को जाना चाहिये और खुले मैदान में प्राणायाम तथा व्यायाम करना चाहिये। इनकी विधि तथा लाभ निम्न लिखित है:–

प्राणायाम की विधि

पद्मासन अथवा किसी और सुख पूर्वक आसन से बैठ जायें हाथों को घुटनों पर रखें। मन को हर ओर से हटा कर ओ३म् का स्मरण तथा ध्यान करते हुए स्वांस को बड़े वेग से नाक द्वारा बाहर निकाल दे। और बाहर ही रोके रखें। जब न रुक सके तब नाक से ही धीरे धीरे सांस भीतर लें। भीतर लेते समय यह ध्यान रखें कि स्वांस पहले पेट में जाये तब धीरे २ ऊपर के भाग में छाती तक पहुँचे जब छाती भर जावे तब कंधों को कुछ ऊपर उठा दें जिससे स्वांस फुफ्फुस के ऊपरी भाग में भी भर जावे। जब तक स्वांस भीतर रोक सकें रोके जब न रुके तब फिर पहले की भाँति वेग से बाहर निकाल दे। इसी प्रकार कम से कम तीन और अधिक से अधिक 21 बार करें।

प्राणायाम की आवश्यकता

उपनिषदों में एक गाथा है कि एक बार इन्द्रियों ने प्राण से विद्रोह करने की ठानी। आंख ने अपना काम देखना छोड़ दिया, कान ने सुनने का कार्य बन्द कर दिया, पर इससे प्राणों का कुछ न बिगड़ा। पर जब प्राण ने अपना कार्य बन्द करना चाहा, तो सब इन्द्रियों की शक्ति क्षीण होने लगी। कथा तो अलंकार के रूप में है। इसका आशय यह है कि शरीर में प्राण ही मुख्य है। इसीलिये न केवल उपनिषद्, किन्तु वेद ने भी स्थान स्थान पर प्राणों की महिमा गाई है। वास्तव में जीवन का चिह्न ही प्राण है। बालक जब संसार में आता है, पृथ्वी पर आते ही सबसे पहले एक गहरी श्वांस लेता है और उसका जीवन प्रारम्भ हो जाता है। जब अन्त समय आता है तब लोग यही कहते सुने जाते हैं कि "जब तक श्वांस तब तक आश"। वृद्ध मनुष्य एक अन्तिम गहरी श्वांस छोड़ता है और उसका जीवन समाप्त हो जाता है, तो श्वांस अथवा प्राण ही जीवन का आधार सिद्ध होता है। प्राण की इस महिमा को समझ कर हमारे पूर्वज ऋषि-मुनि वर्षों की समाधि लगाते और अपनी आयु को सैकड़ों ही नहीं कभी कभी सहस्रों वर्ष तक बढ़ा लिया करते थे। पर वर्तमानकाल में जहां और बहुत सी कुरीतियों ने हमारे यहां डेरा जमाया है, वहां हमने ठीक रीति पर श्वांस लेने का ढंग भी भुला दिया है। पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंग कर हमने भारतवर्ष जैसे मध्यम ऋतुवाले देश में भी जहां बहुत समय तक केवल एक धोती से अथवा कुर्ता-धोती से काम चल सकता है , ठंडे देशों की नकल में पेटी से कसे पैंट, तंग बनियाइन, क्लोज कोट, मोज़े 6 - 6 कपड़े पहन कर स्वाभाविक अवस्था में श्वांस लेना भी दुस्तर कर दिया है। यही कारण है कि आज संकुचित छातियों, झुके हुए कंधों और श्वांस सम्बन्धी अनेक रोग क्षयी इत्यादि में ग्रसित लोगों की संख्या अधिक है। श्वांस सम्बन्धी ज्ञान को हमने ऐसा भुलाया कि कभी किसी ने इस पर विचार भी किया तो यह कह कर टाल दिया कि यह तो योगियों की बातें हैं, जो जंगल में रहा करते हैं। गृहस्थियों को ऐसी बातों से क्या मतलब। वर्तमान समय में ऋषि दयानन्द जी महाराज

पहले सुधारक थे जिन्होंने हमारी आँखों पर से अविद्या का पर्दा उठाया और नित्य कर्म के साथ कम से कम तीन प्राणायाम प्रतिदिन प्रातः सायं करने का उपदेश देकर बताया कि प्राणायाम कोई ऐसे भय की वस्तु नहीं जिसे केवल जंगल में रहने वाले योगी जन ही कर सकें। किन्तु प्रत्येक नर-नारी, वाल-वृद्ध को चाहे वह ब्रह्मचारी, विद्यार्थी हो या गृहस्थी या सन्यासी केवल प्राणायाम करने की आवश्यकता और अधिकार है, किन्तु हर एक का ऐसा करना कर्त्तव्य और नित्य कर्म है। ऐसा ही जैसे भोजन करना और जल पीना। साथ ही ऋषि का यह उपदेश अब विदेशों में भी गूंजने लगा है। और कुछ लोग वहां भी अब इस ओर ध्यान देने लगे हैं। पर वहां अधिकांश लोगों ने इसे धन कमाने का साधन बनाया है जो उचित नहीं है। प्राणायाम के अनेकों लाभ हैं। बताया गया है कि इसके द्वारा हम योग बल से सारे संसार पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। ईश्वर को साक्षात कर सकते हैं और मनुष्य जन्म के अन्तिम उद्देश्य मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। यदि इनमें से किसी भी उच्च आध्यात्मिक दर्जे पर न पहुंच सकें, तो कम से कम इतना लाभ तो अवश्य होगा कि हमारा स्वास्थ्य और जीवन बढ़ेगा। तपेदिक़ इत्यादि रोगों से मुक्त रह कर अपने कामों को सफलता पूर्वक कर सकेंगे। साथ ही यदि ओ३म् के जाप में चित्त लगता रहा, तो आत्मिक बल इतना बढ़ेगा कि बड़ी से बड़ी आपत्ति आने पर भी घबराएंगे नहीं। प्राणायाम के आध्यात्मिक लाभों पर लिखना इस पुस्तक का विषय नहीं है, अतः हम यहां उसके शारीरिक प्रभाव पर ही दृष्टि डालेंगे, जिसके लिये हमें अपनी शारीरिक क्रियाओं पर विचार करना होगा। आप इसे केवल सरसरी तौर पर पढ़ कर न छोड़ जायें क्योंकि इन सब बातों को बिना समझे आप आगे के विषय भली प्रकार न समझ सकेंगे।

हमारा शरीर

हमारे मुख में कंठ से नीचे दो मार्ग हैं। एक भोजन का, दूसरा वायु का। भोजन करते समय जब कभी भूल से वायुवाले मार्ग में कुछ वस्तु चली जाती है, तो उसका ठसका (ओल्लू) लगता है। और उस समय तक चैन नहीं पड़ता जब

तक वह पदार्थ वहां से हट नहीं जाता। क्योंकि वह मार्ग वायु के लिये ही है। भोजन वाले मार्ग से भोजन आमाशय में पहुंचता है, जहां वह पीसा जाता है और यदि दांतों से भली प्रकार चबाया गया है और लार (Saliva) को उसमें मिश्रित होने का पूरा अवसर दिया गया है, तो आधे घंटे में पिसने तथा आमाशय में इस मिश्रण के पश्चात् लेई के रूप में जिसे अंगेजी में चायम (Chyme) कहते हैं आंतों में जाने लगता है। आंतों में पहुंचने तक उसमें कई रस मिलते हैं। यकृत भी अपना पाचक रस आंतों में छोड़ता है, जिससे भोजन पूर्णरूप से पचता है। जिसका यकृत ठीक काम न करता हो उसका भोजन ठीक तौर पर नहीं पच सकता। इधर तो आंतों में पचने की क्रिया होती है, दूसरी ओर उसमें से रस चूसने वाली ग्रंथियां बराबर रस चूस चूस कर रक्त में पहुंचाती जाती हैं और यह रस भी रक्त के रूप में परिवर्तित होता जाता है। भोजन का शेष भाग जो रक्त नहीं बन सकता, आंतों की जोंक की सी चाल से आगे को खिसकता जाता है। और अन्त में मलाशय से गुदा द्वारा बाहर निकल जाता है। इससे आपका रक्त बनने का क्रम तो ज्ञात हो गया अब आप रक्त के कार्य पर ध्यान दें। रक्त सारे शरीर में अपनी बहुत पतली धमनियों द्वारा भ्रमण करता है और प्रत्येक अंग में कार्य करने से जो क्षति हुई है उसे पूरा करता है। और अपने में से प्राण-प्रद वायु (oxygen) छोड़ कर वहाँ से विष युक्त वायु (Carbonic Acid gas) साथ लेकर शिराओं द्वारा लौट कर हृदय की सीधी ओर वाली कोठरी में जमा होकर शुद्ध होने के लिये फेफड़े में फैल जाता है। फेफड़े में रक्त की बहुत सी बाल से भी बारीक रगें हैं जो सारे फेफड़ों की छोटी छोटी कोठरियों में फैली पड़ी हैं। जब हम श्वांस लेते हैं, वायु भीतर जाती है और हवा में मौजूद आक्सीजन फेफड़ों की पतली रुधिर वाहनी नालियों की बारीक दीवारों में होकर गंदे रुधिर के सम्पर्क में आती है। रुधिर आक्सीजन को ले लेता है और रक्त से विष युक्त पदार्थ (कार्बोनिक एसिड गैस) को वायु में छोड़ देता है। वह वायु श्वांस द्वारा बाहर निकल जाती है। यह क्रिया शरीर में बराबर होती रहती है। प्राण-प्रद और विष युक्त वायु के बदलने के समय एक प्रकार की

रगड़ होती है। उससे अग्नि उत्पन्न होती है। जो हमारे शरीर को गरम रखती है और जठराग्नि उत्पन्न करती है, उसी से भूख लगती है। वास्तव में भूख लगने का आशय यह है कि शरीर में जो क्षति हुई है वह रक्त द्वारा पूरी की जाये, और श्वांस लेने का अभिप्राय यह है कि अशुद्ध रक्त के विष को बाहर निकाला जाये और शुद्ध ओषजन युक्त वायु भीतर जाये।

अब जो वायु हम श्वाँस द्वारा खींचते हैं उसकी बनावट और मात्रा को और समझ लीजिये बस फिर प्राणायाम की आवश्यकता और उसके लाभ आपकी समझ में आ जायेंगे।

वायु

जो वायु हम श्वाँस में लेते हैं उसमें तीन पदार्थ पाये जाते हैं।

(a) ओषजन – यह साधारण वायु में लगभग 1/5 भाग होता है और मनुष्य जीवन का यही आधार है। इसी से शरीर की गर्मी स्थिर रहती है। इसके भीतर एक प्रकार के तेज़ परमाणु होते हैं, जिन को ओज़ोन कहते हैं। यह पहाड़ की उंचाई तथा समुद्र की सतह पर अधिकता से पाई जाती है। इसी कारण स्वास्थ्य सुधार के निमित्त लोग ऐसे स्थानों पर जाते हैं। जिस वायु में ओषजन की मात्रा कम हो जाती है वह मनुष्य के लिये हानिकारक हो जाती है। जिस वायु में इसकी अत्यन्त कमी हो उसमें श्वांस लेने से मनुष्य मर जाता है। दीपक भी इसी के सहारे जलता है। यह इसकी तेज़ी का प्रमाण है।

(b) नत्रजन (नाइट्रोजन) यह वायु में लगभग 4/5 भाग होता है और यह आक्सीजन में मिलकर इसे लाभदायक बनाता है।

(c) कवर्बाज (कार्बोनिक एसिड गैस) यह उपरोक्त दोनों प्रकार की गैसों के मिलने से उत्पन्न होती है और बहुत कम मात्रा में वायु में पाई जाती है। जिस वायु में इस की मात्रा अधिक हो जाती है वह सब मनुष्यों के लिये

हानिकारक हो जाती है। यह हुए वायु के भाग; अब यह बताया जायगा कि किस मात्रा में वायु हमारे काम में आती है। अर्थात् हम अपनी श्वांस में कितनी वायु लेते हैं। वैज्ञानिकों ने अन्वेषण द्वारा निश्चय किया है कि साधारण रूप में एक युवा मनुष्य के फेफड़ों में 230 वर्ग इंच वायु रहती है। जिसमें से केवल 20 से लेकर 30 वर्ग इंच वायु साधारण श्वांस छोड़ने पर बाहर निकलती है और 200 वर्ग इंच जमा रहती है। पर यदि ज़ोर से गहरी श्वांस ली जाय, तो 130 वर्ग इंच तक वायु बाहर निकाल सकते हैं। जितनी अशुद्ध वायु बाहर निकलती है उतनी ही शुद्ध वायु तुरन्त श्वांस द्वारा भीतर जाती है। यह अनुभव डाक्टरों का है जो साधारण गहरी श्वांस का ज्ञान रखते हैं। सम्भव है, योगी जन 230 वर्ग इंच वायु एक ही श्वांस में बदल सकते हों।

प्राणायाम की भूमिका

(1) यह बात तो स्पष्ट है कि जितनी अधिक मात्रा में ओषजन (आक्सीजन) वायु के साथ शरीर में पहुंचेगा उतना ही अधिक रक्त शुद्ध होगा। जितना अधिक रक्त शुद्ध होगा उतना ही स्वास्थ्य बढ़ेगा और शरीर का वर्धन होगा जठराग्नि भी इसी से तीव्र होगी और यकृत में रस भी अधिक उत्पन्न होगा जिससे पाचन क्रिया भी तीव्र होगी अधिक आक्सीजन पहुँचाने का एक ही स्वाभाविक मार्ग है कि गहरी श्वांस ली जायें जो प्राणायाम का मुख्य अंग है।

(2) साधारण अवस्था में 30 वर्ग इंच और गहरी श्वांस में 130 वर्ग इंच वायु काम में आती है। इसका अभिप्राय यह है कि जितने समय तक हम गहरी श्वांस लेते हैं। चौगुना आक्सीजन पहुंचा कर रक्त को शुद्ध करते हैं। प्राणायाम में कुछ और भी गहरी श्वांस होती है, अतः इस से अधिक लाभ होना निश्चित है।

(3) साधारण श्वांस में क्योंकि 30 वर्ग इंच वायु आती - जाती है। अतः फेफड़े के बीच का थोड़ा सा भाग काम में आता है शेष भाग पुरानी ही वायु से भरा रहता है। अतः ऐसे लोगों में जब कभी क्षय अथवा किसी अन्य फेफड़े के रोग के कृमि प्रवेश करते हैं, तो फेफड़े के ऊपर के भाग में जहाँ पुरानी सड़ी वायु भरी होने के कारण उन्हें भोजन मिलता है, झट अपना स्थान बना लेते हैं। अधिक क्षय रोगियों में फेफड़े की चोटी ही पहले इस रोग में ग्रसित होना इसका अच्छा प्रमाण है। पर प्राणायाम करने वाले के उन स्थानों पर भी नित्य प्रति शुद्ध आक्सीजन युक्त वायु पहुँचती है। अतः कृमि प्रवेश भी करें तो नष्ट-भ्रष्ट हो जाते है। और प्राणायाम करने वाला क्षय इत्यादि रोगों से मुक्त रहता है।

(4) जो लोग कभी भी गहरी श्वांस पेट के सहारे न लेकर केवल फेफड़ों के सहारे ओछी श्वांस लेते हैं, उनको जब कभी कोई फेफड़े का रोग निमोनिया इत्यादि हो जाता है, तो उनकी श्वांस लेने की कठिनता से शीघ्र मृत्यु हो जाती है। पर जो लोग प्राणायाम द्वारा नित्य पेडू के सहारे श्वांस लेते रहते हैं, वह प्रथम तो ऐसे रोगों में फंसते ही नहीं क्योंकि उनके फेफड़े पुष्ट होते हैं। और यदि किसी बड़ी भूल से फंस भी जावें तो अपने उस रोज़ के स्वभाव को काम में लाकर फेफड़ों को आराम देते हुए श्वांस ले सकते हैं, जिससे रोग मुक्त होने में सहायता प्राप्त होगी। बालकों का जो स्वाभाविक रीति से पेट के सहारे श्वांस लेते हैं निमोनिया में 90 प्रतिशत और प्रौढ़ों का केवल 40 प्रतिशत अच्छा होना हमारे पक्ष का अच्छा पुष्ट प्रमाण है।

(5) साधारण श्वांस लेने से क्योंकि फेफड़ों का अधिक से अधिक भाग अशुद्ध वायु से भरा रहता है। अतः दुर्गन्धि का स्वभाव रहने से सूंघने की शक्ति निर्बल हो जाती है। ऐसा व्यक्ति दुर्गन्धित स्थान पर भी बैठा रह सकता है। जिस से स्वास्थ्य बिगड़ेगा। पर प्राणायाम करनेवाला वायु की थोड़ी भी

दुर्गन्धि को ताड़ जाता है और ऐसे स्थान को त्याग देता है अतः सर्वदा स्वच्छ वायु में श्वाँस लेकर अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ रहता है।

(6) रक्त की शुद्धि – और अधिक मात्रा में प्राण शक्ति प्राप्त करना इन दो बातों पर ही स्वास्थ्य और शक्ति आधारित है और यह दोनों ही प्राणायाम से प्राप्त होती हैं। अतः प्राणायाम करने वाला शक्तिशाली, स्वस्थ और दीर्घजीवी होता है।

वेद भगवान ने बताया है:–

कृणो मिते प्राणापानौ जरा मृत्यु दीर्घमायु: स्वस्ति

वैवस्ततेन प्राहितान मम दुतां शचरतोप सेधामि सवनि।

अथर्व. 8-2-11

अर्थ–हे पुरुष तेरे प्राण और अपान भीतर से बाहर और बाहर से भीतर चलने वाले श्वांस को उचित रूप से सुधार देता हूं और इस प्रकार बुढ़ापे और मौत दोनों को दूर कर देता हूं। इस प्रकार दीर्घ जीवन तेरे लिये कल्याणकारी सुखजनक और अविनाशी हो। इसी प्राण और अपान की उचित गति से विवस्वान सूर्य से उत्पन्न काल के भेजे निरन्तर गतिशील यम के देवरूप काल के खण्ड दिन, मास, ऋतु, वर्ष आदि सब का जीवन विनाश करने के काय से दूर करता हूं।

कितने स्पष्ट शब्दों में वेद ने प्राणायाम के प्रभाव का वर्णन किया है। प्रोफेसर राममूर्ति इत्यादि प्रसिद्ध शक्तिशाली अपनी शक्ति का कारण ब्रह्मचर्य, प्राणायाम और व्यायाम बताते थे। प्राणायाम पर इतना प्रकाश डालने के पश्चात अब हम व्यायाम के विषय में कुछ लिखते हैं। वैसे तो प्राणायाम भी एक प्रकार का व्यायाम है और अन्य व्यायाम भी बिना प्राणायाम के लाभप्रद नहीं हो सकते। इस प्रकार यह परस्पर सम्बन्धी हैं। पर शरीर को अधिक पुष्ट बनाने के लिये प्राणायाम के अतिरिक्त अन्य व्यायामों की भी आवश्यकता है।

व्यायाम

जिस प्रकार चाकू, छुरी, तलवार आदि यन्त्र को काम में न लाने से पड़े पड़े मोर्चा लग जाता है। इसी प्रकार व्यायाम न करने से शारीरिक अंग रोग ग्रस्त हो जाते हैं। अतः स्वास्थ्य के इच्छुक को अपनी शक्ति के अनुसार नित्य प्रति व्यायाम अवश्य करना चाहिए। इस से रक्त संचार ठीक होकर मांस और रग पट्ठे मज़बूत होकर शरीर में बल आता है। चित्त में उत्साह प्रफुल्लता और कार्य सम्पादन की शक्ति उत्पन्न होती है। मस्तिष्क, आंत, यकृत, तिल्ली इत्यादि सब अपना अपना काम ठीक ढंग पर अधिक वेग से करने लगते हैं। क्योंकि व्यायाम से श्वांस का वेग अधिक हो जाता है जिस से कार्बन युक्त अशुद्ध वायु अधिक मात्रा में बाहर निकलती है और उसका स्थान ओषजन युक्त शुद्ध वायु ग्रहण करती है। मल, मूत्र, पसीना इत्यादि भी उचित मात्रा में निकल जाते हैं। रक्त शुद्ध हो जाता है। अधिक ओषजन (आक्सीजन) पहुँचने से अग्नि तीव्र होकर भूख खूब लगती है। भोजन खूब पचता है। स्निग्ध और स्वादिष्ट पदार्थ भी भली प्रकार पच जाते हैं। नींद अच्छी आती है बुद्धि तीव्र हो जाती है। मनुष्य का रंग-रूप सुन्दर हो जाता है। यदि उचित मात्रा में व्यायाम न किया जावे तो रक्त संचालन के कम होने से मनुष्य शरीर के सब अंग निर्बल रहेंगे और भोजन भी ठीक तौर पर न पचेगा। घी, दूध, मक्खन, मलाई पौष्टिक पदार्थ यदि अधिक मात्रा में खाए गए तो जहां अनेकों रोग उत्पन्न होंगे वहां मेद बढ़ कर शरीर बेडौल मोटा हो जावेगा। अधिक मोटाई स्वास्थ्य का चिन्ह नहीं है किन्तु रोगी और कोदन (बुद्धि हीन) होने की निशानी है। ऐसे लोगों को प्राय: बवासीर का रोग हो जाता है। उत्साह और साहस भी कम हो जाता है। चलने में श्वांस फूलने लगता है। और थोड़े ही परिश्रम से घबड़ा जाते हैं। अतः स्वस्थ रहने तथा जीवन के दिन सुख पूर्वक बिताने के विचार से प्रत्येक नर नारी को अपनी शक्ति के अनुसार व्यायाम अवश्य करना चाहिये। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि–

क्या व्यायाम करना चाहिए?

इसका उत्तर यह है कि भ्रमण, आसन, दौड़ना, कबड्डी खेलना, कुश्ती लड़ना, दण्ड, बैठक इत्यादि देशी और टेनिस, फुटवाल, क्रिकेट, वालीबाल, हाकी इत्यादि विदेशी व्यायाम हैं। और जैसा कि भारतीय और पाश्चात्य सभ्यता की हर बात में सुगमता और कठिनता, व्यय और अधिक व्यय इत्यादि का अन्तर है, इसी प्रकार देशी और विदेशी व्यायाम का अन्तर है। देशी व्यायाम हर स्थान पर अकेले बिना किसी व्यय के हर समय किया जा सकता है पर विदेशी व्यायाम के लिये धन चाहिये और साथी चाहिए। इन सब बातों पर दृष्टिपात करने के पश्चात यह आपकी इच्छा पर है कि चाहे जो व्यायाम करें पर करें अवश्य। दण्ड, बैठक, हाकी, तेज दौड़ इत्यादि ऐसे व्यायाम हैं जो कुछ शक्ति आने पर ही करना चाहिए। पर भ्रमण और आसन इत्यादि हर व्यक्ति कर सकता है। भ्रमण तो कुछ क्षय रोगी भी कर सकते हैं। किसी रोग के पश्चात निर्बलता दूर करने के लिये विलायती टानिक पीने के स्थान में शुद्ध वायु में भ्रमण करने से अधिक और स्थायी शक्ति आती है। आसन का व्यायाम बहुत प्रकार का होता है और इस विषय पर कई पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। यहां पर हम कुछ ऐसे आसन जो हर मनुष्य के लिये उपयोगी हैं लिखते हैं:–

1. तन कर खड़े हो जाओ और दोनों भुजाओं को खूब ऊपर को उठा कर तानो, मानो तुम मकान की छत अथवा ऊपर की कोई चीज़ पकड़ने को हाथ उठा रहे हो। फिर हाथों को झुका कर कंधों पर ले आओ और तुरन्त ही फिर ऊपर उठाओ। इस प्रकार कम से कम 25 बार करो।

2. हाथों को फैला कर खूब ज़ोर से तानो और फिर मोड़ कर कंधों पर ले आओ। इस प्रकार भी 25 बार करो।

3. हाथों को नीचे डाल लो, एक हाथ को झटके के साथ मोड़ कर बगल तक लाओ। और फिर झटके के साथ ही नीचे डालो, दूसरी बार दूसरे हाथ से इसी प्रकार करो। इसी प्रकार २५-२५ बार दोनों हाथों से करो।

4. एक हाथ को ऊपर उठाओ और फिर झटके के साथ नीचे लाकर रान पर मारो साथ ही इस बात का ध्यान रक्खो कि हाथ को जहां तक हो सके नीचे को बिना झुके ले जाओ मानो नीचे की चीज़ को उठाना चाहते हो। दूसरी बार दूसरे हाथ से इसी प्रकार करो। यह भी 25 -25 बार करो।

5. दोनों हाथों को ऊपर उठा कर खूब तानो। फिर बहुत धीरे २ दोनों हाथों को पैर के अँगूठों तक लाओ और हो सके तो अँगूठों को पकड़ो। इस बात का पूरा ध्यान रक्खो कि केवल कमर झुके, पैर बिलकुल सीधे रहें और घुटनों में तनिक भी मोड़ न आने पावे। इस व्यायाम में अधिक शक्ति व्यय होती है अतः जितनी बार सुगमता से कर सकते हो करो।

नोट– इस बात का ध्यान रक्खो कि उपरोक्त व्यायाम करते समय श्वांस रुकी रहे। जब श्वांस न रुके तो व्यायाम छोड़ कर सीधे खड़े होकर 2-4 गहरी श्वांसें ले लो। फिर श्वांस रोक कर व्यायाम करो।

व्यायाम करने के अन्य आवश्यक नियम

व्यायाम ऐसे स्थान पर करना चाहिए जहां की वायु शुद्ध हो और शरीर को वायु स्पर्श कर सके। शौचालय इत्यादि के निकट या संक्रामक रोगी के निकट अशुद्ध वायु में व्यायाम कदापि नहीं करना चाहिए। अच्छा तो यह है कि व्यायाम किसी उद्यान अथवा खुले मैदान में किया जावे। कुछ लोगों को यह भ्रम होता है कि व्यायाम करते समय वायु लग जाने से रोग हो जाता है पर यह केवल भ्रम ही है, जिसके भीतर सत्य कुछ भी नहीं। सैकड़ों परीक्षण और अनुभव किये जा चुके हैं। हम स्वयं 50 वर्ष से खुले स्थान पर व्यायाम करके इस से कभी रोगी नहीं हुए।

(2) व्यायाम अपनी शक्ति से अधिक न करना चाहिये। निर्बलों को हल्का व्यायाम भ्रमण, आसन, प्राणायाम से आरम्भ करके दण्ड, मुगदर और बैठक पर आना चाहिये। पर शक्तिशाली मनुष्य प्रारम्भ से ही ऐसा कर सकते हैं। हां, प्रातःकाल भ्रमण अर्थात् वायु सेवन का व्यायाम ऐसा है जो सब को ही लाभप्रद है इसके लाभ कुछ पृथक ही हैं। भूख लगाने में तो यह अपना उदाहरण आप ही है। खुले मैदान में जो प्राणप्रद वायु मिलती है और चलने से जो जठराग्नि उत्तेजित होती है उस से अवश्य लाभ उठाना चाहिये।

(3) व्यायाम नियत समय पर नित्यप्रति आवश्यक कार्य समझ कर करना चाहिये। किसी दिन कर लिया किसी दिन नहीं किया इससे शरीर दुर्बल हो जाता है।

(4) शरीर का एक अंग मस्तिष्क भी है। जिस प्रकार शारीरिक व्यायाम से शरीर पुष्ट होता है, उसी प्रकार मस्तिष्क के व्यायाम से बुद्धि तीव्र होती है। यदि केवल शारीरिक व्यायाम किया जावेगा और मस्तिष्क का न किया जावेगा तो शरीर ही पुष्ट होगा, पर मनुष्य लठ्ठ पशु के समान रहेगा। इसी प्रकार जो केवल पढ़ते लिखते अधिक हैं और शारीरिक व्यायाम नहीं करते, वह निर्बल और रोगी रहते हैं। अतः दोनों प्रकार के व्यायाम प्रत्येक व्यक्ति को नित्यप्रति अवश्य करना चाहिये। जिस प्रकार पुरुषों को व्यायाम की आवश्यकता है, उसी प्रकार स्त्री और बालकों को भी स्त्रियों के लिये वायु सेवन, आसन, प्राणायाम, दौड़, रस्सा खींचना डम्बल हिलाना, चक्की तथा मूसल चलाना, घर की फुलवाड़ी में कार्य करना, घर के भीतर कुवें से पानी खींचना, इत्यादि व्यायाम हैं चक्की चलाने से ब्रह्मचर्य की रक्षा और हिस्टेरिया रोग का नाश होता है। तथा हाथ की चक्की का पिसा आटा खाने से गेहूँ की प्राणशक्ति नष्ट नहीं होती। चरखा चलाने से भी व्यायाम होता है। अमीरी तथा सभ्यता के नाते इन कामों से घृणा नहीं करना चाहिय। इस समय देश को अधिक उत्पादन की आवश्यकता है। यदि सब लोग थोड़ी

थोड़ी भूमि में फल तरकारी अपने हाथ से उपजाने का प्रोग्राम बनायें तो जहां देश के प्रति वह अपना कर्त्तव्य पालन करेंगे वहां स्वयं भी स्वास्थ्य लाभ करेंगे। बालकों को नियत समय पर खूब खेल कूद की आज्ञा दे देना चाहिये। पढ़ने वाले लड़के लड़कियों को कम से कम 1 घंटे रोज़ इस प्रकार खेलना चाहिये कि शरीर पर पसीना आ जाये। सरसों अथवा तिल्ली के तेल की मालिश कराने से भी व्यायाम का कुछ लाभ होता है। और मुठ्ठी चानी (शरीर दबवाना) भी नीचे दर्जे का व्यायाम है। जो रोगी, आलसी तथा मार्ग से थके हुए मनुष्य करा सकते हैं। एक बात याद रखना चाहिये कि "अति सर्वत्र वर्जयेत" के सिद्धान्त अनुसार शारीरिक और मस्तिष्क सम्बन्धी दोनों व्यायामों में कभी अति न करना चाहिये। अन्यथा हानि होगी।

परिश्रम अथवा पुरुषार्थ

इस पाठ में अब तक जो कुछ भी लिखा गया है वह सब पुरुषार्थ के अन्तर्गत ही आता है। अतः इस विषय में अब कुछ अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। केवल एक बात की ओर ध्यान दिलाना है। वह यह कि मनुष्य जन्म बड़ा दुर्लभ है और बड़े सौभाग्य से प्राप्त होता है। इसका एक एक क्षण बहुमूल्य है। जब तक मृत्यु का समय नहीं आता हम काम करने और आलस्य में पड़े रहने, दोनों बातों में स्वतन्त्र हैं। पर जब मृत्यु का समय आता है फिर हम एक मिनट में होने वाला काम भी करना चाहें तो नहीं कर सकते। अतः अपनी इस स्वतन्त्रता से पूर्ण लाभ उठाने के लिये जीवन का एक एक क्षण बहुमूल्य समझ व्यर्थ न खोना चाहिये। यह भी समझ लेना चाहिये कि मनुष्य जीवन का उद्देश तीन प्रकार के दुखों से निवृत्त होकर मोक्ष प्राप्ति है। जो बिना पूर्ण ज्ञान (ईश्वर जीव प्रकृति तीनों का ज्ञान) प्राप्त किये बिना और प्रभू भक्ति तथा लोक हित की भावना बनाये बिना पूरा नहीं हो सकता। हमारा शरीर उस स्थान तक पहुंचाने के लिये भगवान ने एक सवारी के रूप में साधन दिया है। अतः सवारी को ठीक से न रखेंगे तो हम मार्ग तय नहीं कर सकेंगे। इस विचार से शरीर का

पालन पोषण करना और उसे स्वस्थ रखना हमारा कर्तव्य है। पर दिन रात सवारी की चिंता में लगे रहना और उद्देश्य प्राप्ति के मार्ग पर एक कदम भी न चलना महामूर्खता है। करना यह चाहिय कि भगवान् ने हमारे पिछले कर्मों के अनुसार जिस स्थान पर हमें रख दिया है, उस कर्तव्य को निहायत ईमानदारी और सच्चाई के साथ पूरा करते हुए सर्वदा अपने उद्देश्य की ओर बढ़ते रहना चाहिए। भगवान की दी हुई इन्द्रियों का उचित भोग और मनोरंजन भी करें, पर कोई कार्य ऐसा न करें जो उद्येश्य प्राप्ति में बाधा डाले और शरीर रक्षा के उद्देश्य से उचित आराम और नींद के अतिरिक्त एक सेकेंड भी पुरुषार्थ विहीन न होंये। ज्ञान बृद्धि तथा परोपकार दो ऐसे कार्य हैं कि इनमें व्यस्त मनुष्य कभी खाली बैठ ही नहीं सकता।

उपदेश (4)

जल वायु

"प्राण ही जीवन है" यह तो आप जान ही चुके हैं। प्राण वायु और अग्नि के संयोग से बनता है। इसी लिये हम बिना अग्नि और वायु के जीवित नहीं रह सकते। पर यह न समझ लेना चाहिये कि किसी भी प्रकार की वायु हमारे लिये हित कर ही है। वस्तुत: बात यह है कि हमारा स्वास्थ्य तथा जीवन ओषजन युक्त अर्थात् प्राण प्रद वायु में ही स्थिर रह सकता है। यदि किसी प्राणी को ऐसे कमरे में बन्द कर दिया जावे जिस में ओषजन (आक्सीजन) न हो तो वह थोड़ी देर में ऐंठ कर मर जावेगा। बिना ओषजन के दीपक भी नहीं जल सकता। जलते दीपक पर कोई ऐसा पात्र ढक़ दें कि बाहर का ओषजन न पहुँच सके तो भीतर का ओषजन समाप्त होते ही तेल बत्ती के रहते हुये दीपक बुझ जावेगा। क्योंकि दीपक, लैम्प इत्यादि के जलने में ओषजन व्यय होता है। और हमें श्वाँस के लिये भी ओषजन चाहिये। अतः जिस कमरे में मनुष्य सोते हों और बाहर से अधिक ओषजन आने का प्रबन्ध न हो तो दीपक बुझाकर सोना चाहिये। वायु में ओषजन अन्य गैसों के साथ मिल कर हमारे लिये उपयोगी बनता है। शुद्ध वायु में प्राय: निम्नलिखित मात्रा में गैसें मिलती हैं:–

सौ भाग में

(1) नत्रजन (नाइट्रोजन) 79 भाग अथवा 4/5 भाग से कुछ कम।

(2) ओषजन (आक्सीजन) 20.96 भाग अथवा 1/5 भाग से कुछ अधिक।

(3) कार्वन (कार्बोनिक एसिड गैस) .05 भाग जब तक प्रत्येक गैस निश्चित भाग में वायु में रहती है तब तक वह स्वास्थ्य दायक और मनुष्यों के लिये उपयोगी होती है। पर जब इसका कोई भाग न्यून अथवा अधिक हो जाता है, तो वह स्वास्थ्य नाशक हो जाती है। हम सर्वदा शुद्ध और स्वास्थ्य प्रद वायु में श्वाँस ले सकें इसके लिये कुछ उपाय यहाँ लिखे जाते हैं।

(1) मकान ऐसा बनाना चाहिये कि जिसके प्रत्येक कमरे में वायु के आवागमन के लिये दोनों ओर खिड़कियाँ हों। रहने ही के कमरे में नहीं, किन्तु भंडार, भोजनालय, शौचालय, स्नानगृह इत्यादि सबके बनाने में इस नियम का पालन होना चाहिये। और रहने के कमरों के द्वार प्राय: खुले रखना चाहिये। यह प्रथा ठीक नहीं है कि तनिक सी भी ठंडी वायु चलने पर अथवा आँधी आने पर हम सब द्वार बंद कर दें। इस स्वभाव का यहाँ तक प्रभाव पड़ता है कि यात्रियों से ठसाठस भरी रेलगाड़ी की बोगी की भी सब खिड़कियाँ बंद कर ली जाती हैं और इतनी जन संख्या की श्वाँस के लिये शुद्ध वायु की आवश्यकता पर कुछ ध्यान नहीं दिया जाता। इसका स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

(2) बंद कमरे में कभी नहीं सोना चाहिये। कम से कम एक द्वार अवश्य खुला रहे। मुँह कपड़े से ढक कर नहीं सोना चाहिये। जब आप मुँह ढक कर सोते हैं, तो आपकी श्वाँस से जो दुर्गन्धित वायु निकलती है वह बाहर न जाकर आपकी रज़ाई के भीतर ही रहती है। और वही फिर श्वाँस लेने पर भीतर जाती है। जो अनेकों रोगों का कारण बनती है। यदि आप से कहा जावे कि वमन की हुई वस्तु, मल व पसीना फिर खा लें तो आप कहने वाले से झगड़ा करने को उद्यत हो जावेंगे और उसे पागल और महा भ्रष्ट इत्यादि की उपाधि देने लगेंगे। और घृणा से नाक मुँह सिकोड़ लेवेंगे। पर मुँह ढक कर सोने से वही कार्य आप अपने आप कर रहे हैं। क्योंकि जिस प्रकार मल मूत्र और वमन में शरीर का मल निकलता है। उसी प्रकार शरीर का मल श्वाँस द्वारा निकाला जाता है। उस मल को पुन: श्वाँस में लेना वमन व मल खाने की क्रिया के समान है। जो बड़े बड़े सभ्य मनुष्यों द्वारा की जाती है।

(3) प्रातःकाल प्रत्येक कमरे के सब द्वारों को बिलकुल खोल देना चाहिये। जिस से एक बार शुद्ध वायु कमरे के कोने 2 में प्रवेश कर जावे।

(4) यदि किसी कमरे में घुसने पर कुछ दुर्गन्धि प्रतीत हो तो समझ लो कि इस कमरे की वायु अशुद्ध है। वह कैसे शुद्ध की जावे यह आगे बताया जावेगा।

(5) पशुओं को बंद कोठरी में अथवा रहने के मकान में नहीं बाँधना चाहिये। किन्तु पशुशाला पृथक होना चाहिये। हाँ यदि इस बन्धन के कारण गऊ रखने अथवा शुद्ध दूध मिलने में बाधा पड़े तो गऊ को अपने पलंग से बाँध कर सोना भी अच्छा है क्योंकि जैसा कि आगे दूध के लाभों में बताया जावेगा। हमारे स्वास्थ्य के लिये गऊ के शुद्ध दूध न मिलने से जितनी हानि होती है उतनी गऊ को पलंग से बाँधने पर नहीं होती।

(6) एक कमरे में बहुत से मनुष्यों को एक साथ नहीं सोना चाहिये। क्योंकि प्रत्येक मनुष्य की श्वाँस से अशुद्ध वायु निकलती है जिसका बदल यदि, शुद्ध वायु से न हो, तो हानि होती है। वैज्ञानिकों ने परीक्षा करके यह सम्मति दी है कि २०X१५X१० फीट ऊँचे कमरे की वायु यदि घंटे में तीन बार बदल दी जावे तो उस कमरे में तीन मनुष्य सो सकते हैं। इस से अधिक नहीं।

(7) किसी बंद कमरे में कोयला कदापि नहीं सुलगाना चाहिये। इससे वायु अशुद्ध हो जाती है। और सोते समय दीपक इत्यादि बुझा देना चाहिये, किसी आवश्यकतावश जलाना पड़े तो द्वार खोल रखना चाहिये।

(8) घरों में खूब सफ़ाई रखनी चाहिये। पाकशाला, स्नानग्रह शौचालय और नालियों को खूब साफ़ करके धो देना चाहिये। फ़र्श और दीवारों पर थूकना नहीं चाहिये। अनेक रोगों के कीटाणु थूक में रहते हैं। जो उड़ कर दूसरों की श्वाँस द्वारा भीतर पहुँच कर उन को रोगी बना दिया करते हैं। रोगों के राजा तपेदिक़ के फैलाने में इस स्वभाव का बड़ा हाथ है।

(9) रोगियों के लिए थूकदान रखना चाहिए और थूक को पृथ्वी में गड्ढा खोद कर दबा देना चाहिए।

(10) कोई सड़ी गली वस्तु मकान के निकट न रखना चाहिए। फल व सब्जी के छिलके गाय व बकरी को खिलाने के उपयोग में लाकर देश में उत्पादन बढ़ाने के काम में सहायक होना चाहिए। थोड़े से आलस्य के कारण उन्हें कूड़े में सड़ा कर राष्ट्र का स्वास्थ्य नहीं बिगाड़ना चाहिए।

(11) मोची का कार्य, मशीने, जो इञ्जन से चलती हैं और वायु अशुद्ध करती हैं। चूना फूंकने के भट्ठे रंगरेज़ इत्यादि बस्ती से बाहर होना चाहिए। इसी प्रकार मोटर इत्यादि बहुत धूल वाली सवारियों का नगर के बाहर रखना चाहिए। इन से वायु अशुद्ध होती और अनेकों रोगों का कारण बनती है। अमरीका में हर घर में मोटर है इस का अनुकरण करना उचित नहीं है। किन्तु अमरीका में लोग हर समय काम में व्यस्त रहते हैं इस का अनुकरण करना चाहिए। आटम बम बनाने के स्थान में संसार को सुख और शान्ति देने के विचार से लोक हित का कार्य हो, वह अनुकरणीय हो सकता है।

(12) कार्बोनिक ऐसिड गैस प्राणियों के लिये हानिकारक है पर वृक्षों का भोजन है। वृक्ष इसे खा कर दिन के समय ओषजन निकालते हैं। अतः दिन में अधिक से अधिक समय वृक्षों के निकट बिताने से वायु शुद्ध मिलती है हर घर में कुछ वृक्ष लगाना वायु शुद्धिका अच्छा साधन है।

(13) ऐसे स्थानों पर जहाँ अधिक भीड़ हो और यज्ञ न होता हो देर तक नहीं ठहरना चाहिए।

(14) प्राकृतिक ढंग पर सूर्य के ताप, आँधी चलने, वर्षा और बिजली चमकने से वायु शुद्ध होती है और फूलों की सुगन्धि भी वायु को शुद्ध करती है। यह भगवान की ओर से वायु शुद्धि के लिये बराबर यज्ञ हुआ करता है। अतः धूप, आँधी इत्यादि को कमरों के भीतर प्रवेश का अवसर देना चाहिए।

वाटिका इत्यादि में दिखावे के अंग्रेजी फूलों के स्थान में गुलाब, बेला, चमेली, निवाड़ी, रजनी गंधा इत्यादि सुगन्धित फूल लगाना चाहिए इस के अतिरिक्त भगवान ने मनुष्यों को आदेश दिया है कि जब वह अधिक संख्या में एकत्रित होकर नगर बसा कर रहना चाहते हैं, तो प्रत्येक मनुष्य सुगन्धित पदार्थ जला कर प्रातः सायं हवन यज्ञ करे। जिस से वायु मडल शुद्ध हो जावे और रोग कीटाणु नष्ट हों। वायु शुद्धि की यह प्रथा इतनी वैज्ञानिक और प्राचीन है कि आदि सृष्टि से लेकर अब तक कोई समय ऐसा नहीं मिलता जब किसी न किसी रूप में हवन यज्ञ का प्रचार न रहा हो। पर यह कार्य एक प्रकार की परोपकार की भावना से होता है और आज की पाश्चात्य सभ्यता केवल स्वार्थ साधन पर ही अवलम्बित है। इस कारण जनता को इस की प्राचीनता तथा वैज्ञानिक लाभों का पता नहीं है। अतः यहाँ इन बातों पर कुछ प्रकाश डाला जाता है।

हवन यज्ञ की प्राचीनता

यह सब मानते हैं कि संसार के पुस्तकालय में सब से प्राचीन ग्रन्थ, वेद हैं और वेद में इसका विधान इतने विस्तार से मिलता है कि कदाचित ही किसी दूसरे विषय का इतना वर्णन हो। उसके पश्चात प्राचीन ग्रन्थ शास्त्र, ब्राह्मण, उपनिषद, गीता, रामायण, महाभारत इत्यादि कोई भी ऐसा ग्रन्थ नहीं है जिस में इसकी महिमा न गाई गई हो। आधुनिक ऐसे विद्वान जिन्होंने इस साहित्य का अवलोकन किया है। हमारे इस सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं जैसे जर्मन के प्रोफेसर मैक्समूलर साहब की पुस्तक "फिजिकल रिलिजन" के पाठ से विदित होता है कि यवन देश के तत्ववेत्ता "पूसकी" ने आग को वायु शोधक माना है। वायु शुद्धि के निमित्त आग जलाने की रीति गत शताब्दी तक स्काटलैंड में पाई जाती थी तथा आयरलैंड और दक्षिणी अमेरिका में महामारी के लिये अग्नि जलाने की प्रथा प्रचलित रह चुकी है। जापान और चीन में होम को धोम कहते हैं और मंदिरों में धूप जलाते हैं। जर्मनी में लवेंडर की बत्ती जलाई जाती है। ईरान के पारसी लोग

हवन को हिन्दुओं की भांति उत्तमता से करते हैं। पर काल की गति विचित्र है। समय आया कि ऐसे सार्वभौम सिद्धान्त को अधिक लोगों ने न केवल भुला दिया, किन्तु विज्ञान शिखर पर पहुँचने के अभिमानी पाश्चात्य जगत के भ्रम पूर्ण विज्ञानियों ने हवन यज्ञ को हानिकारक सिद्ध करना प्रारम्भ कर दिया और यह कहा कि आर्य लोग मूर्ख हैं जो अपना धन खर्च कर के हवन करते हैं तथा उस से कार्बन डाया आक्साइड (Co2) उत्पन्न कर के अपने तथा जातीय स्वास्थ्य को बिगाड़ते हैं। फिर क्या था हमारे देश के अर्ध शिक्षित कुछ बाबू लोगों ने भी जो हर चीज़ को पाश्चात्य ऐनक मे ही देखने का स्वभाव रखते हैं। यही राग अलापना आरम्भ कर दिया और हवन यज्ञ का उपहास किया जाने लगा। उधर प्राचीन संस्कृति पर कुछ श्रद्धा रखनेवालों ने भी हवन के वैज्ञानिक गुणों को भुलाकर उसे केवल पूजा पाठ की चीज़ समझ लिया। अतः विवाह आदि उत्सवों मैं हवन यज्ञ के स्थान में अग्निवारी, मृतक संस्कार में एक तोला घी से कपाल क्रिया और बड़े २ यज्ञों में केवल जौ, तिल इत्यादि नाम मात्र की सामग्री का थोड़ा सा हवन प्रचलित रह गया।

ऐसे समय में वेद के पूर्ण ज्ञाता, प्राचीन संस्कृति के अनन्य भक्त ऋषि दयानन्दजी महाराज की सिंह गर्जना हुई और उन्होंने फिर एक बार हवन यज्ञ के वैज्ञानिक लाभ बताते हुए उसको स्वास्थ्य वर्धक, रोग नाशक और वायु शोधक बताया अतः प्रत्येक मनुष्य के लिये भोजन तथा अन्य आवश्यक कार्यों की भाँति नित्य करने का विधान किया तथा ऐसा करने वाले को पापी बताया जिसका फल रोगी हो कर दुख भोगना है।

कुछ समय तक ऋषि के इस सिद्धान्त और पाश्चात्य विज्ञान की बड़ी मुठभेड़ रही। विदेशी सभ्यता में पले भारतीय ही उपरोक्त भ्रम पूर्ण विज्ञान को वेद वाक्य की भाँति प्रमाणिक मान कर हवन यज्ञ को हानिकारक कहते रहे। पर आर्यों को अपने ऋषियों की अपूर्व बुद्धि पर विश्वास था वह समझते थे कि इस पाश्चात्य विज्ञान के सिद्धान्त तो नित्य बदलते रहते हैं आज जो विज्ञान उस

को हानिकारक मान रहा है सम्भव है कभी इस के लाभों को समझ कर उपयोगी बताने लगे। हुआ भी ऐसा ही हवन का उपयोगिता प्रत्यक्ष देख कर पाश्चात्य विज्ञान के सिद्धान्त बदले। आज का विज्ञान बताता है कि जो काम हमारे शरीर को रोग ग्रस्त करने की शक्ति रखते हैं, उन्हें धुआँ नष्ट कर देता है। फ्रांस देश के प्रसिद्ध रसायनवेत्ता मिस्टर त्रिले ने विज्ञान द्वारा मालूम किया कि लकड़ी जलाने से फार्मिक आलडी हाइड नामी एक गैस निकलती है जिसका गुण सर्व प्रकार के कृमियों (जर्म्स) को मारना है। आज वह गैस जल में मिला कर बाज़ार में "फ़ार्मेलिन" के नाम से डाक्टरों की दूकान पर बेची जाती है और मकानों के शुद्ध करने के काम में लाई जाती है पर वह इस रूप में फिनाइल की भाँति दुर्गन्धित होती है। देखा आपने पाश्चात्य विज्ञान जिस चीज़ को कल हानिकारक मानता था आज उसे रोग निवारक समझा गया। और हवन के ऊपर किया वह आक्षेप जाता रहा, पर उसके अन्य गुण अभी गुप्त ही रहे। आगे चल कर "मि० त्रिले" ने ही परीक्षण के पश्चात मालूम किया कि शकर (चीनी) जलाने से फार्मिक आलडी हाइड गैस निकलती है, जो रोग नाशक है। हवन यज्ञ में गन्ने की शकर तो जलाई ही जाती है, पर अन्य वस्तुएँ घी, दूध, मुनक्का, छुआरा, चावल, किशमिश, मधु इत्यादि जो पदार्थ जलाए जाते हैं उन में भी रसायन शास्त्र की खोज अनुसार वही शकर उत्तम रूप से होती है जो कृमि नाशक है।

विज्ञान ने और उन्नति की और उपरोक्त वस्तुओं को पृथक २ जला कर विज्ञान-वेत्ताओं ने परीक्षण किए और फ्रांस के विज्ञान वेत्ता प्रोफेसर टिलवर्ट साहब ने बताया कि शकर जलाने से हैज़ा, तपेदिक (राजयक्ष्मा, T. B.) और चेचक इत्यादि का विष शीघ्र नष्ट हो जाता है। "डा० टाटलिट" साहब ने बताया कि मुनक्का किशमिश इत्यादि के जलाने से टाइफायड ज्वर के कीटाणु केवल आधे घंटे में और दूसरे रोगों के कीटाणु दो घंटे में समाप्त हो जाते हैं। तथा फ्रांस के ही डाक्टर "हैफ़किन" ने परीक्षण के पश्चात बताया कि घी जलाने से रोग कृमियों का नाश होता है। तो आज का विज्ञान हवन यज्ञ से वायु शुद्धि को सिद्धान्त रूप में

स्वीकार कर चुका है। वैसे वायु प्रत्यक्ष रूप में हवन यज्ञ से सुगन्धि का अनुभव होना इस बात का पुष्ट प्रमाण है कि वह वायु शुद्ध करता और चित्त प्रसन्न करता है। अब जो लोग अपनी हठधर्मी से इस सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त को न मान, रोगों के रोकने को तरह २ के इंजेक्शन लगाते व लगवाते हैं। इस में लगाने वालों के व्यवसाय की उन्नति और लगवाने वालों की अज्ञानता के अतिरिक्त कुछ नहीं है। भारतवासी भी अपने पूर्वजों के परीक्षित और सकल उपाय हवन, यज्ञ को काम में न लाकर विदेशी इंजेक्शन का उपयोग कर रहे हैं। अतः उस के फलस्वरूप गरीबी और रोगों की वृद्धि का कष्ट सह रहे हैं। और उस समय तक सहते रहेंगे जब तक अपनी प्राचीन संस्कृति के अनुसार सब कार्य न करेंगे। उसी संस्कृति के आधार पर हमारा देश प्राचीन काल के समान समस्त संसार का गुरू बन सकता है। विदेशी संस्कृति के आधार पर विदेशों का भिखारी और शिष्य ही रहेगा। अतः पाठकों से हम बल पूर्वक अनुरोध करते हैं कि यदि सर्वदा स्वस्थ रहना है और तपेदिक इत्यादि रोगों को देश से विदा करना है तो नित्यप्रति हवन, यज्ञ करके अपने गृह और शरीर को शुद्ध रक्खा करो। हवन, यज्ञ से अन्य आध्यात्मिक तथा आर्थिक लाभ हैं जो इस पाठ में नहीं लिखे जा सकते क्योंकि यहाँ तो केवल वायु शुद्ध का प्रकरण है। हवन, यज्ञ का बड़ा विस्तृत विज्ञान है। सैकड़ों रोगों की भिन्न औषधियों द्वारा चिकित्सा हो सकती है। ऋतु के अनुसार भी सामग्री भिन्न २ हो सकती है। पर आज देश को बड़ी कठिनाइयों का सामना है उसे विचारते हुये नित्य यज्ञ करनेवालों को एक बहुत ही छोटा सा नुस्खा यहाँ लिखा जाता है ।

गूगुल, लौंग, चन्दन सफेद, मुनक्का, गिलोय, शकर, घी और देशी कपूर वायु शुद्ध का यह सब से उत्तम साधन है।

उपदेश (5)

जल

मनुष्य जीवन के लिये वायु के पश्चात् सब से अधिक आवश्यक वस्तु जल है। क्योंकि भोजन के बिना मनुष्य महीनों जीवित रह सकता है पर जल के अभाव में जीवन शीघ्र ही समाप्त हो जावेगा। हमारे शरीर में लगभग तीन चौथाई भाग जल का है। यदि शरीर से जल के सब परमाणु पृथक कर दिए जावें तो वह छिन्न भिन्न हो जावे। जल शरीर में रह कर निम्नलिखित कार्य करता है:–

1. भोजन के पचाने में सहायता देना।
2. रक्त को पतला बनाए रखना।
3. शरीर के मलों को मल, मूत्र तथा पसीना द्वारा बाहर निकालना।

जिस प्रकार जीवन के लिये जल आवश्यक है उसी प्रकार स्वास्थ्य के लिये शुद्ध पवित्र जल की आवश्यकता है। गंदा और अशुद्ध जल का प्रयोग मनुष्य को रोगी बना दिया करता है। पीने ही से नहीं गंदे जल के स्नान से भी मनुष्य रोगी हो जाता है। प्राकृतिक अवस्था में जो जल हम प्रयोग करते हैं, वह ओषजन और नद्रजन से मिल कर बना है। और इस के शुद्ध होने की यह पहचान है कि वह साफ़ सुथरा, तथा रंग, गन्ध रहित हो। उस के ठहरने पर किसी प्रकार का मल उसकी तली में न बैठे। इस समय हमें निम्नलिखित साधनों से जल प्राप्त होता है ।

(१) कुआँ (२) ताल (३) नदी (४) तालाब (५) नहर (६) वर्षा और (७) नल इन के अतिरिक्त प्राचीन काल में जब हमारा आचरण वेद की संस्कृति पर था और हम विज्ञान की खोज के लिये अपने बालकों को सब से पहले संस्कृत पढ़ा कर वेद का अध्ययन कराते थे। हमारे पूर्वजों ने एक और साधन की खोज की हुई थी उसका उल्लेख इस स्थान पर इस विचार से करते हैं कि सम्भव है कि

पाठकों में से कोई नवयुवक फिर इसकी खोज करके भारत के प्राचीन गौरव को प्राप्त कराने का श्रेय प्राप्त कर सके। वह साधन चन्द्रकान्त पत्थर है। जिस प्रकार आज एक विशेष शीशे को सूर्य के सम्मुख करके अग्नि उत्पन्न की जा सकती है इसी प्रकार चन्द्रकान्त पत्थर के बने पात्र चन्द्रमा के प्रकाश में स्वयं जल से ओत प्रोत हो जाते थे। इस समय इस पत्थर का वर्णन निम्नलिखित प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है :–

(1) "नैषध" हर्ष के रचे हुए काव्य में एक वाटिका का उल्लेख है जिस में इसी चन्द्रकान्त के गमले बने हुए थे। उनमें लगे पौधों को सींचना नहीं पड़ता था, किन्तु चन्द्रमा की किरणों के पड़ने से स्वयंमेव जल उत्पन्न हो जाता था और वह पौधों के लिए अमृत का काम दिया करता था।

(2) सुश्रुत में भी जो वैद्यक का प्रसिद्ध प्राचीन ग्रन्थ है इसका उल्लेख मिलता है लिखा है–जब शरीर के भीतर अत्यन्त गर्मी हो, तो उसे शान्त करने के लिये चन्द्रकान्त से उत्पन्न जल के कुछ बिन्दु दिए जावें इस से वह गरमी शांत हो जाती है।

(3) अबुलफ़ज़ल ने अपने ग्रन्थ "आईन-ए-अकबरी" में लिखा है कि–इस देश के लोगों को एक शीशे का ज्ञान था जिसे चन्द्रमा के सम्मुख रखने से जल उत्पन्न हो जाया करता था।

(4) "रामायण" में रावण के महत्व का वर्णन करते हुए लिखा है कि इन्द्र उसके यहाँ पंखा झलता था और चन्द्रमा उसका पानी भरा करता था। कई पाश्चात्य लेखक और उनके अंध भक्त भारतीय अपनी अज्ञानता के कारण इसे गप्प कहते थे। पर भारतीय संस्कृति के भक्त सब संस्कृत के विद्वान जानते हैं कि इन्द्र का अर्थ विद्युत है अर्थात रावण के यहाँ बिजली के पंखे लगे थे। और चन्द्रमा के पानी भरने का यह अभिप्राय है कि चन्द्रकान्त पत्थर के घड़ों में चन्द्रमा की किरणों द्वारा पानी भरा जाता था। आज भारत सरकार जो हर बात में पाश्चात्य देशों की नकल कर के देश की आर्थिक दशा दिन

प्रतिदिन बिगाड़ रही है। अपने इन प्राचीन रत्नों की खोज करावे तो देश जहाँ धन धान्य पूर्ण हो सकता है वहाँ विदेशी गुरू के स्थान में फिर हमारे शिष्य बनने में अपना गौरव समझने लगेंगे। पर यह तब ही सम्भव है जब देश की शिक्षा का कार्य किसी ऐसे व्यक्ति के हाथ में हो जो प्राचीन संस्कृत का भक्त, प्राचीन साहित्य का विद्वान और देश के सच्चे उद्धारकर्ता जगत गुरू ऋषि दयानन्द तथा महात्मा गांधी का सच्चा अनुकरण करनेवालों के हाथ में हो जब तक शिक्षा का कार्य ऐसे लोगों के हाथ में है जो अंग्रेजी और उर्दू जैसी कृत्रिम और अधूरी भाषाओं को संस्कृत विद्या और हिन्दी जैसी प्राकृतिक भाषा से उत्तम समझते हैं। देश की कोई उन्नति नहीं हो सकती। और हमारे नेताओं की सब अभिलाषाएँ केवल भाषणों तक ही सीमित रहेंगी अस्तु। इस समय जल प्राप्ति के जो 7 साधन उपलब्ध हैं अब उन पर प्रकाश डालते हैं:–

कुएँ दो प्रकार के होते हैं कम गहरे और अधिक गहरे। कम गहरे कुएँ में जो पृथ्वी की चिकनी मिट्टी की तह तक ही खोदा जाता है पृथ्वी के आस पास का ही पानी रस रस कर एकत्रित होता है। अतः शुद्ध व अशुद्ध जैसे स्थान पर कुआँ खोदा जाता है, वैसा ही उस का जल होता है। ऐसे कुएँ के पास गंदे पानी का कोई गढ़ा व नाली होती है तो उस का पानी रस रस कर उसके भीतर पहुँचता है। वर्षा काल में ऐसे कुएँ का पानी बहुत ऊँचा चढ़ जाता है और बहुत गंदा तथा रोग उत्पादक हो जाता है।

दूसरे प्रकार के गहरे कुएँ पृथ्वी की चिकनी मिट्टी की दूसरी तह तक खोदे जाते हैं और इस के मीलों तक का पानी प्राय: गंदगी से रहित होता है। हाँ जिस स्थान में चाक या चूने के पत्थर होते हैं वहाँ के कुएँ का पानी देर में पचता है। पर जिस स्थान पर कड़े पत्थर या रेतीले भुरभुरे पत्थर हों वहाँ के कुएँ का पानी शुद्ध व निर्मल होता है। अतः कुएँ ऐसे स्थान पर नहीं खोदना चाहिये जहाँ की जमीन नीची अशुद्ध हो, जहाँ दलदल हो, खंडहर, शमशान कब्रिस्तान इत्यादि हो।

३० फीट से कम गहरे कुएँ के पानी के शुद्ध होने में शंका रहती है। और 100 फीट गहरे कुएँ का पानी बहुत उत्तम होता है।

गंदे बर्तन अथवा वृक्षों के पत्ते इत्यादि पड़ने से भी पानी अशुद्ध हो जाता है। मनुष्य के घुसने पर कुएँ का पानी निकाल देना चाहिये। कुएँ के आस पास भी सफ़ाई रखना आवश्यक है।

कुएँ का पानी शुद्ध करने के उपाय

1. कुएँ की मुढ़ेरी पृथ्वी से लगभग तीन फ़ीट ऊँची होनी चाहिये।
2. कुएँ के आस पास पाँच फ़ीट तक भूमि ढलवाँ होना चाहिये। और उस पर पक्का फर्श लगवा कर उस के चारों ओर एक पक्की नाली बनवाना चाहिए जिस से ऊपर का सारा पानी निकल जावे।
3. कुएँ के निकट कोई गढ़ा व गंदी नाली न होना चाहिए।
4. कुएँ को टीन अथवा लकड़ी से छवा देना चाहिए ताकि वृक्षों के पत्ते व उड़ते हुए पक्षियों की बीट इत्यादि न गिरे।
5. कुएँ से पानी निकालने के डोल व रस्सियाँ साफ़ होनी चाहिए।
6. पशुओं को पानी पिलाने के हौज कुछ दूरी पर बनवाना चाहिए।
7. वर्षा में कम से कम एक बार कुएँ की कीचड़ इत्यादि निकाल कर साफ़ करा देना चाहिए
8. कुएँ के पानी को साफ़ करने का छोटे कुएँ में 20 सेर और बड़े में अधिक पत्थर का चूना या 13 छटाँक से लेकर ३ छटाँक तक "परमेगनेट आफ़ पुटाश" डालना चाहिए और आठ घंटे तक पानी नहीं भरना चाहिए। किसी कुएँ में विशूचिका रोग का विष हो तो उपरोक्त औषधि डाल कर दस दिन तक पानी न भरना चाहिए। फिर कुएँ का पानी निकाल कर और कीचड़ साफ़ कर के पानी काम में लावें और कुएँ के पास नित्यप्रति हवन यज्ञ करें।

नदी का पानी–

नदी का जल अपने स्वाभाविक रूप में बहुत अच्छा होता है और कुएँ के पानी से भी उत्तम है हमारे देशमें भागीरथी श्री गंगा जी का जल तो संसार के समस्त जलों से श्रेष्ठ है और अमृत के समान गुण रखता है सैकड़ों रोगों की औषधि है। पेट के, पुराने ज्वर, मधु मेह, और वीर्य दोष के अनेकों रोगी जो किसी भी चिकित्सा से अच्छे नहीं हुए वह गंगा जल के सेवन से आरोग्य हो चुके हैं। विदेशियों ने भी अनेकों बार परीक्षण कर के गंगा जल को जलों में सर्व श्रेष्ठ माना है। एक बार हमारे देश के प्रमुख व्यक्ति श्रीसपरू साहब अँग्रेजी शिक्षा के कुप्रभाव के कारण रोगी अवस्था में अपने देश में चिकित्सा न कर के किसी झरने का पानी प्रयोग करने के विचार से विलायत गए थे तो वहाँ के डाक्टर ने कहा कि जब आप प्रयाग में रहते हैं जहाँ गंगा का बहुमूल्य जल प्राप्त है तो आप ने इस झरने के जल के लिये व्यर्थ ही कष्ट उठाया पुरानी बवासीर और यकृत दोष के एक निर्बल रोगी पर खाने की बहुत ही प्रसिद्ध औषधि प्रभाव न कर सकीं, तब उसे परामर्श दिया गया कि अपने ग्रह से गंगाजी जो 2 मील थीं जा कर स्नान किया करो गंगा जी की मिट्टी की पट्टी बाँधे तथा भोजन और जलपान सब कामों में गंगा जल का प्रयोग करें तथा गंगा जल से ही बस्ती करें। ऐसा करने से वह रोगी पूर्ण आरोग्य हो गया। पुराणों में जो गंगा स्नान से सब पाप दूर होकर मोक्ष प्राप्ति की बात लिखी है हमारी समझ में यह अलंकार रूप में है जिसका अभिप्राय यही है कि नियम पूर्वक गंगा स्नान से शरीर के सब रोग दूर हो कर और दुखों से मुक्ति हो कर स्वास्थ्य का स्वर्ग प्राप्त होता है। गंगा स्नान का महात्म पैदल चलकर जाने में ही है इसका अभिप्राय भी यही है कि भ्रमण का व्यायाम कर के स्नान करने से ही रोग निवृति होती है। वह भाग्यशाली है जिनको नित्य गंगा स्नान का शुभ अवसर प्राप्त है और वह अभागे हैं जो ऐसा अवसर प्राप्त होने पर भी उससे लाभ नहीं उठाते। गंगाजल तो सर्व श्रेष्ठ है अन्य नदियों का जल भी उत्तम होता है। पर जहाँ नदियों में गंदे नाले डाले जाते हैं (यह राक्षसी प्रथा है) धोबी कपड़े धोते हैं तथा नदी किनारे ही लोग मल मूत्र करते हैं, वहाँ का पानी बिना साफ़ किए पीना हानिकारक है। इसी कारण आर्य राज्य में ऐसा करने

वाला अपराधी समझा जाता था। पर अँग्रेजी राज्य में स्वयं सरकार ने गंदे नाले पवित्र गंगा तक में डलवाए हैं अब स्वदेशी शासन में यह प्रथा बन्द करना चाहिए तब नदियों का पानी पूर्ण पवित्र हो जायगा।

ताल का पानी–

ताल का पानी अन्य शुद्ध जल के अभाव में ही पीना चाहिए क्योंकि प्रथम तो वह कुएँ अथवा नदी के पानी की अपेक्षा पहले ही खराब होता है फिर इसी में लोग नहाते, कपड़ा धोते और पशुओं को भी नहलाते हैं। हाँ जहाँ केवल ताल का ही पानी हो, वहाँ प्रथम तो उपरोक्त दोषों से बचाने का प्रयत्न करना चाहिए। तथा चारों ओर बाडा व सीढ़ी बनाना चाहिए ताकि पशु न घुस सकें और फिर पानी को साफ करके जिसके उपाय आगे लिखेंगे पीना चाहिए।

वर्षा का जल–

यदि पृथ्वी की गन्दगी न मिश्रित होने पावे तो वर्षा का जल बहुत ही उत्तम है। पृथ्वी से ऊँचे स्थान पर लेने से साफ पानी मिल सकता है। ऊँची तिपाई पर बर्तन रख उसके ऊपर कपड़े की चादर तान कर ऐसा होना संभव है।

नल का पानी–

नल दो प्रकार के होते हैं एक हैंड पम्प और दूसरे वाटर वर्क्स के। स्वास्थ्य की दृष्टि से दोनों ही कुएँ अथवा शुद्ध नदी के पानी से अच्छे नहीं हैं। हैंड पम्प में मोरचा लगे और काई जमे नल में से वर्षों पानी आता रहता है और जब नल में तेल दिया जाता है तब उसका कुछ अंश पानी में भी आ जाता है इन बातों से पानी अशुद्ध हो जाता है इसी प्रकार वाटर वर्क्स के नल का पानी वैसा उत्तम नहीं होता जैसा कुएँ का। क्योंकि नल रोज़ साफ़ नहीं किया जा सकता। गरमी में गरम और सरदी में ठंडा पानी मिलता है। गरमी में उससे न प्यास बुझती है न स्नान से वह लाभ होता है जो कुएँ के प्राकृतिक जल से होता है। जो अन्तर धारोष्ण और गरम किए दूध में है वह ही अन्तर कुएँ और नल के जल में है। देश का स्वास्थ्य उन्नति शील हो इसके लिये आवश्यकता तो इस बात की है कि

राष्ट्रीय सरकार को यथा सम्भव फिर से कुओं के रिवाज को बढ़ा कर वाटर वर्क्स के नलों को बन्द करना चाहिए। पर जब तक शिक्षा में अँग्रेजी की प्रधानता रहेगी ऐसा होने की आशा नहीं है अतः जहाँ इन नलों का ही पानी मिलता है वहाँ के लोगों को नल के पानी को घड़ों में भर कर साफ़ करना चाहिए और घड़े हर मास बदल देने चाहिए। क्योंकि पानी की गंदगी को घड़े सोख लेते हैं। अब हम पानी को शुद्ध करने के कुछ उपाय बताते हैं: –

जल शुद्धि के साधन

1. अर्क खींचने के भवके से पानी का अर्क खींच लें। यह जल बहुत उत्तम होता है और रोगी को भी दिया जा सकता है।

2. पानी को आग पर उबाल लें और आधा या चौथाई जल जाने पर उतारें फिर खुले मुँह के बर्तन में ठंडा करके घड़े व सुराई में रख कर पीवें। जब किसी स्थान पर विशूचिका इत्यादि छूत का रोग फैला हो, उस स्थान पर रहने वालों को ऐसा जल रोग के संक्रमण से बचाता है। पेट को ठीक रखने के अन्य उपाय बस्ती इत्यादि के भी काम में लाना चाहिए।

3. गंदे पानी को दो घंटे तक एक स्थान पर बिना हिलाए रक्खा रहने दें फिर उस में पिसी फिटकरी (5 सेर जल में 2 रत्ती के हिसाब से) डाल कर उसी प्रकार 12 घंटे तक रक्खा रहने दें।

4. जो लोग हर काम मशीन द्वारा करके देश का धन विदेश भेजने में कोई हानि नहीं समझते उनके वास्ते एक यंत्र फ़िलटर आता है। उस से जल शुद्ध किया जा सकता है।

5. सोने, चाँदी, ताँबे और मिट्टी के बर्तन में पानी देर तक रखने से शुद्ध हो जाता है। पर उपरोक्त बरतन को खूब साफ रखना चाहिए।

यह बात खूब याद रखना चाहिये कि नं॰ 5 को छोड़ कर जल शुद्ध करने की उपरोक्त सब विधियाँ तब ही आवश्यक हैं जब जल अशुद्ध हो। अन्यथा: कुएँ अथवा नदी का ताज़ा पानी ही हितकर है बार बार लाने की असुविधा बचाने को

उसे घड़े व ताँबे इत्यादि के पात्र में ढक कर रख सकते हैं। अब हम पानी को ठंडा करने के कुछ उपाय बताते हैं:–

पानी को ठंडा करना

पानी ठंडा करने को लोग प्राय: बर्फ का प्रयोग करते हैं पर विशेष अवसरों के अतिरिक्त इसका प्रयोग हानिकारक है इस के प्रयोग से दाँत निर्बल हो जाते हैं और पाचन शक्ति बिगाड़ कर कभी कभी मंदाग्नि रोग हो जाता है। जिन स्थानों पर वाटर वर्क्स के नल का प्रबन्ध है वहाँ की जनता गरमी के दिनों में बर्फ के प्रयोग के लिए विवश हो जाती है और जो लोग बर्फ को हानिकारक समझते हैं वह भी थोड़ी देर को विवेक शून्य होकर आँख बन्द करके प्यास की तृप्ति के निमित्त उसे पी ही जाते हैं। पर इस से प्यास बुझती नहीं थोड़ी ही देर पश्चात फिर प्यास लगती है और बार २ बर्फ का पानी पीने से भूख मारी जाती है और पाचनशक्ति बिगड़ जाती है। नल के पानी को घड़े में ठंडा करके अथवा नीचे की विधियों से ठंडा करके पीना चाहिए और बर्फ का ही प्रयोग करना पड़े तो पानी को बर्फ में डालने के स्थान में बर्फ में रख कर पानी का गिलास ठंडा कर लें। अर्थात् पानी में बर्फ न पड़े और पानी ठंडा हो जावे।

अन्य उपाय

1. पात्र में पानी भर कर उसके ऊपर भीगे हुए कम्बल या फलालैन का टुकड़ा ऊपर लपेट कर पात्र को हवा में किसी ऊँचे स्थान पर टाँग दें। इस से पानी ठंडा भी हो जावेगा और हानि न करेगा।

2. कलमी शोरा, नौसादर और निमक समान भाग लेकर उसमें सब चीजों के बराबर अथवा कुछ अधिक जल डालें। फिर इसी में पीने के पानी का पात्र जल से भर कर और कम्बल अथवा फलालैन लपेट कर रख दें, पानी खूब ठंडा हो जायगा।

चेतावनी

यह सर्वदा याद रखना चाहिए कि जल इतना ही ठंडा पीना चाहिए जिस से पीते समय उसका स्वाद मिलता जावे और मुख में पहुँचने पर अधिक ठंड के कारण तुरन्त निगल जाने की इच्छा न हो। जल पीने के पश्चात आँतों की स्वाभाविक गरमी लौट आये।

इससे अधिक ठंडा प्राय: बर्फ के कारण पिया जाता है जो रोग का कारण हो जाता है।

जल और भोजन

भोजन-समय 2 - 4 घूंट से अधिक पानी पीने से भी पाचन शक्ति निर्बल हो जाती है। क्योंकि मुख के भीतर जो राल है वह भोजन को पचाती है और पानी पीने से वह पतली हो जाती है। जिस प्रकार तेजाब में पानी मिलाने से उसके जलाने की शक्ति जाती रहती है इसी प्रकार पानी पीने से राल की शक्ति मारी जाती है भोजन के 1.5 घंटा पश्चात प्यास भर कर अधिक से अधिक पानी पीना हितकर है। अन्य समय में भी जब प्यास लगे खूब पानी पीना चाहिए। कुछ लोग जल से डरते हैं यह उनकी बड़ी भूल है वेद का वचन है–

अप्सु १ न्तरमृत मप्सु मेषजम्।

अपामुत प्रशस्ति भिरश्वा भवथ वाजिनी गावो भवथ वाजिनी।

अ० क० १ स० ४ मं० ४

अर्थ–जल के बीच में रोग निवारक अमृत रस है और जल में भय जीतनेवाला ओषधि है। इत्यादि

और भी बताया है–

अप्सु में सोमो अब्रवी दन्त विश्वानि भेषजा।
अग्निं च विश्वश भुवम्।

अ० क० १ सू० ६ मं० २

अर्थ–बड़े ऐश्वर्य वाले परमेश्वर ने मुझे व्यापन शील जलों में सब औषधियों को और संसार के सुखदायक, अग्नि, (बिजली व पाचन शक्ति) को बताया है।

इसी मंत्र के आधार पर हमने संग्रहणी और मंदाग्नि जैसे कठिन रोगों को जल चिकित्सा द्वारा आरोग्य किया है। जिससे वेद वाक्य की सत्यता में कोई संशय नहीं रहा है। वेद में जल की इतनी प्रशंसा होते हुए और व्यवहार में उसकी उपयोगिता देखते हुए भी बहुत से अर्ध वैद्य तथा सनकी लोग कहा करते हैं कि पानी बहुत बुरी चीज़ है और यदि इसे बिल्कुल न पिया जावे तो कोई रोग न हो पर हमारी समझ में ऐसे लोग बड़े भ्रम में हैं प्रकृति उनके इस उपदेश की पुष्टी नहीं करती। आइये यहाँ इस पर कुछ विचार कर लें प्रथम हमें यह देखना चाहिए कि पानी हमारे शरीर में किस किस काम में आता है। यह हम बता चुके हैं कि हमारे शरीर का 3 भाग जल है। इस जल का कुछ भाग हमारे शरीर के संगठन में प्रयुक्त होता है। और लगातार उससे पृथक होता रहता है। अतः शरीर को स्वाभाविक दशा में रखने को आवश्यक है कि जितना पानी खर्चा हो उतना ही पानी फिर शरीर में पहुँच जाये।

हमारा शरीर त्वचा के अगणित छिद्रों द्वारा देह वाष्प और पसीने के रूप में लगातार जल छोड़ रहा है। पसीना उस शारीरिक द्रव मल को कहते हैं जो त्वचा के छिद्रों से इतनी शीघ्रता से जाता है कि बिन्दुओं के रूप में एकत्रित हो जाता है। देह वाष्प उस पानी को कहते हैं जो अज्ञात रूप में शरीर छिद्रों से निकला करती है। परीक्षण द्वारा सिद्ध हो चुका है कि त्वचा से वाष्प निकलना बन्द हो जावे तो मनुष्य तुरन्त मर जाये । पसीना और देह वाष्प के रसायनिक विश्लेषण से जाना गया है कि ये देह यंत्र के मल और रद्दी विष युक्त पदार्थों से भरे होते हैं। जो यदि शरीर में रहने पाते तो उसे रोगी बना देते अतः यह स्पष्ट है कि यदि शरीर में पानी कम पहुँचेगा तो वह रोगी हो जायगा।

शरीर में मरम्मत का कार्य सर्वदा हुआ करता है बेकार और रद्दी कोष (सेल) हटाए जाते हैं और उन के स्थान में नवीन सामग्री संग्रह उस रुधिर में से, जिसने भोजन में से नवीन सामग्री संग्रह की है, जुटाई जाती है। यह रद्दी अवश्य ही शरीर से बाहर निकल जाना चाहिए, नहीं तो यह भी विष बन जायगी, क्योंकि

यह रोग किटाणु का भोजन है। जिसे पाकर वह शरीर में डेरा डालते हैं और जिसे न पाकर वह स्वयं मर जाते या भाग जाते हैं। यह रद्दी पदार्थ भी पानी के ही सहारे शरीर से निकलते हैं अतः पानी न पहुँचने से यह शरीर ही में रह कर इसे रोगी बना देंगे।

एक युवक 24 घंटे में सेर सवासेर पानी पसीना और देह वाष्प के रूप में निकालता है। परन्तु जो मनुष्य बहुत शारीरिक परिश्रम का काम करते हैं वे और भी अधिक पसीना छोड़ते हैं। फेफड़ों की राह से भी बहुत सा पानी प्रश्वांस द्वारा बाहर फेका जाता है। गुर्दे भी इस रद्दी पदार्थ को निकालने का यत्न करते हैं, और मूत्र मार्ग से बहुत-सा मलयुक्त पानी निकालते हैं। यह भी 24 घंटे में सेर सवासेर के लग भग होता है। रुधिर संचार, आँतों का कार्य सब ही ठीक रूप में तब ही चालू रह सकते हैं जब पानी उनको प्राप्त हो। अतः मोटे तौर पर एक युवा पुरुष को कम से कम 2 से 2.5 सेर पानी 24 घंटे में अवश्य अपने शरीर में पहुँचाना चाहिए। तब ही वह निरोग रह सकता है। जिन लोगों ने अपना स्वभाव बिगाड़ कर कम पानी पीने का अभ्यास किया है, उनको प्यास का अनुभव भले ही न होता हो पर यह असम्भव है कि उनको बदहज़मी, बद्धकोष्ठ रुधिराभाव, निर्बल नाड़ी इत्यादि रोगों में से किसी की शिकायत प्राय: न रहती हो। जिसके लिए जब वह रोग के कारण को दूर न करके विदेशी विषैली औषधियों का प्रयोग करते हैं तो और भी भयानक और भिन्न भिन्न प्रकार के पेचीदा रोगों में फंस जाते हैं। उनके चिकित्सक जो अपनी योग्यता के बल पर नहीं किन्तु सरकारी डिग्रियों के बल पर जीवन बिताते हैं कभी प्रकृति के इस साधारण नियम पर विचार ही नहीं करते। किन्तु हर रोग में पहले कालिज में पढ़ी विषैली औषधियों का प्रयोग करते हैं फिर सुई और चाकू की सहायता लेते हैं जब किसी से काम बनता दृष्टिगोचर नहीं होता तो वायुपरिवर्तन का परामर्श देकर या होपलेस कहकर पीछा छुड़ाते हैं। डिग्री की धौंस में उनसे यह कोई नहीं पूछता कि जब आरम्भ में आपने केस होपलेस नहीं बताया और चिकित्सा करते रहे तो यह अवस्था आपकी ही विदेशी चिकित्सा से उत्पन्न हुई है। हम अपने उन चिकित्सक भ्राताओं से बहुत नम्र भाव से प्रार्थना करते हैं कि भाई साहब विदेशी शासन में बहुत समय

तक इस उल्टी चिकित्सा के द्वारा अपने देशवासियों का स्वास्थ्य खराब किया। अब राष्ट्र को उठाने का प्रश्न है अतः कुछ विचार से काम लो। प्रकृतिके नियमों की अवहेलना करके कब तक औषधियों द्वारा बिषको दबाओगे। सोचो और परीक्षण द्वारा अपने अनुभव से लाभ उठाओ।

जो मनुष्य पर्याप्त जल नहीं पीते उनकी देह में रुधिर के एकत्रित होने में भी कमी रहती है। वे बिना रुधिर के पीले और सूखे दृष्टि पड़ते हैं। और उनकी त्वचा सूखी और ज्वराक्राँत सी दिखाई देती है और उनके शरीर से देह वाष्प बहुत कम निकलती है। उनकी सूरत उन वृत्तों और फूलों के सदृश्य हो जाती है जो पूरा पानी न मिलने से जीवित तो रहते हैं पर कुम्हलाए हुए रहते हैं। नवीन खोज के आधार पर भी शारीरिक शास्त्र (फिस्यालोजी) बताती है कि स्वाभाविक शरीर के रेशों में इतना पानी रहता है कि यह बात स्वयं सिद्ध की भाँति कही जा सकती है कि "सब देहाणु पानी ही में रहते हैं" शोक है यह सब पढ़कर भी आजकल के चिकित्सक इस ओर लोगों का ध्यान दिलाना आवश्यक नहीं समझते और रोगी होने पर केवल विषैली औषधियाँ देते हैं। पानी इतना उपयोगी होते हुए भी नियम विरुद्ध उपयोग करने से मनुष्य को रोगी बना सकता है। अतः इस सम्बन्ध के नियम यहाँ लिखे जाते हैं:–

पानी कैसे और कब पीवें

1. जैसा कि पहले बता चुके हैं प्रातः जागते ही मुँह साफ़ कर के एक गिलास पानी पीकर कुछ समय पश्चात शौच जाने से बहुत लाभ होता है।
2. फिर दिन में जब जब भोजन करें उस के 1.5 घंटा पश्चात खूब जी भर कर पानी पीना चाहिए।
3. दिन में जब जब प्यास लगे पानी अवश्य पीना चाहिए।
4. रात्रि को सोते समय एक गिलास पानी अवश्य पीना चाहिए।
5. हिसाब लगाकर देख लें कि दिन भर में आप सब मिला कर 2.5 सेर पानी पी लेते हैं या नहीं। यदि नहीं तो उस का अर्थ यह है कि आप के

पुराने बुरे स्वभाव के कारण आपको प्यास अभी स्वाभाविक अवस्था पर नहीं आई है जिसे जगाने का आवश्यकता है।

पानी पीने का ढंग भी सीखने की आवश्यकता है। एक सोख में गिलास भर पानी हितकारी तो है पर उससे पानी का पूरा लाभ प्राप्त नहीं होता। हमारे शरीर में जो नाड़ी सूत्र हैं वह जल की प्राण शक्ति से शक्ति प्राप्त करते हैं। अतः यदि एक एक घूँट पानी इस प्रकार पिया जावेगा जैसे गरम दूध पिया जाता है तो प्राण शक्ति अधिक उभर कर नाड़ी संस्थान को अधिक बल देगी और पानी का स्वाद भी मिलेगा।

पीने के पदार्थ

वैसे तो प्यास के समय पानी ही सर्व श्रेष्ठ पदार्थ है पर धूप में चलकर आने पर अथवा किसी और परिश्रम व्याख्यान इत्यादि देने के पश्चात जब थकान और प्यास दोनों हों तो गरम अथवा धारोष्ण दूध तथा संतरा, अंगूर, अनार इत्यादि का रस भी पिया जा सकता है। और फिर कुछ समय पश्चात पानी पी सकते हैं। सोडा इत्यादि पीना हानिकारक है हाँ कभी कभी नींबू का शरबत पिया जा सकता है गरमी में खाली शरबत भी पी सकते हैं।

पानी से बाह्य पवित्रता

जिस प्रकार जीवन और स्वास्थ्य दोनों स्थिर रखने को पानी पीने की आवश्यकता है उसी प्रकार इन्हीं दोनों कार्यों के लिये शरीर को धोने अथवा स्नान के लिये भी पानी अनिवार्य है। कुछ लोग विशेषतया ऐसे व्यक्ति जो अप्राकृतिक भोजन करते हैं स्नान को ऐसा आवश्यक नहीं समझते पर वास्तव में स्नान का स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है। इसी कारण हमारे शास्त्रों में स्नान को बड़ी महत्ता दी है। गंगाजल तथा स्नान के लाभों का मिश्रण कर के स्नान के लिये अनेकों पर्व नियत किए गए हैं। जिसका अर्थ यही है कि जनता स्नान की उपयोगिता को समझती रहे। जैसा कि ऊपर बताया गया है हमारे शरीर से जो मल त्वचा मार्ग से निकलता है वह भीतर की बारीक नालियों द्वारा आकर त्वचा पर चिपट जाता

है भीतर से निकलने के लिये हमारी त्वचा पर प्रत्येक वर्ग इंच में 3000 छोटी नालियों के द्वार होते हैं। इन्हीं से लगातार एक द्रव पदार्थ बहता है जिसे पसीना और भाप कहते हैं। एक चिकना पदार्थ भी रसता है जो त्वचा को कोमल और चिकना बनाए रखता है। पर चिकनाई के कारण शरीर से निकला हुआ मल त्वचा पर इस प्रकार चिपक जाता है कि बिना शरीर को मल मल कर धोने के वह सब छिद्रों को बन्द कर देता है। छिद्र बन्द होने से भीतर से आनेवाली गन्दगी वहाँ ही रुक जाती है। और वहाँ सड़कर हमारे रक्त को दूषित कर कर देती है और हम रोगी हो जाते हैं मल निकलने का कार्य 24 घंटा होता है पर सोते समय कुछ अधिक होता है। हमारी प्राचीन सभ्यता विज्ञान में बहुत आगे बढ़ चुकी थी अतः हमारे पुरुषों ने ऐसा नियम बना दिया था कि रोगियों को छोड़कर प्रत्येक व्यक्ति को प्रातःकाल एक बार स्नान करना उसका धार्मिक कर्त्तव्य है। पाश्चात्य देशों में जो इस समय अपने को अधिक वैज्ञानिक समझते हैं स्नान का रिवाज तो है पर प्रायः सप्ताह में एक बार ही पूरा स्नान किया जाता है जो पर्याप्त नहीं है। हमें उनके इस बुरे रिवाज का अनुकरण न कर के अपने पुरुषों के बनाए नियम के अनुसार शौच इत्यादि से निवृत्त होकर प्रातःकाल ही खूब मल-मलकर स्नान कर लेना चाहिए। तब ही कुछ भोजन करना चाहिए।

स्नान करने के नियम

1. कुएं के ताजे पानी अथवा उससे कुछ ठंडे पानी से स्नान करना अधिक लाभदायक है। गरम पानी से उस दिन स्नान किया जा सकता है जब शरीर पर तेल की मालिश कराई हो। ठंडे पानी के स्नान से शरीर की अधिक गरमी दूर होती है। चित्त प्रसन्न होता है और दिल, मस्तिष्क, नाड़ी संस्थान तथा सारे शरीर को शक्ति प्राप्त होती है और सर्दी जुकाम इत्यादि रोग नहीं होने पाते। तथा जल विद्युत के प्रभाव से रक्त संचार तीव्र होकर सारे शरीर में जीवन आ जाता है। कभी २ शरीर पर शुद्ध मिट्टी, बेसन, तिल व सरसों का तेल तथा दूध मलने से और भी पुष्टी मिलती है तथा चेहरे का रंग निखरता है। निर्बल रोगी बालक व वृद्धों को बिना अभ्यास के कभी २

ठंडे पानी से कुछ हानि की सम्भावना हो सकती है पर यदि ग्रीष्म ऋतु से आरम्भ करके नित्य ठंडे पानी के स्नान का स्वभाव बना लिया जावे तब ऐसी आशंका न रहेगी। सिद्धान्त यह है कि ठंडे पानी के प्रभाव से पहले रक्त संचार कुछ धीमा होकर उसकी प्रतिक्रिया होने पर खूब तीव्र हो जाता है। शरीर पर पानी पड़ते ही कुछ ठंड लगती है फिर प्रतिक्रिया द्वारा गरमी आ जाती है और उतनी ठंड नहीं लगती, जितनी स्नान से पूर्व लग रही थी। आप ने अनुभव किया होगा कि जहाँ स्नान से पूर्व कपड़ा उतारना कठिन होता है वहाँ स्नान के पश्चात कपड़ा पहनने को मन नहीं करता। यह रक्त संचार तीव्र होने के कारण होता है। गरम पानी से पहले रक्त संचार तीव्र होता है पर प्रतिक्रिया होने पर कम हो जाता है इस से निर्बलता आती है और त्वचा पर भी ठंडे जल की विद्युत न पहुँचने के कारण कुछ निर्बलता आती है। अतः ठंडे पानी से ही अधिकतया स्नान करना चाहिए।

2. स्नान के लिये पानी वैसा ही शुद्ध होना चाहिए जैसा पीने के लिये क्योंकि गन्दे पानी से जहाँ त्वचा गन्दी होती है वहाँ रोम छिद्रों द्वारा पानी शरीर के भीतर भी पहुँचता है। इसी कारण गन्दे तालाब इत्यादि में कभी स्नान न करना चाहिए। वर्षा ऋतु में गंगा जैसी पवित्र नदी में स्नान करना मना है। इसी कारण हमारे पूर्वजों ने कार्त्तिकी पूर्णिमा और ज्येष्ठ का दशहरा दो पर्व रक्खे हैं। पहले से स्नान प्रारम्भ और दूसरे से नदी का स्नान बन्द होता है।

3. जिस प्रकार निर्बल लोगों को गरम पानी की आवश्यकता है उसी प्रकार दस्त, पेचिश और गठिया इत्यादि के रोगी को भी रोग की तीव्र अवस्था में गरम पानी का प्रयोग करना चाहिए हाँ प्राकृतिक चिकित्सक की सम्मति से ठंडे पानी का प्रयोग हो सकता है।

4. स्नान समय शरीर रगड़ने को एक पृथक अँगोछा और स्नान कर चुकने पर शरीर पोछने को प्रत्येक व्यक्ति का एक पृथक तौलिया हो तो बहुत अच्छा

है। पर निर्धनता की अवस्था में यह सब काम धोती से लिया जा सकता है हाँ धोती रीठा इत्यादि से खूब साफ कर लेना चाहिए।

5. प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व स्नान करना सर्व श्रेष्ठ है। सायंकाल संध्या से पूर्व किया जा सकता है। शरद ऋतु में एक बार और ग्रीष्म में तीन बार तक किया जा सकता है। भोजन के तुरन्त पूर्व व पश्चात स्नान न करना चाहिए। स्नान के १५ मिनट पश्चात भोजन किया जा सकता है पर भोजन के उपरान्त उसके पच जाने के पश्चात ही स्नान करना चाहिए। क्योंकि भोजन करने पर रक्त अधिक मात्रा में आमाशय की ओर जाता है और स्नान करने पर रक्त की गति सारे शरीर में तीव्र होती है। दोनों काम एक साथ होने पर दोनों में बाधा पड़ेगी।

6. य़ों तो हाथ व अँगोछे से खूब रगड़ २ कर पर्याप्त जल से स्नान कर लेना चाहिए, यह भी उपयोगी है पर विशेष शक्ति प्राप्त करने को स्नान की एक विशेष विधि लिखी जाती है :–

   पहले सारे शरीर को हाथ या सूखे कपड़े से खूब रगड़ो उसके पश्चात थोड़ा स्नान करके हाथ पर थोड़ा २ तिल्ली का तेल लेकर सारे शरीर पर मलो फिर खूब मल-मलकर स्नान कर डालो, स्नान के पश्चात खुरदरे तौलिया से शरीर को पोछ डालो और सूखे कपड़े के साथ शरीर रगड़ो। इस प्रकार के स्नान से विशेष शक्ति प्राप्त होती है।

जल का अन्य प्रयोग

नाली इत्यादि के धोने, शौचालय, मूत्रगृह, रसोईघर को धोने के लिये जल खूब काम में लाना चाहिए। प्रातःकाल और सायंकाल को व्यायाम के समय पानी भरने का कार्य भी व्यायाम समझ कर पर्याप्त मात्रा में पानी भर लेना चाहिए और फिर उसे जी भर कर काम में लाना चाहिए। ताकि हमारा घर पवित्र रहे।

पीने के विष

जहाँ भगवान ने हमें पीने के लिये जल जैसा अमृत प्रदान किया था वहाँ हमने अपनी बुद्धि से चाय और मदिरा जैसे विषों को भी पीने के पदार्थों में सम्मिलित कर लिया है। यह जितने हानिकारक हैं उतना ही अधिक इनका प्रचार है। प्रचार होने का सब से बड़ा कारण यह है कि जिन वैज्ञानिकों अर्थात् डाक्टरों को इन की हानियाँ बताकर जनता को इनके सेवन से रोकना चाहिये था दुर्भाग्य से आज वह स्वयं ही इन विषों का पान करते हैं। प्रथम तो विदेशी शिक्षा और फिर जनता उसी को बड़ा डाक्टर समझती है जो अधिक से अधिक अंग्रेजी ढंगों की नक़ल करें इस से इन चीजों का प्रचार खूब बढ़ रहा है। वास्तव में इनका प्रभाव स्वास्थ्य पर कैसा पड़ता है यह भोजन के पाठ में बतलाया जावेगा।

उपदेश (6)

हमारा भोजन

हमारे शरीर में ऐच्छिक व अनैच्छिक रात दिन कार्य हो रहा है। हम जागते हों या सोते हों, बोलते हों व चलते हों, श्वाँस लेते हों, विचार करते हों इन सब क्रियाओं से हमारे शरीर के कोष (cells) घिस-घिसकर टूटते हैं और उनके स्थान में रक्त द्वारा नवीन कोष उनकी पूर्ति करते हैं। न केवल पूर्ति ही करते हैं किन्तु वर्धन काल में टूटे कोषों की अपेक्षा रक्त हमारे शरीर में अधिक कोष पहुँचा कर हमें नव जात शिशु से ६ फीट का हट्टा कट्टा युवा पुरुष बना देता है। सम्पूर्ण शरीर बल, बुद्धि और जीवन के लिये द्रव्यों के इसी लगातार नूतनीकरण पर भरोसा करता है। यदि यह नूतनीकरण बन्द हो जावे तो उसका परिणाम शरीर की गलन और मृत्यु होगा। रद्दी और परित्यक्त पदार्थों के स्थान पर नवीन पदार्थों का स्थापित करना देह की अनिवार्य आवश्यकता है। जो रक्त द्वारा पूरी की जाती है। अतः हमारे शरीर को बनाए रखने के लिये ऐसे पदार्थों की माँग प्रकृति की ओर से होती है जो जीवन के लिये रक्त बना सके। स्वास्थ्य के लिये शुद्ध रक्त और शक्ति के लिये प्राण शक्ति से भरपूर रक्त बना सके। इन ही पदार्थों को भोजन कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि शरीर को पोषण प्राप्त करने के लिये भोजन की आवश्यकता है। यह सिद्धान्त इतना सरल और साफ़ है कि पाठकों में से कदाचित एक सज्जन भी ऐसे न होवेंगे जो इसका विरोध करें। पर हमारे पाठक जब अपने व्यवहार पर विचार करेंगे तो कदाचित ही कोई सज्जन ऐसे निकलें जो केवल वही भोजन करते हों जो सोलह आने इस सिद्धान्त के अनुकूल हो। यदि सौभाग्य से कोई ऐसे सज्जन निकल आवें तो वह यह भी बता सकेंगे कि वह कभी रोगी नहीं हुए। क्योंकि सौ में से ९५ रोग भोजन के बिगाड़ से होते हैं। हमें यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि हमारे स्वास्थ्य और रोग का मूल आधार रक्त है। यदि रक्त शुद्ध बना है, तब किसी भीतरी रोग से रोगी होना असम्भव है। साधारण सिर दर्द से लेकर फ़ालिज, तपेदिक, संग्रहणी इत्यादि

महा कठिन रोग में रक्त का विकारमय होना ही मुख्य कारण है। आज रोगों की चिकित्सा में कठिन से कठिन साधनों के प्रयोग होने पर भी अधिक संख्या में रोग और मृत्यु का कारण इसी सरल सिद्धान्त को न समझना अथवा इसकी अवहेलना करना है। रक्त जब विकार-युक्त हो जाता है तब प्रकृति उसे शुद्ध करने अथवा विकार रहित करने के लिये विकार निकालने को जुकाम, दस्त, ज्वर इत्यादि उत्पन्न करती है। जो हमारे हित के लिये हैं। पर हम घबड़ा कर झट डाक्टर की शरण लेते हैं। जहाँ प्रकृति को उसके काम में सहायता पहुँचाने के स्थान में विकारों को दबा दिया जाता है। जिसका परिणाम घातक रोग तपेदिक इत्यादि होता है। जो फिर डाक्टर साहब की विकार दबाने वाली औषधियों से क़ाबू में नहीं आता। यह केवल कहने की नहीं किन्तु सैकड़ों बार परीक्षा की हुई बात है कि बिगड़ा हुआ मियादी बुखार, दमा, बवासीर, प्रमेह, नामर्दी, तपेदिक इत्यादि जैसे कठिन रोग जब विकार दबाने वाली सैकड़ों विषैली औषधियों से नहीं दबे तब रक्त विकार दूर करने के लिये भोजन में परिवर्तन करने आदि प्राकृतिक साधनों से बड़ी सुगमता से दूर हो गए और फिर कभी नहीं हुए। भोजन के पाठ में यह सब केवल इस कारण लिखा गया है कि आप इसे साधारण विषय समझकर भोजन का अध्याय सरसरी तौर पर पढ़ कर न छोड़ जावें किन्तु यह समझ लें कि आपको रोगी से स्वस्थ्य, निर्बल से बलवान, मूर्ख से बुद्धिमान, निर्धन से धनवान, साधारण व्यक्ति से नेता, बंध पुरुष से जीवन मुक्त बनाने में सबसे पहला साधन वह भोजन है जो आपका पोषण करे और विकार रहित रक्त, उतनी मात्रा में बनावे जिसकी आपको आवश्यकता है। इस सिद्धान्त का ठीक २ पालन हो सके इस के लिये हमें प्रकृति की माँग भूख और सभ्यता की माँग भोजनातुरता का भेद पहले ठीक २ समझना होगा।

भूख और भोजनातुरता

भूख भोजन की स्वाभाविक माँग है। भोजनातुरता अस्वाभाविक लोलुपता है भूख एक नव जात शिशु के गालों पर गुलाबी रंग की लालिमा की भाँति है और

भोजनातुरता विलासिता-प्रिय स्त्री के चेहरे पर लाल रंग के लगाये पाउडर के समान है। वह भूल में हैं जो इसे एक समझते हैं। जिन लोगों ने अप्राकृतिक जीवन बिता कर अपनी स्वाभाविक भूख को सुप्त कर लिया है और भोजनातुरता के सहारे ही खाकर जीवन निर्वाह कर रहे हैं उनको इसका अन्तर समझना बहुत कठिन है। हाँ जब कभी वह प्राचीन प्रथा के अनुसार बैलगाड़ियों पर गंगा स्नान इत्यादि को जाते हैं और खुली वायु में रहने, गंगाजल पान करने तथा प्रकृति का आनन्द लेने के कारण उनकी प्राकृतिक भूख जाग उठती है, तब वह उसका अनुभव कर सादा से सादा भोजन में जो आनन्द अनुभव करते हैं उससे स्वाभाविक भूख और भोजनातुरता का अन्तर ठीक २ समझ जाते हैं। समझदार मनुष्य जीने के लिये खाता है और मूर्ख खाने के लिये जीता है। बुद्धिमान इस सिद्धान्त को खूब समझता है कि केवल खाया हुआ पदार्थ बल और पुष्टी नहीं दे सकता किन्तु खाकर पचाया हुआ पदार्थ ही शक्ति देता है। हमारे शरीर में जो शक्ति है वह प्रत्येक काम करने में कुछ न कुछ व्यय होती है उनमें से एक काम भोजन का पचाना भी है अतः यदि हम ऐसा भोजन करते हैं जो पच कर हमें शक्ति प्रदान करे तब तो उसके पचाने में व्यय की हुई शक्ति लाभ का सौदा है क्योंकि व्यय की हुई शक्ति की अपेक्षा कई गुणा अधिक शक्ति प्राप्त हो जाती है और यदि ऐसा भोजन किया, जो ठीक रीति पर न पचकर रोगों का कारण बना जिस से निर्बलता बढ़ी तो वही कहावत चरितार्थ हुई कि चौबे जी गए छब्बे बनने को और रह गए दुबे ही। इस से भोजन सच्ची भूख में वही करना चाहिए जो हमें शक्ति प्रदान करे न कि स्वाद के लिये हानिकारक वस्तु।

2. इस विचार से भी सोचना चाहिए कि हमारे पास जो धन है वह अपनी आवश्यकता की पूर्ति के पश्चात हम अपनी रुचि के अनुसार अन्य कार्यों में व्यय कर सकते हैं। बुद्धिमान लोग उसे परोपकार में और स्वार्थी धन-संग्रह में। तो जितना धन हम ऐसे भोजन में व्यय करते हैं जो हमें शक्ति प्रदान नहीं करता उतनी ही अपने उद्देश्य पूर्ति में हानि उठाते हैं।

3. इस समय देश के सामने खाद्य की कमी की समस्या है अतः प्रत्येक नागरिक का धार्मिक कर्त्तव्य है कि वह उतना ही खाद्य पदार्थ उपयोग में लावे, जितने की उसे वास्तव में आवश्यकता है। शेष अन्य देशवासियों के लिये छोड़ दे अतः जो व्यक्ति इस सिद्धान्त के विरुद्ध भोजनातुरता के वशीभूत होकर आवश्यकता से अधिक पेट में भर लेता है वह जहाँ अपने लिये रोग को निमंत्रण देता है वहाँ अक्षम्य राष्ट्रीय पाप भी करता है।

4. अनुभव से यह बात पूर्णतया सिद्ध हो चुकी है कि दीर्घ जीवन और बुद्धिमानी का अल्प और सादे भोजन से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है संसार में जितने दीर्घजीवी तथा बुद्धिमान हुए हैं सब ही अल्पाहारी थे। पेटू लोग शीघ्र मर जाते हैं। तो यह कहाँ की बुद्धिमत्ता है कि जिस जीवन रक्षा के लिये हम भोजन करते हैं, भोजनातुरता के वशीभूत होकर हम उसी की जड़ पर कुल्हाड़ा चलावें। निष्कर्ष यह निकलता है कि प्रथम तो हमें भूख और भोजनातुरता का अन्तर समझना चाहिए। उसके पश्चात स्वाभाविक भूख में अपने अनुकूल भोजन समय पर करना चाहिए। व्यर्थ के उपवास भी हानिकारक हैं। स्वाभाविक भूख क्या है इसे फिर समझ लें क्योंकि आज संसार में रोगों की भरमार बहुत अंश में इसके न समझने के कारण होती है।

स्वाभाविक भूख

स्वाभाविक प्यास की भाँति–मुँह और गले की नाड़ियों के द्वारा अपने को प्रकट करती है। जब मनुष्य भूखा होता है, तब भोजन का ख्याल व नाम उसके मुँह, गले और लार उत्पन्न करने वाले अवयवों में एक विशेष सम्बेदना उत्पन्न करता है। लार बह आती है और वहाँ के सारे अवयव कार्य में लगने की उत्सुकता प्रकट करने लगते हैं। मनुष्य को मालूम होता है कि अच्छे पुष्टिकारक भोजन का स्वाद उसे सुखदायक होगा। थकावट, खालीपन, झींझाता भोजनाभाव आदि की वेदना आमाशय में नहीं होती। ये लक्षण तो भोजनातुरता की आदत के लक्षण हैं। जो

हठ कर रहे हैं कि आदत जारी रक्खी जावे। क्या आपने कभी ख्याल किया है कि मदिरा और अफ़ीम की आदत भी ऐसे ही लक्षणों को प्रकट करती है। प्रबल चाहना और अभाव के लक्षण भोजनातुरता और पानातुरता दोनों अस्वाभाविक बातों में प्रकट होते हैं। जो मनुष्य बीड़ी, सिगरेट अथवा तम्बाकू खाता-पीता है, उसको इसी प्रकार की वेदनायें होनी हैं। स्वाभाविक भूख की सब से बड़ी पहचान यह है कि उसमें चटपटे और अप्राकृतिक पदार्थों की ओर ध्यान नहीं जाता किन्तु सब्जी रोटी, दाल रोटी, दूध चावल तो बड़ी वस्तु है रूखी रोटी के टुकड़े में भी ऐसा स्वाद मिलता है जैसा भोजनातुरता के प्रेमी को बहु मूल्य पदार्थों में भी नहीं मिलता। युवा-अवस्था में इस स्वाद और भोजनातुरता में एक बड़ा अन्तर यह है कि प्राकृतिक पदार्थों के स्वाद से शरीर में भोजन का सार जो वीर्य बनता है उस की प्रवृत्ति शरीर में टिकने और सुरक्षित रह कर शरीर को पुष्ट बनाने की होती है। पूज्य भीष्म पितामह तथा ऋषि दयानन्द जी महाराज ऐसे ही भोजनों को कर के आयु पर्यन्त ब्रह्मचारी रह सके थे। पर भोजनातुरता की माँग पर जो कृत्रिम स्वाद की चाह में माँस अंडा और तेज़ मसालों, चाट और तीखे पदार्थों को अनेक भाँति का बनाया जाता है, उनसे जो वीर्य बनता है उसकी प्रवृत्ति शीघ्र ही शरीर से निकल जाने की होती है। अतः ऐसा भोजन करनेवाला अधिक विषय भोग में फँसकर अपने शरीर का और भी नाश कर लेता है और फिर स्वाभाविक भूख तथा स्वाद उससे और भी दूर होता जाता है। अतः यह शब्द खूब याद रक्खो।

॥ स्वाभाविक भूख में अनुकूल भोजन ॥

अब हमें भोजन विषय में उसके कुछ और अंगों पर विचार करना है। यदि इस विषय में हम कुछ अधिक विस्तार में जावें तो पाठकों का इसमें हित ही है क्योंकि भोजन जीवन, विचार और स्वास्थ्य का आधार है।

भोजन का प्रश्न आते ही भक्ष्य अभक्ष्य का प्रश्न उठता है। इस सम्बन्ध में भगवान ने हमें बुद्धि और ज्ञान-इन्द्रियाँ तथा वेद का ज्ञान प्रदान किया है जिससे हम अपने सम्बन्ध में प्रत्येक बात बुद्धि पूर्वक निर्णय कर सकें। भक्ष्य अभक्ष्य

के सम्बन्ध में यदि हम अधिक गम्भीरता में न भी जावें, केवल शुद्ध स्वाभाविक माँग पर छोड़ दें, तो हमारे भोजन के पदार्थ अन्न, सब्जी, सुन्दर फल, दूध और उससे बने पदार्थ ही भोजन की सूची में आते हैं। पर आज हमने अज्ञानता वश भोजन में कुछ ऐसे पदार्थ सम्मिलित कर लिये हैं जो हमारे स्वास्थ्य को बुरी तरह बिगाड़ रहे हैं। जैसे–

* तम्बाकू *

कुछ लोगों ने प्रकृति की अवहेलना कर तम्बाकू को भोजन में सम्मिलित कर लिया है जिसे कोई पशु भी नहीं खाता। तम्बाकू का प्रचार नगर में ही नहीं किन्तु ग्रामों में भी बढ़ गया है कि छोटे २ बालक भी प्रयोग करके अपने स्वास्थ्य और देश की आर्थिक हानि करते हैं और समझाने पर परम्परा का झूठा बहाना करके टाल देते हैं। अतः इस विषय पर कुछ प्रकाश डाला जाता है पहले इसका इतिहास लिखा जाता है।

कहते हैं अमेरिका के नङ्गले लोग इसका अपनी मूर्खतावश प्रयोग करते थे। कदाचित पन्द्रहवीं शताब्दी में इंग्लैंड में सर वाल्टर रेले ने पहले पहल पाइप से तम्बाकू पिया, जब उनके सेवक ने मुँह से धुआँ निकलते देखा तो यह समझ कर कि इनके आग लग गई है, पानी की एक बालटी उनके ऊपर डाल दी, पर धीरे २ उसका चस्का बढ़ता गया। हमारी पवित्र आर्य भूमि में जिस प्रकार अन्य अवगुण विदेशी लाए हैं उसी प्रकार १७वीं शताब्दी में पुर्तगाली लोग बादशाह अकबर के समय इस अवगुण को यहाँ लाए जिस का पहले बहुत विरोध किया गया। राजा जहाँगीर ने भी राजाज्ञा निकाली कि–जो कोई तम्बाकू पीवे उसका मुँह काला करके गधे पर चढ़ाकर नगर में घुमाया जावे। अँग्रेजों को अपने व्योपार से काम था अतः इसकी न केवल खुली छुट्टी दे दी गई किन्तु करोड़ों रुपये के सिगरेट अपने देश से मँगाकर और मुफ्त बाँट-बाँटकर इसका खूब प्रचार कराया। जिसका परिणाम यह है कि आज देश की बहु संख्यक जनता किसी न किसी रूप में इसका प्रयोग करती है। और चूँकि हमारे बहुत से नेता भी इस रोग के रोगी हैं अतः इसकी अब

खुली छुट्टी है। पर इन लोगों को कदाचित ज्ञात नहीं है कि डाक्टरी पुस्तकों में धतूरा विलाडोना इत्यादि विषों की सूची में तम्बाकू भी एक विष माना गया है और इसका प्रभाव इस प्रकार वर्णन किया गया है कि–इसका प्रयोग हृदय और मस्तिष्क के लिये अत्यंत हानिकारक है। शिर चकराता है दिल घबराता है चेतनाशक्ति मारी जाती है। साधारण तौर पर तम्बाकू का अर्क निकालने से इससे एक विष निकलता है जिसे नेकोटीन कहते हैं और एक तेल निकलता है जिसे निकोटेनीन कहते हैं। इनमें से प्रत्येक विष की एक बूँद से कुत्ता मर जाता है और दो बूँद से तो बड़ा से बड़ा कुत्ता तुरन्त मर जाता है।

मिस्टर बेरू एक अफ्रीकी यात्री ने लिखा है कि अफ्रीका के लोग हुक्के की नली के विष से साँप को मार देते हैं। जिन पाश्चात वैज्ञानिकों को हम परम प्रमाण मानते हैं उनकी खोज से भी यह महा हानिकारक सिद्ध होती है जैसे अमेरिका के डाक्टर रंश साहब व डाक्टर वोडवर्ड तथा प्रोफेसर पांड साहब और इंग-लैण्ड के डाक्टर निकल्सन साहब व रिचर्ड साहब तम्बाकू के प्रयोग को हानिकारक बताते हुए लिखते हैं कि इसके प्रयोग करनेवाले को चक्कर, स्मरण शक्ति का कम होना, उन्माद, फ़ालिज, निद्रानाश पागलपन, दृष्टि हीनता अथवा दृष्टिनाश, खाँसी, तपेदिक, हृदय को निर्बलता तथा धड़कन, प्रमेह और पुरुषत्व हीनता आदि २ रोग हो जाते हैं और इन रोगों का प्रभाव उनकी सन्तान तक पर पड़ता है। यह विष धीरे २ अपना प्रभाव करता रहता है। तम्बाकू पीनेवालों के किसी न किसी अंग पर विशेष प्रभाव होकर वह अंग रोगयुक्त हो जाता है। देश में मोतियाबिन्द और क्षय रोग की अधिकता के कारणों में एक बड़ा कारण तम्बाकू का प्रयोग भी है। तम्बाकू खानेवालों का आमाशय खराब हो पाचन शक्ति मारी जाती है और मंदाग्नि का रोग हो जाता है। बहुत से पुरुष अपनी पुरुषत्व शक्ति की निर्बलता के कारण बड़ी २ बहुमूल्य औषधियों का सेवन करते हैं पर तम्बाकू के प्रयोग के कारण उन पर उन औषधियों का कोई प्रभाव नहीं होता। डाक्टरी में तम्बाकू से उत्पन्न हुई दृष्टिहीनता को टोबेको एमेली ओपिया कहते हैं। जिसका

अर्थ यह है कि इस से दृष्टि हीनता का होना सर्वमान्य सिद्धान्त है। आँख शरीर में कितनी बहु मूल्य वस्तु है जिस वस्तु से उसको हानि पहुँचे उसे प्रयोग करना कौन समझदार पसन्द करेगा। हमें अपनी प्रैक्टिस में तपेदिक, कैंसर, पुरानी खाँसी और दमा के अनेक ऐसे रोगी देखने को मिले जिन के रोगों होने का कारण केवल तम्बाकू सेवन था।

कुछ वैज्ञानिकों की सम्मति इसके विषय में ऊपर लिख चुके हैं पर इसका प्रयोग करने वाले कह सकते हैं कि यह कुछ वैज्ञानिकों की व्यक्तिगत सम्मति है। पर ऐसा नहीं, उनकी इस सम्मति का आधार वैज्ञानिक खोज है। यहाँ हम तम्बाकू के विषय में वैज्ञानिक खोज का विवरण देते हैं। इसमें निम्नलिखित विष पाए जाते हैं–

(1) मुसिक एसिड–यह बड़ा भयंकर विष है जो चक्कर लाता है, सिर दर्द और मतली उत्पन्न करता है और सब से अधिक घातक है।

(2) निकोटींन–ज्यूं ज्यूं तम्बाकू पुरानी होती जाती है इस का प्रभाव रुधिर की नालियों पर और वृक्क पर पड़ता है जो "हाइड्रो सैनिक एसिड" की भाँति अचानक शीघ्र ही जीवन को नष्ट कर देता है। डा० कलांग के मतानुसार एक पौंड अर्थात् आधा सेर तम्बाकू में ३८० ग्रेन यह विष होता है। इस विष की ६/१० ग्रेन मात्रा एक कुत्ते को ३ मिनट में मार सकती है।

(3) तम्बाकू के पत्ते औटाने से जो तेल निकलता है उसकी एक बूंद से बिल्ली मर सकती है।

(4) कालिंडिन–तम्बाकू में गंध करनेवाला मुख्य पदार्थ है यह इतना तीव्र विष होता है कि ३/१० ग्रेन से मेंढक मर जाता है।

(5) कारबन मानव साइड–यह वैसी ही गैस है जैसा कि अधजले कोयले या ईंधन से उत्पन्न होती है। यह रुधिर के लाल गालकों में प्रवेश करके रक्त को दूषित कर देती है, जिसका बुरा प्रभाव फेफड़ों पर पड़ता है। इसका प्रथम

प्रभाव यह होता है कि श्वांस शीघ्र २ चलने लगती है। हृदय की धड़कन तीव्र हो जाती है, कपकपी और ऐंठन उत्पन्न हो जाती है आँखों की पुतली फैला देती है। ठंडा पसीना, शरीर में ठंड, मूर्छा और पक्षाघात उत्पन्न करती है।

(6) फुटकुल–मस्तिष्क के तन्तुओं को हानि पहुँचाती है और सदा चार सम्बन्धी मानसिक अधःपतन उत्पन्न करती है और स्मरण शक्ति का भी ह्रास करती है।

(7) एकोलीन–यह द्रव्य सिगरेट के कागज़ जलाने से उत्पन्न होता है। इसका धुआँ स्वभाव को चिड़चिड़ा बना देता है। साहब लोगों की वाणी में प्रायः मिठास न होने का यह भी एक कारण है सारांश यह है कि सहन शक्ति, नियन्त्रण शक्ति, स्मरण शक्ति और सूक्ष्म शक्ति तम्बाकू के व्यवहार से निरंतर कम हो जाती है। अजीर्णता प्रायः बनी रहती है। स्त्रियों में बाँझपन की नीव पड़ती है। शारीरिक बड़ाव को रोकती है। व्यभिचार की ओर प्रवृत्ति दिलाती है और आयु को घटा देती है। राष्ट्र दृष्टि में तम्बाकू खानेवाला राष्ट्र की महान हानि करता है प्रथम तो करोड़ों रुपये के सिगरेट विदेश से प्रति वर्ष आता है। देश की लाखों बीघा भूमि इसके जोत के काम में आकर जहाँ उस वर्ष कुछ आवश्यक अन्न उत्पन्न नहीं करती वहाँ उसकी उर्वरता शक्ति सर्वदा के लिये कम हो जाती है। लाखों मज़दूर बीड़ी आदि बनाने के कारण अन्य उपयोगी काम खेती इत्यादि नहीं कर पाते हुक्का पीनेवाले घंटों इसी काम में लगा देते हैं और फिर इस से रोगी होकर चिकित्सा में समय और धन नष्ट करते।

इन हानियों के होते हुए भी जो लोग तम्बाकू को छोड़ना नहीं चाहते उन्हें स्वयं विचार करना चाहिए कि वह कितना बड़ा पाप अपने अपने परिवार तथा देश के साथ कर रहे हैं। जो लोग इसकी लत पड़ जाने के कारण विवशता पूर्ण प्रयोग कर रहे हैं उनके वास्ते कुछ उपाय यहाँ लिखे जाते हैं :–

1. सब से पहला और मुख्य उपाय इच्छा शक्ति की दृढ़ता है। ऐसे उदाहरण विद्यमान हैं कि वर्षों और दिन में अधिक समय हुक्का पीनेवालों ने इच्छा शक्ति की प्रबलता से एक बार प्रण करके फिर तम्बाकू नहीं पिया।
2. जब इसकी चाट लगे तब नींबू पानी में निचोड़ कर पीवे।
3. भोजन के उपरान्त तम्बाकू की प्रबल माँग होने और अपनी इच्छाशक्ति से उस माँग को न रोक सके तो[3] सिलवर नाइट्रेट के कुल्ले करे।
4. नारंगी, संतरा, अनन्नास, अंगूर, सेब, दही और मक्खन का प्रयोग तम्बाकू छोड़ने में सहायक होता है।

दूसरा विचार

मदिरा

तम्बाकू के पश्चात् मदिरा पर विचार किया जाता है क्योंकि इस का प्रचार भी विदेशी सभ्यता और धर्म प्रचार के अभाव में खूब बढ़ रहा है। जिस भारत के प्राचीन आर्य राजा महाराजा अभिमान पूर्वक कहा करते थे कि हमारे राज्य में न कोई चोर है न मद्य पीने वाला उसी पवित्र भूमि में आज नगर २ और ग्राम में सैकड़ों शराबखाने खुले हुए हैं कुछ लोगों की ऐसी धारणा है कि हमारे पूर्वज भी इसे प्रयोग में लाते थे पर यह निरा भ्रम है। आर्यों में यह ऐसी घृणा की चीज़ समझी जाती रही है कि जब वैद्य लोगों ने औषधि रूप में भी इसको अपने यहाँ रखना प्रारम्भ किया तब स्मृतिकारों ने वैद्य के यहाँ का भोजन निषिद्ध ठहराया। हाँ राक्षसों के भोजन में मांस मदिरा का अवश्य उल्लेख मिलता है। अर्थात् यह राक्षसी भोजन है। आर्यों का नहीं। कुछ विदेशी लेखक वेद में सोम पान का वर्णन पढ़कर उसे मदिरा समझते हैं, पर यह उनकी भूल है। सोम एक औषधि का नाम है जिस के गुणों का मदिरा में कदापि समावेश नहीं हो सकता। सोम पान से

---

[3] नोट—**सिलवर नाइट्रेट एक अँग्रेज़ी औषधि है। यह भी विष है। इसकी २ बूँद एक आउन्स पानी में डालकर कुल्ला करना चाहिए। पीवे नहीं। यह अच्छा उपाय नहीं है पर निर्बल इच्छा-शक्ति वालों को हितकारी है।

शक्ति कान्ति और पाचन शक्ति बढ़कर मनुष्य तेजस्वी और वीर्यवान होकर अधिक आयु पाता है। जबकि मदिरा इस से सर्वथा विपरीत गुण रखती है। यहाँ इसके प्रभावों पर कुछ प्रकाश डाला जाता है।

मदिरा का शरीर पर प्रभाव

थोड़ी मात्रा में मदिरा पीने से हृदय और मस्तिष्क उत्तेजित हो जाता है। शरीर में गर्मी अनुभव होती है और कुछ उत्तेजना-सी होती है और किसी अंश में मनुष्य अपने शरीर पर से अपना अधिकार खो बैठता है। तथा डींगें मारने लगता है। बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। और अधिक पीने से आदमी बुद्धि तथा चेतनाशक्ति दोनों को खो बैठता है। प्रारम्भ में जो कुछ उत्तेजना मिलती है इसे भ्रमवश लोग शक्ति समझते हैं। इसी लिये कुछ लती पीनेवालों के विषय में प्रसिद्ध है कि मदिरा पीकर कार्य अधिक कर सकते हैं। और यह भी भ्रम फैलाया जाता है कि थोड़ी मात्रा में मदिरा पीना स्वास्थ्य के लिये हितकर है। पर यह सब बातें सनकी लोगों की हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से मदिरा एक विष है जिसकी एक बूँद भी अपना विष का प्रभाव ही रखती है। यह मुँह में पहुँचते ही मुँह की झिल्ली और जिव्हा को जलाती है। इसी कारण उसे पीकर लोग मुँह बिगाड़ते हैं।

आमाशय में पहुँच कर भी यह अपनी तीव्रता से जलन उत्पन्न करती है जिस से आमाशय की झिल्ली मोटी और खुरदरी हो जाती है। जिससे भोजन पचाने का कार्य ठीक रूप में नहीं कर सकती इसके परिणामस्वरूप मंदाग्नि और अमातिसार इत्यादि रोग हो जाते हैं। आमाशय से शोषक ग्रन्थियों द्वारा रस चूसने पर जब मदिरा यकृत में जाती है तो उस पर भी उत्तेजक प्रभाव करती है जिससे अन्त को यकृत सुकड़ कर छोटा हो जाता है और अपना साधारण कार्य करने के अयोग्य हो जाता है परिणाम स्वरूप यकृत की सूजन यकृत का फोड़ा, पीलिया (Jaundice) मधु मेह और जलन्धर इत्यादि रोग हो जाते हैं। हृदय पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ता है और वह धड़कने लगता है। तथा अनियमित रूप से चलने लगता है। कभी २ मस्तिष्क की रक्त वाहिनी नाली फटकर बेहोशी की अवस्था

में मनुष्य मर जाता है। कभी मस्तिष्क के अनेक रोगों जैसे स्मरण शक्ति का मारा जाना, सर दर्द, लकवा, फ़ालिज, वहिम पागलपन, कम्पा, मूर्छा इत्यादि रोग हो जाते हैं। वृक्क भी इसके कुप्रभाव से दूषित हो जाते हैं। और मूत्र न रोक सकना इत्यादि अनेकों मूत्राशय के रोग हो जाते हैं। पाश्चात्य डाक्टरों ने भी खोज करके लिखा है कि मदिरा पीनेवालों की सन्तान बहुत निर्बल होती है। और मृगी पागलपन मस्तिष्क विकार तथा क्षय रोग इत्यादि का शिकार हो जाती है।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है। मदिरा से हृदय और मस्तिष्क को उत्तेजना होकर रक्त सञ्चालन कुछ देर को तीव्र हो जाता है पर थोड़ी ही देर के पश्चात तबियत बहुत सुस्त हो जाती है। और रक्त सञ्चालन की गति तीव्र होने से गर्मी मालूम होने लगती है, पर यह कोई स्थायी गर्मी नहीं होती अतः थोड़ी ही देर में गर्मी के स्थान में सरदी प्रतीत होने लगती है। और शरीर की गर्मी और भी घट जाती है। अतः शरद ऋतु में घर से बाहर खुली हवा में जाने से पूर्व जो लोग मदिरा पीते हैं यह निरर्थक ही नहीं किन्तु हानिकारक भी है क्योंकि शरीर की गर्मी कम हो जाने के कारण सर्दी के सहन करने की शक्ति भी घट जाती है। ऐसी अवस्था में अधिक सर्दी के कारण निमूनिया इत्यादि रोग हो जाने का भय रहता है। चूँकि मदिरा पीने से शारीरिक और मानसिक परिश्रम करने की शक्ति घट जाती है अतः इन दोनों प्रकार के काम करने वालों को दूनी अधिक हानि उठाना पड़ती है।

प्राचीन वैद्यक शास्त्र भी यही बताता है कि मद्य के प्रयोग से फेफड़े खराब होते हैं हृदय निर्बल होता है और समस्त शरीर के आंतरिक कार्य बिगड़ जाते हैं, इसी कारण धर्म शास्त्र में भी नशों का प्रयोग करना पाप बताया गया है जिसका परिणाम दुख है। ऐसी अवस्था में जो व्यक्ति जनता को यह पाठ पढ़ाया करते हैं कि “यदि थोड़ी मात्रा में नित्य प्रति मदिरा नियम से पी जावे तो स्वास्थ्य वर्धक है” विज्ञान द्वारा नितान्त असत्य है। अतः स्वास्थ्य तथा बुद्धि के इच्छुक को कभी भूलकर भी मदिरा पान नहीं करना चाहिए।

तीसरा विचार

चाय

मदिरा से भी अधिक आज देश में चाय का प्रचार बढ़ गया है। और इसको भोजन का एक आवश्यक अंग मान लिया गया है। जिस पवित्र देश में प्रत्येक देशवासी प्रातःकाल संसार का सर्व श्रेष्ठ पदार्थ गऊ का धारोष्ण दुग्ध तथा मक्खन का जलपान करता था आज इसका स्थान इस निरर्थक वस्तु चाय ने ले लिया है। इसके प्रचार बढ़ने के निम्नलिखित कारण है–

1. विदेशी सभ्यता को अपनाना।
2. विदेशी सभ्यता को ग्रहण किए हुए लोगों का सरकार तथा जनता की ओर से अपेक्षाकृत अधिक सत्कार होना।
3. चाय कम्पनियों का अपने धन कमाने के अभिप्राय से चाय की झूठी प्रशंसा करके प्रचार कराना और जनता का उस प्रचार को सरकार की ओर से समझना।
4. देश का गऊमाता की कमी से निर्धन होना और लोगों के लिये जलपान तथा अतिथि सत्कार के लिये चाय का सब से सस्ता पड़ना।
5. देश की संस्कृति बनानेवाली संस्थाओं की इसकी ओर से उपेक्षा और कम हानिकारक समझने के कारण उसका अनेकों नेताओं का कभी २ स्वयं पान करना। इत्यादि

वास्तव में चाय अँग्रेजी सभ्यता की देन है हमारे प्राचीन वैद्यक शास्त्र की दिनचर्या में इसका कहीं उल्लेख नहीं मिलता। अपने बाल्यकाल में हमने स्वयं अपनी आँखों से देखा है कि अब से ५० व ६० वर्ष पूर्व इसको केवल वह ही लोग प्रयोग करते थे जो या तो ईसाई हो जाते थे अथवा भारतीय बने रहने की अपेक्षा अँग्रेज़ बनने का निष्फल प्रयत्न किया करते थे। साधारण अँग्रेज़ी पढ़े भी इसे घृणा की दृष्टि से देखते थे। पर अँग्रेज़ी की कूट नीति से जैसे २ लोग संस्कृत

जैसी विद्या को छोड़ अँग्रेज़ी जैसी अपूर्ण भावाभाव और स्वल्प काल में अधिक विज्ञान वर्धक आदि ग्रन्थ वेद, शास्त्र को छोड़ कुत्ते-बिल्ली की कहानी और "खोदा पहाड़ निकला चूहा" वाली कहावत को चरितार्थ करने वाली बहुत समय में थोड़ा-सा अनिष्टकारक ज्ञान प्राप्त करने वाली और वितंडावाद बढ़ाने वाली पुस्तकें पढ़ने लगे। इसी प्रकार फल और दूध जैसे उत्तम पदार्थों को छोड़ लोगों ने चाय को अपनाना प्रारम्भ कर दिया है। इसके भीतर क्या गुण दोष हैं यह हम यहाँ उसी विज्ञान के आधार पर बताते हैं जिस के मानने वालों ने इसका प्रयोग प्रारम्भ किया है–

वैज्ञानिक ढंग पर विश्लेषण करने पर चाय में निम्नलिखित वस्तुऐं पाई जाती हैं:–

1.	थेमीन	1.8 प्रतिशत
2.	एलव्युमन	2.8 प्रतिशत
3.	डक्टीन	9.7 प्रतिशत
4.	सेलूलूज़	22 प्रतिशत
5.	टेनीन	15 प्रतिशत
6.	अन्य खनिज पदार्थ व आयल इत्यादि शेष भाग	

इन में दो पदार्थ थेमीन तथा टेनीन ही अपना विशेष प्रभाव रखते हैं। थेमीन उत्तेजना उत्पन्न करता है और कुछ पुष्टी देता है। पर टेनीन बहुत ही क़ाबिज़ है। थेमीन चाय की पत्ती के ऊपरी भाग पर होता है और उसी के नीचे टेनीन होता है गरम पानी के डालने के पश्चात जितनी ही शीघ्र चाय छान ली जावेगी टेनीन का भाग कम आवेगा, पर आवेगा अवश्य क्योंकि थेमीन इतनी कम मात्रा में रहता है कि शीघ्र ही पानी टेनीन तक पहुँच जाता है। यदि किसी ऐसे यंत्र का आविष्कार हो जावे जो चाय से थेमीन तो निकाल ले और टेनीन न आने पावे तो चाय से

जो हानियाँ होती हैं उनमें बहुत कमी हो जावे पर इस समय जबकि टेनीन भी हमारे शरीर में पहुँचता है उससे निम्नलिखित रोग उत्पन्न होते हैं :–

1. कोष्ठबद्धता (क़ब्ज़)

2. मंदाग्नि (Dyspepsia)

3. वीर्य का पतला पड़ जाना और शीघ्र पतन तथा स्वप्नदोष का रोग हो जाना (प्रमेह)

4. रक्त का दूषित हो जाना और उसमें क्षार और अम्ल का उचित अनुपात न रहना।

5. नींद का उचट जाना।

6. हृदय की गति का ठीक न रहना।

यह सत्य है कि चाय वैसी तीव्र हानिकारक नहीं है जैसी मदिरा। यह भी सत्य है कि शरद ऋतु में वर्ष में 2-4 बार पर्याप्त मात्रा में दूध, मलाई मक्खन मिलाकर अन्य खाद्य पदार्थों से पृथक यदि चाय पी ली जावे तो कदाचित उसकी हानि प्रत्यक्ष में दृष्टि-गोचर न होवे। पर जो लोग पूर्ण स्वास्थ्य के इच्छुक हैं उनको इसे सर्वथा त्याग देना ही श्रेयस्कर है, और इसके स्थान में प्रातःकाल के जलपान में गऊ का धारोष्ण दूध और बहुत शीत लग रहा हो तो गऊ दुग्ध, बादाम, छुुआरे, शालम मिश्री, छोटी इलायची और केसर इत्यादि के साथ अथवा सादा ही पीना चाहिए, जिससे पुष्टी भी प्राप्त होगी और कोई हानि भी न होगी। जिन अभागों और पुरुषार्थहीनों को दूध प्राप्त नहीं हो सकता उनको टमाटर, गाजर, भिगाये चनों इत्यादि सस्ते पदार्थों से पेट की ज्वाला बुझा लेना चाहिए पर नित्य के जलपान में नित्य ही चाय कदापि न पीना चाहिए। इस उपदेश का न ग्रहण करने वालों को दूध से बचाए दामों को डाक्टरों के बिल चुकाने के लिए उद्यत रहना चाहिए।

चौथा विचार

वनस्पति तेल

वनस्पति तेल भी जिसे भ्रमवश घी कहा जाता है हमारी कृपालू अँग्रेजी सरकार की देन है। यद्यपि इसका आविष्कार तो प्रथम फ्रांस में हुआ था। पर चूंकि अँग्रेजी सरकार को सेना के बल पर यहाँ शासन करना था और सेना के लिये लाखों गउओं का वध कराया जाता था। कुछ देशवासी भी सम्प्रदायक भावना से प्रेरित होकर पराई बद सगुनी में अपनी नाक कटाने में हानि नहीं समझते थे इस कारण जी खोल कर देश की परम आवश्यक वस्तु गऊ का वध हुआ जिस के परिणामस्वरूप घी का उत्पादन दिन-प्रतिदिन घट रहा था। अँग्रेज़ी सरकार समझती थी कि घी की अधिक कमी होने पर जनता में बेचैनी बढ़ेगी अतः हमारे देश को इस के प्रयोग का क्षेत्र चुना गया। हमारे देश के पूँजीपतियों में भी जनता के स्वास्थ्य, देश हित की अपेक्षा स्वार्थ वश निजी धन उपार्जन की चाह बहुत अधिक है और वनस्पति तेल के काम में चौगुने पचगुने धन का लाभ होता है अतः पूँजीपतियों ने भी इस काम में सरकार का खूब हाथ बटाया निर्धन देश की जनता सस्ती चीज़ चाहती ही है। तिस पर कुछ स्वार्थी डाक्टरों ने भी उस को उपयोगी बता दिया अतः इस विष का प्रचार खूब बढ़ रहा है। आश्चर्य यह है कि स्वदेशी सरकार ने भी इस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया किन्तु सुना जाता है और नवीन २ मिलें इस विष को तय्यार करने को खोली जा रही हैं। वनस्पति तेल का क्या प्रभाव है इस पर हम स्वयं लिखने की अपेक्षा एक ऐसे डाक्टर के विचार ज्यूं के त्यूं उनकी भाषा में यहाँ रखना उचित समझते हैं जिन्होंने हमारी अपेक्षा इस विषय पर अधिक खोज की है।

हमारा अभिप्राय काशी हिन्दू विश्व विद्यालय के रासायनिक विभाग के अध्यक्ष डा० एन० एन० गोडले एम० ए० बी० स सी० एपी० एच० डी० "बर्लिन" से है डाक्टर साहब ने वर्षों विदेश में रह कर इस विषय की अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त की है उन का भाषण इस प्रकार है:–

सौभाग्य से भारत में सब प्रकार के प्राकृतिक पदार्थ हमको बहुतायत के साथ मिलते हैं। किन्तु पश्चिमी सभ्यता का प्रहार जब से हमारे देश के ऊपर प्रारम्भ हुआ है तब से होड़ में हमारे हाटों और बाज़ारों से असली प्राकृतिक पदार्थों को खदेड़ कर दूर कर दिया है। पश्चिम की इसी स्वार्थ भरी सभ्यता की एक देन "वनस्पति घी" है जो कि अपने धोखे में डालने वाले नाम के कारण भारतीय सभ्यता की आत्मा का ही हनन किये दे रहा है क्योंकि भारत का तो यह पुराना कथन है "आयुर्वैघृतम"

नकली घी का आविष्कार

नकली घी का आविष्कार सब से पहले फ्रांस में नोपोलियन तृतीय के समय में स० १८७० ई० में एक फ्रांसीसी मगभोराज ने किया। उसने गाय के खमीरी दूध में गाय की चर्बी मिलाई और नकली घी तय्यार किया। घी ८४ प्रतिशत दूध से लिये हुए चिकने सार और १६ प्रतिशत पानी का मिलाव है। और नकली घी इसी पैमाने पर बड़ी २ मशीनों द्वारा तय्यार किया जाता है। साफ़ की हुई सुअर आदि जानवरों की चर्बी, मूंग फली का तेल, बिनौले का तेल, गोले का तेल, खजूर का तेल, सासम का तेल, हाइड्रोजन गुजारा किया हुआ मछली का तेल, शावृत्त का तेल इत्यादि सब साफ़ कर लिये जाते हैं। और फिर २० प्रतिशत गाय के खमीरी दूध के साथ मिला दिए जाते हैं तथा फिर नमक पानी द्वारा जल्दी से ठण्डे कर दिये जाते हैं। इस प्रकार घी से मिलता हुआ मारगेरिन तय्यार हो जाता है। जो बचा हुआ पानी होता है वह रोलर द्वारा दबाकर निकाल दिया जाता है। मारगेरिन की कीमत घी से लगभग चौथाई होती है। इस में कुदरती घी की खुशबू तो होती है। किन्तु जहाँ तक पौष्टिकता का सम्बन्ध है वह असली घी की किसी अंश में भी बराबरी नहीं करता..............वनस्पति घी के सम्बन्ध में पहली बात तो यह है कि उस का अधिकांश "स्टीरिक ग्लैसिराइड" है और उसमें बहुत थोड़ी-सी मात्रा में "ओलिक एसिड ग्लैसिराइड" विद्यमान होता है। जैसाकि जर्मनी और अमेरिका के देशों में किये हुए प्रयोगों से मालूम हुआ है।

"स्टीरिक ग्लैसिराइड" शरीर के पाचन क्रिया सम्बन्धी भागों में घुल मिल नहीं जाता बल्कि वैसा ही निकल जाता है।

सब से कम पचनेवाले "स्टीरिक ग्लैसिराइडरर" हैं या उन से ऊँचे नम्बर के तेज़ाब हैं। बर्लिन में वहाँ की चुंगी ने नालियों का ऐसा प्रबन्ध कर रक्खा है कि बहुत से चिकनाईदार पदार्थ जोकि बिना प्रयोग में आए निकल जाते हैं, फिर से निकाल लिए जाते हैं और फिर हिन्दुस्तान में तेल और घी के स्थान में इस्तेमाल में आते हैं।

वास्तव में, आईसो-ओलिक एसिड की उपस्थिति वनस्पति घी की मिलावट को बनाती है। क्योंकि वनस्पति घी में आईसो-ओलिक एसिडस बड़ी मात्रा में रहते हैं और उन तेलों में जैसे मूंगफली का तेल इत्यादि जिन से यह बनाया जाता है ओलिक एसिड के रूप में उपस्थित रहते हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि तेलों का ओलिक एसिड पच जाता है और शरीर में हल हो जाता है पर आइसा-ओलिक एसिड न पचता है न शरीर में हल होता है। वास्तव में चिकनाई पदार्थ जैसे जानवर की चर्बी, सुअर की चर्बी और अन्य हाईड्रोजन पास किये हुए चिकने पदार्थ बड़े ऊँचे ऊष्पातम स्टीरिक ग्लेसिराइड के बने हुए होते हैं। यह पदार्थ मनुष्य के शरीर के ताप से कहीं अधिक गर्म होते हैं और इस लिए जब वह मनुष्य शरीर में प्रवेश करते हैं तो वह घुल मिल नहीं जाते अथवा बड़ी कठिनाई के साथ घुलते मिलते हैं और इस प्रकार वैसे के वैसे ही निकल जाते हैं। सारांश यह है कि असली घी और वनस्पति घी पौष्टिकता और पाचन क्रिया में एक दूसरे से भिन्न परमावधियाँ हैं। यथार्थ में शुद्ध तेल–जैसे कि मूँगफली अथवा बिनौले के हाईड्रोजन पास किये इन तेलों से अधिक पुष्टी-कारक हैं। हमारे पूर्वज घी के विषय में कहते हैं :–

"घृतमन्नम। शूर्षघृतम, अन्नस्य घृत मेव रसस्तेजः

तेजोवा एततपशूनां यद घृतम, रेतो वै घृतम"

यह ध्यान देने की बात है कि हिन्दुस्तान में हाइड्रोजन पास किये हुए चिकनाई के पदार्थों की पैदावार पर कोई रोक नहीं है।"

प्रशंसित डाक्टर साहब का यह भाषण उस समय हुआ था जब यहाँ अँग्रेज़ सत्तारूढ़ थे। आश्चर्य यह है कि अब जनता की सरकार ने भी जनता के स्वास्थ्य को नाश करनेवाले इस पदार्थ का अब तक बन्द नहीं किया न देश में गऊ धन बढ़ाने की ओर ही विशेष ध्यान दिया जिससे असली घी सस्ता होने पर जनता स्वयं इस रोगकारक वनस्पति घी को त्याग दे। अब इस के लिये जनता को घोर आन्दोलन करके इस हानिकारक पदार्थ को शीघ्र बन्द कराना चाहिये।

वनस्पति तेल के बेचने वाले और खाने वाले प्रायः यह तर्क दिया करते हैं कि जब देशी घी में भी इसका मेल किया जाता है और वह मंहगा मिलता है तो इसको असली रूप में ही सस्ते दामों में खरीदकर क्यों न खाया जावे। पर यह केवल बहाना मात्र है। प्रथम तो देशी घी की शुद्धताई का प्रयत्न करना चाहिए। घर पर गऊ रखना चाहिए जिस से घी दूध सब शुद्ध मिले। बाज़ार में जहाँ मिलावट की शंका हो प्रत्येक नागरिक को प्रयत्न करके अपराधी को दण्ड दिलाना चाहिए। चाहे इस काम में अपना समय और धन व्यय करना पड़े।

कुछ भी न हो सके तो भी देशी घी के नाम से जो घी मिलेगा उसमें जितना भाग शुद्ध घी का होगा उतना स्वास्थ्य लाभ तो होगा ही। ख़ालिस वनस्पति खाना तो रुपया खर्च करके रोग मोल लेना है। और असली तेल से जो लाभ होता उसे भी नष्ट करना है।

पाँचवाँ विचार

मशीन की दानेदार शकर, मशीन का चावल (पालिश किया हुआ) मशीन का पिसा आटा, मशीन का पिरा तेल, गोबर, पत्तों के अतिरिक्त मनुष्य के मल मूत्र से तय्यार की गई खाद से उत्पन्न सब्जी, लैमन, मलाई की बरफ़, अशुद्धता से बनाई बाज़ार की मिठाइयाँ, चाट इत्यादि सब ही रोगकारक हैं। हाँ इन का प्रभाव ऐसा

तीव्र और रोगकारक नहीं होता जैसा मदिरा, भंग इत्यादि का, पर हानि अवश्य होती है अतः स्वास्थ्य की दृष्टि से धीरे २ इन चीजों की शुद्धताई की ओर सरकार और जनता दोनों को ध्यान देना चाहिए।

हमारा राष्ट्र उस समय तक शक्तिशाली नहीं हो सकता जब तक हम पश्चिमी सभ्यता के भूत को छुड़ा न देवेंगे। हमारे देश को अधिक मशीनों की आवश्यकता नहीं है किन्तु पुरुषार्थी बनने की आवश्यकता है। आटा और चावल प्राचीन समय की भाँति घर पर तय्यार होना चाहिए मिलों को पहले कम और फिर बन्द करना चाहिए। बैल वाले तेल के कोहलू का रिवाज बनाना चाहिए। गुड़ बहुत उपयोगी पदार्थ है पर शक्कर की मशीनों के कारण कम बनने लगा है। उसका तथा खंडसार की शक्कर बनाने का रिवाज बढ़ाना चाहिए और मिलों को बन्द करना चाहिए। महात्मा गान्धी मिलों के विरोधी थे पर उनको राष्ट्र पिता माननेवाले अपनी मनमानी कर रहे हैं उन्हें रोकना चाहिए। ग्राम निवासियों को गाय बैल इतने पालना चाहिए कि गोबर की खाद हो जावे और घी दूध पर्याप्त मिले। नगर वालों को कष्ट उठाकर भी गाय रखना चाहिये। गौचर भूमि छुड़ाने का सबको मिलकर यत्न करना चाहिये। गऊ दुग्ध और घृत मिलने से ही हमारी बुद्धि पवित्र होगी फिर हम हानिकारक पदार्थों से स्वयं घृणा करने लगेंगे और राष्ट्र का उत्थान होगा।

उपदेश (7-क)

हमारा भोजन (क)

त्याज्य पदार्थों को छोड़ने के पश्चात खाद्य पदार्थों में दूध, फल, अन्न और साग भाजी उपयोगी और स्वास्थ्य दायक पदार्थ हैं। नमक, मसाले, गुड़ और खंड़सार शक्कर भी उचित मात्रा में स्वास्थ्यकर हैं। पर इनकी थोड़ा सी भी अति हानिकारक हो जाती है और यदि यह न मिलें और ऊपर की चीजें आवश्यकता भर मिलती रहें तो मनुष्य निरोग रह सकता है। क्योंकि सागों से नमक मिल सकता है। गन्ना, खजूर इत्यादि फलों से शक्कर भी शरीर में पहुंच सकती है। नियम यह है कि एक स्वस्थ्य मनुष्य प्रत्येक प्राकृतिक पदार्थ को पचा सकता है यदि उसका अनुताप और मात्रा ठीक है। भोजन से रोगी होने के कारण दो ही होते हैं या तो अप्राकृतिक भोजन करना या मात्रा से अधिक भोजन करना। भोजन का अनुताप ठीक करने में एक नवीन खोज से बड़ी सहायता मिलती है। अतः पहले उसी का वर्णन करते हैं :–

हमारे रक्त में विशेष रूप से दो पदार्थ हैं एक खारापन क्षारता (Alkalinity) और दूसरी अम्लता, खटाई (Acidity) यह दोनों पदार्थ समान रूप में नहीं हैं खारापन तो 80% है और खटाई 20%। अतः सिद्धान्त यह बताता है कि हम भोजन भी ऐसा करें कि हमारे रक्त में इनका अनुपात ठीक बना रहे। क्योंकि हम रोगी उसी समय होते हैं जब हमारे रक्त का यह अनुपात बिगड़ जाता है। इस अनुपात के साथ एक स्वस्थ मनुष्य प्रत्येक पदार्थ चाहे वह कितनी ही कठिनता से पचनेवाला हो अवश्य पचा लेगा। और इस अनुपात के बिगड़ने से बलवान व्यक्ति शीघ्र अथवा देर से अपने स्वास्थ्य को बिगाड़ लेगा। यहां हम एक सूची देते हैं जिस से पाठकों को यह ज्ञात हो जाये कि कौन पदार्थ क्षारमय हैं और कौन अम्लीय हैं।

(1) **क्षारमय पदार्थ जिन से रक्त में खारापन आता है और हमें नित्य के भोजन में 80% चाहिए।**

(a) गऊ का ताज़ा दूध और दूध से बने पदार्थ, दही, मठा इत्यादि बकरी का दूध भी क्षारमय है, पर भैंस का दूध पूर्ण क्षारमय नहीं है।

(b) सभी मीठे फल और ऐसे फल जो पक कर मीठे हो जाते हैं, जैसे संतरा, अनन्नास, नारंगी चकोतरा, मुसम्मी, शरीफ़ा, मिट्ठा, आलू बुखारा, आलूचा, लीची, सेब, अनार, खुमानी, नाशपाती, गन्ना, अंगूर, किशमिश मुनक्का, अंजीर, पिंड खजूर, खिरनी, कशेरू, पपीता, खरबूजा, मीठे आम, लोकाट, शहतूत, बेल, खीरा, रसभरी, स्टाबरी, फालसा, गोदनी, मौलसिरी, जामुन, हरफ़ारेवड़ी, आंवला, केला, अमरूद इत्यादि।

(c) सभी पत्तेदार साग, भाजियां और ऐसी फलदार हरी भाजियां जो पृथ्वी के ऊपर होती हैं, जैसे लौकी, तुरई, नैनुआ, परवल, टिंडा, पका टमाटर, परोरा इत्यादि

(d) कई कंद भाजियां जैसे शलजम, गाजर, मूली, चुकंदर इत्यादि

(e) गेहूं तथा उसका आटा (चोकर मिला), बिना पालिश का चावल, जौ, मूंग, मसूर, गेहूँ का दलिया इत्यादि

(f) गुड़, शहद, सेंधा नमक, देशी शकर (जिसमें सिवार का प्रयोग होता है)।

वर्तमान मशीनों की दानेदार चीनी की अपेक्षा धौर और चन इत्यादि गन्ने का गुड़ बहुत उत्तम है। मशीन की चीनी में शत प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होता है जिस से शरीर को कुछ शक्ति अवश्य मिलती है, पर यह आवश्यकता से अधिक साफ किए जाने और दानेदार होने के कारण आँतों की क्रिया में बाधक होती है और रक्त को दूषित करती है। इस कारण कब्ज, मधुमेह इत्यादि अनेकों रोग होते हैं। खंडसार की चीनी में उस के जो विटामिन पकाने से जलते हैं वह अन्त को सिवार से साफ करने से उसमें आ जाते हैं। पर इसके विटामिन नष्ट तो उससे भी अधिक होते हैं और ऊपर से आने का कोई अवसर नहीं मिलता। गुड़ इससे अधिक शक्ति प्रदान करता

है। उसमें स्वास्थ्य तथा विकास बर्धक तत्व अधिक हैं जैसे लोह, ताम्र, कैल्शियम, कैरोटीन (विटामिन ए का पहला रूप) तथा “बी” काम्पलेक्स ग्रुप के विटामिन विशेषकर इनेसिटाल भी प्रदान करता है। इनेसिटाल आंतों की कार्य शक्ति को बढ़ाता है। इसीलिए आयुर्वेद ने इसे रेचक माना है। जो लोग मशीन की शकर और चाय का प्रयोग करके पहले कब्ज का रोग उत्पन्न करते हैं और फिर उसे मिटाने को बेडपिल्स खाया करते हैं वह यदि यह त्याग कर भोजन के उपरान्त एक तोला गुड़ विशेषकर शरद ऋतु में खा लिया करें तो फिर उनको टट्टी लाने को इन गोलियों की आवश्यकता न पड़े। क्योंकि गुड़ में लोह और ताम्र के तत्व होते हैं अतएव यह पौष्टिकता की कमी से होने वाले रोग जैसे रक्ताभाव (एनीमिया) इत्यादि को रोकने और उसकी चिकित्सा के लिए बड़ा उपयोगी है। ऐसा नवीन खोजकर्त्ता बताते हैं संयुक्तप्रांत के स्वास्थ्य विभाग ने परीक्षण के पश्चात यह भी बताया है कि गुड़ मशीन की सफेद चीनी की अपेक्षा शीघ्र पच जाता है।

(2) **अम्ल पदार्थ जिन से खून में खटाई आती है और जिनकी हमें केवल 20% आवश्यकता है :–**

(a) मैदा और मैदे से बने पदार्थ–पकवान, पूड़ी, कचौड़ी, माल पुआ, हलुआ, मिठाई, गुलाबजामन, बालूशाही, इमरती, पकौड़ी, बड़े, सेमई, लड्डू, सोहन हलुवा इत्यादि।

(b) धुली हुई दालें, मटर, सेम, लोविया, उर्द, बेसन इत्यादि।

(c) ऐसे फल जो पकने पर भी खट्टे रहते हैं – कैथा, खट्टी नारंगी, खटाई, अचार, मुरब्बा इत्यादि।

(d) सूखे फल – बादाम, अखरोट, काजू, चिलगोजा, पिस्ता, मूंगफली, खरबूजे के बीज इत्यादि।

नोट– कोई कोई पदार्थ किसी को स्वभाव से हानिकारक होता है। उसे छोड़ शेष सब पदार्थों में से अपनी रुचि और भूख के अनुसार सेवन करो और यदि क्षार और अम्ल का अनुताप ठीक रखोगे तो कदापि रोगी न होगे।

उपदेश (8)

हमारा भोजन (ख)

विटामिन (प्राणतत्व)

यह बात प्राचीन काल से मानी जाती है कि जिस प्रकार जल और वायु में प्राण होता है उसी प्रकार भोजन में भी एक विशेष प्रकार का प्राण होता है और जिस मनुष्य में कोई रोग होता है उसे उस रोग के अनुकूल वस्तु प्रयोग करने का परामर्श दिया जाता था। जैसे आंख की दृष्टि कम हो तो वैद्य लोग मक्खन और घी खाने को कहते हैं। रक्त शोष हो तो मधु का प्रयोग कराते हैं। नवीन विज्ञान उसी बात को इस प्रकार बताता है कि पहले यह ज्ञान प्राप्त करो कि भोजन के किस किस पदार्थ में कौन कौन विटामिन हैं फिर डाक्टर से अपने विषय में यह निर्णय कराओ कि तुम्हारे भीतर किस विटामिन की न्यूनता है। उसी की अधिकता वाला पदार्थ भोजन में लेने से रोग विना औषधि के भी ठीक हो सकता है। पर डाक्टरी व्यवसाय को हानि न पहुंचे और निर्बल हृदय वालों को भी तसल्ली रहे इस लिये विटामिन भी औषधि रूप में बेचे जाते हैं। यहां हम ऐसा विवरण देते हैं जिस से पाठक अपने भीतर विटामिन की न्यूनता का निर्णय तथा उसका प्रतिकार भोजन द्वारा स्वयं कर सकें।

1. विटामिन "ए" साधारण तौर से शरीर के बढ़ने और पुष्ट होने के लिये आवश्यक है। आंखों को भी शक्ति इसी से मिलती है। शरीर की निर्बलता इस से दूर होती है। यह विटामिन दूध, घी, मक्खन, गाजर, टमाटर, पालक का साग, मूली और मीठे आलू में (जो प्रायः गहरे लाल रंग का होता है) मिलता है।

2. विटामिन "बी" की कमी से श्वेतसार भली प्रकार नहीं पचता तथा रक्त नालियों में विषैले पदार्थ बढ़ जाते हैं और नाड़ियों में सूजन व पीड़ा हो

जाती है। हृदय, आंत और पेशियों में निर्बलता आ जाती है और शरीर का भार कम होने लगता है। यह दूध, अखरोट, मूंगफली, सलाद, पालक, टमाटर, गोभी, नारियल की गिरी, धान और दालों में पाया जाता है।

3. "बी २" की कमी से त्वचा और नाड़ी संस्थान बिगड़ जाता है। और कभी कभी नेत्र, कान, मुंह, होठ इत्यादि स्थानों में हल्की सूजन आ जाती है। शरीर बढ़ता नहीं और चिकने पदार्थ पचते नहीं। यह गेहूं के छिलके के नीचे और चावल के ऊपरी भाग में अधिक पाया जाता है दूध और हरे सागों में भी अधिक होता है।

4. विटामिन "सी" दांत, हड्डी और त्वचा के लिये हितकर है। रक्त के विकार में इसकी कमी होती है और खाज, पायरिया, फोड़े, फुंसी निकलना इत्यादि रोग इसकी कमी से हो जाते है। यह सभी पत्तेदार और हरे सागों में, दूध, संतरा, टमाटर, सभी फलों में बन्द गोभी, गाजर, पालक में विशेष रूप से मिलता है। पर आंवले में सबसे अधिक होता है।

5. विटामिन "डी" की कमी से बालकों को सूखा और बड़ों को क्षय तथा एनिमिया जैसे अनेकों रोग हो जाते हैं। यह दूध, मक्खन, और छिलके सहित समूचे अन्न भाजियों और अंगूर में मिलता है। धूप में बैठने से विशेषतया प्रातःकाल सूर्योदय समय उसकी किरणें छाती तथा नंगे शरीर पर लेने से शरीर में खून प्रवेश करता है। तेल की मालिश से भी इसकी वृद्धि होती है। इसी कारण हमारे देश में प्राचीन काल से माताऐं बालकों को तेल की मालिश करके धूप में सुलाती आई हैं। अब अंग्रेजी सभ्यता के प्रभाव में पढ़ी हुई देवियां यह प्रथा छोड़ रही हैं इसी कारण बालकों में सूखा रोग बढ़ रहा है। एक प्राकृतिक चिकित्सक ने लिखा है कि यदि बालक को सहने योग्य धूप में अधिक से अधिक समय रखा जावे और अंगूर का रस दूध के पूर्व व पश्चात पिलाया जाये तो सूखा रोग दूर हो जाये। हमारी सम्मति में यदि बालक को मालिश करने और धूप में लिटाने की प्रथा जारी रहे

और माता दूध पिलाने के दिनों में ब्रह्मचर्य पूर्वक संयम से रहे तो सूखा रोग होय ही नहीं। क्योंकि अधिकांश बालकों को सूखा माता के सहवास के पश्चात् तुरन्त दूध पिलाने से होता है।

6. विटामिन "ई" इसकी कमी से स्त्री बाँझ हो जाती है। और पुरुष के बीर्य कीटाणु मारे जाते हैं। यह दूध, बादाम, मूंगफली, अनाज, उड़द इत्यादि, सेम हरी मटर और पालक में पाया जाता है।

उपदेश (9)

हमारा भोजन (ग)

शरीर के तत्व के अनुसार

हमारा शरीर जिन तत्वों से बना है वह 18 हैं और यदि एक मनुष्य का भार लगभग 2 मन माना जाये तो यह तत्व उस में इस प्रकार होयेंगे ।

हाइड्रोजन	... 7.5 सेर
फासफोरस	... 1.5 सेर
क्लोरीन	... 1 सेर
केलसियम	... 2 सेर
आक्सीजन	... 37.5 सेर
कारबन	... 25 सेर
मैगनेशियम	... 3 छटाक
सोडियम	... 2 छटाक
नाइट्रोजन	... 2 छटाक
फ्लोरीन	... 2.5 छटाक
गन्धक	... 2.5 छटाक
पोटाशियम	... 11.5 छटाक
सिलिकोन	... 0.5 छटाक
फ़ौलाद	... 1 छटाक
अयोडीन	... 1/8 छटाक

मेगनायस, तावां और रेडियम थोड़ी थोड़ी मात्रा में कार्य करने से यह तत्व शरीर से कम होते हैं और वायु, जल तथा भोजन द्वारा उनकी पूर्ति होती है। भोजन द्वारा कुछ तत्व विशेष रूप से शरीर में पहुंचते हैं। जब किसी मनुष्य के भीतर इनमें से किसी तत्व की अधिक कमी हो जाती है तो रोग उत्पन्न हो जाता है किस तत्व का क्या काम है और वह किस पदार्थ में मिलता है वह नीचे लिखा जाता है:–

1. केलसियम (Calcium चूना) के अभाव से हड्डी निर्बल और पतली रहती है। रक्त में शक्ति नहीं आती और शरीर पुष्ट नहीं होता। सहन शीलता, स्मरण शक्ति, काम करने की शक्ति और योग्यता उतनी ही अधिक उत्पन्न होती है जिस अनुपात से चूना हमारे शरीर में हो। चूना ही लोह को लाल रक्त बनाने में सहायक होता है। इसी की न्यूनता से दांत निर्बल हो जाते हैं। मीठी व तेल वाली चीजों की कार्बन दांतों की कैलसियम कम कर देती है। इसी कारण मिठाई अधिक खाने वालों के दांत कमज़ोर हो जाते हैं। उस न्यूनता को चूना पूरा करता है। युवा अवस्था के पश्चात जब हड्डी खूब पुष्ट हो जाती है चूने की अधिक आवश्यकता नहीं रहती। यह शलजम, शलजम के पत्ते, बादाम, सूखे अंजीर, दूध, चोकर, मसूर, मटर, पालक, नींबू, संतरें, वन्द गोभी, मूली और चकोतरे में खूब मिलता है। गाय के धारोष्ण तथा कच्चे दूध में पर्याप्त मात्रा में मिलता है पर आंच पर गरम करने से यह ऐसी अवस्था में नहीं रहता कि पच कर शरीर का अंग बन सके। कच्चा दूध थोड़ी मात्रा में भी अधिक शक्ति प्रदान करता है।
2. फासफ़ोरस (Phosphorus) की कमी से मस्तिष्क की निर्वलता और थकावट, नाड़ियों की निर्वलता और पतलापन होता है। यह तत्व बादाम, मसूर, बिना छना आटा, जौ, मटर, अखरोट, पत्तागोभी, खीरा, सेब, लौकी, मूली, पालक, देशी चावल, दूध में पाया जाता है।

कैलसियम और फासफ़ोरस से हड्डियाँ बनती हैं और यह मिश्रित अवस्था में प्रत्येक कोष (cell) के भीतर पाए जाते हैं। प्रोफेसर शर्मन की खोज के अनुसार नित्य प्रति 0.45 ग्राम कैलसियम और 0.5 ग्राम फासफोरस शरीर में से कणों के टूटने से और अन्य कारणों से नष्ट होकर निकलता है। इस न्यूनता को पूरा करने को और शक्ति स्थिर रखने के लिये आवश्यक है कि लगभग 2 ग्राम कैलसियम और इससे कुछ अधिक फासफ़ोरस नित्य के भोजन में लिया जाये। अन्यथा कैलसियम की कमी से हड्डियों और दांतों की निर्वलता और फासफ़ोरस की कमी से सारे शरीर में दुबलापन आना प्रारम्भ हो जाता है।

3. सोडियम (Sodium) अर्थात् खाने का नमक यह ठोस मलों को घोलकर शरीर से निकालता है। वृक्क, यकृत की पथरियों और जोड़ों में से यूरिक एसिड को पिघलाकर निकालता है और खटास को हटाता है। जब शरीर में खार अपनी मात्रा से कम और खटास अधिक हो जाता है, तब कुपच और खट्टी डकारें आती हैं। ऐसी अवस्था में यह लाभ करता है। अनेकों रोग शरीर में खटास बढ़ने से होते है। अतः शरीर में सोडियम का रहना आवश्यक है। यह चूना (कैलसियम) को सेल्यूशन की अवस्था में और रक्त को खारी रखता है। यह पुट्ठों को बलवान और शरीर को फुर्तीला रखता है। जोड़ों को साफ़ और लचकदार बनाता है। हड्डियों और दांतों को खराब होने से रोकता है। रक्त में लोहे की सहायता करता है। क़ब्ज़पन दूर करता है। पाचन शक्ति बढ़ाता है। पथरी बनने से रोकता है। और रक्त में से कारबोलिक ऐसिड निकालता है। इसके विना पेट से हाइड्रोक्लोरिक ऐसिड अर्थात् नमक का तेज़ाब नहीं बनता यह तेज़ाब गैस्ट्रिक जूस का बड़ा भाग है। और इसकी सहायता से ही प्रोटीन पचती है और कीटाणु शरीर में प्रवेश नहीं कर पाते। हमारे पसीने के द्वारा बहुत सा नमक निकलता रहता है उसकी पूर्ति तथा

उपरोक्त कार्यों के लिये निम्नलिखित पदार्थों के उपयोग से इसे शरीर में बनाए रखने का प्रयत्न करना चाहिये –

दूध, शलजम, सेब, चुकन्दर, मूली, खीरा, बन्द गोभी, पालक, किशमिश, गाजर, आलू बुखारा तथा अन्य साग बथुआ इत्यादि।

4. लोहा (आईरन Iron) यह रक्त का बड़ा आवश्यक अंग है। यह शरीर को गर्मी देता है। रोगों के रोकने की शक्ति उत्पन्न करता है। रक्त को लाल और मस्तिष्क को चैतन्य बनाता है। ओषजन के साथ मिलकर रक्त को खूब साफ करता है और मनुष्य में आशावाद प्रसन्नता और सफलता की तरंग उत्पन्न करता है। हाथ पैरों का ठंडा रहना, चेहरे का रंग पीला होना और चिड़चिड़ा स्वभाव यह प्रगट करता है कि शरीर में लोहे की कमी है। जिस प्रकार दीवार में लोहे की सलाखें लगा देने से वह बहुत मज़बूत हो जाता है। इसी प्रकार लोहे का अंश वाला भोजन हमारे शरीर को लोहा जैसा मज़बूत बना देता है शरीर को नित्य प्रति 1/8 ग्रेन लोहा भोजन में मिलना चाहिए। हमारी भारतीय सभ्यता में लोहे की कड़ाही करछुल रखने तथा उससे साग तरकारी बनाने और दूध गरम करने का रिवाज प्राचीन काल से चला आता है। उसके द्वारा बहुत सा लोहा बिना कुछ व्यायाम किये ही हमारे शरीर में पहुंच जाता है। इस रिवाज को तोड़कर एलुमिनियम इत्यादि हानिकारक धातुओं का रिवाज न डालना चाहिए। लोहा निम्न पदार्थों में पाया जाता है:–

दूध, बादाम, खजूर, छुहारा, अंजीर, आलू बुखारा, किशमिश, मुनक्का, अखरोट, लाल मूली, काली गाजर, बन्द गोभी, स्टावरी, केला इत्यादि।

5. पोटाशियम (Potassium) की कमी से यकृत की खराबी, क़ब्ज़ तथा फुंसियां उत्पन्न होती हैं और क्षत देर से भरते हैं। यह तीव्र खार है, शरीर की शुद्धि करता है और शरीर में विद्युत की भांति चुस्ती लाता है। पुट्ठों और जोड़ों को लचकदार और बलवान बनाता है दुबले, पतले मरियल से युवकों में

पोटेशियम की कमी होती है। पोटेशियम ओषजन को खींचकर शरीर में लाता है। इसकी कमी से जुकाम हो जाता है यह दूध, टमाटर, शलजम, अनन्नास, आलू बुखारा, नींबू, संतरा, चुकन्दर, शफतालू, नाशपाती, बन्द गोभी, करेला, सौंफ, सोया, पालक, मूली, गाजर (ऊपर का भाग पत्ती सहित), स्टावरी तथा छिलके सहित आलू में पाया जाता है।

6. सल्फर (गन्धक) की कमी से भी यकृत दूषित होता है और शरीर में विकार एकत्रित होते हैं। जब यह शरीर में होता है तो शरीर में चुस्ती आती है। और यकृत से पित्त अधिक निकलता है। शरीर में गर्मी और शक्ति उत्पन्न होती है। त्वचा को साफ़ करके सुन्दर बनाता है और बालों को बढ़ाता है। जो स्त्रियां अपने बालों को खूब लम्बा करना चाहती हैं, उनको चाहिए कि ऐसा भोजन करें जिसमें गंधक अधिक हो। यह छूत के रोगों के आक्रमण से बचाता है और शरीर से विकारों को निकालता है। गंधक शरीर में फ़ासफ़ोरस के प्रभाव को स्थिर रखता है। मोटे मनुष्यों को इसकी और भी आवश्यकता है। अथवा त्वचा में रोग और गठिया का रोग उत्पन्न हो जाता है। अधिक समय तक त्वचा के रोग रहने से घातक रोग क्षय इत्यादि उत्पन्न हो सकते हैं। यह इन पदार्थों में मिलता है:–

शलजम, पालक, मूली, शफतालू, बिना छना आटा, संतरा। सरसों के तेल में गंधक मिला कर मलने से यह शरीर में प्रवेश कर जाती है।

7. आयोडीन (iodine) की कमी से गिल्टियों के रोग होते हैं। शरीर में विकार एकत्रित होते हैं। यह शरीर का एक आवश्यक भाग है। यह कीड़ों को मारता है। दातों को साफ़ करता है। पीव पड़ने को रोकता है। हर अवस्था में इसकी आवश्यकता रहती है। जिन बालकों में इसकी न्यूनता होती है वह अधिक रोगी रहते हैं। समुद्र किनारे रहने वालों के शरीर में यह अधिक होती है और जिनके शरीर में इसकी अधिकता होती है वह कम रोगी होते हैं। महाराज शिवाजी, महाराणा प्रताप वीर शिरोमणि हरीसिंह नलवा जैसे शूरों

में आयोडीन की ही अधिकता थी। यह शरीर में गिल्टियों के कार्य को अधिक करती है। यह बालों को बढ़ाती और उनकी स्याही स्थिर रखती है, जब यह गिल्टियां सुस्त हो जाती हैं तब शरीर की अन्य गिल्टियां भी सुस्त हो जाती हैं। इस से मस्तिष्क में नवीन नवीन आविष्कार सोचने की शक्ति उत्पन्न होती है। डाक्टरों ने परीक्षण किये हैं कि यदि किसी मनुष्य को थाईरायड ग्रन्थि (Thyroid Glands) खिलाने के पश्चात कोई विष दिया जावे तो उस पर विष का प्रभाव न हो। अमेरिका में जो वृद्धों को युवा बनाने की तरकीब का प्रयत्न किया जा रहा है वह भी इसी थाईराइड ग्रन्थि के आधार पर है और इसमें आयोडीन की ही आवश्यकता है। यह गाजर, आलू, बन्दगोभी, नाशपाती, अनन्नास, दूध, और समुद्र के भीतर उत्पन्न होनेवाली घास इत्यादि में मिलता है।

8. क्लोरीन (chlorine) यह शरीर का धोबी है अर्थात मैल की सफाई करता है। विशेषकर पेट और आँतों की। इसकी कमी से शरीर में बहुत अधिक मात्रा में विकार एकत्रित होते हैं। यह चरवी को घटा कर विष को मारता और कोषों (cells) को तेज़ करता है मल को निकालता और अलब्यूमन को तोड़ता है। पाचन में सहायता देता है। इसकी कमी से जुकाम हो जाता है और पेट फूल जाता है, चित्त उदास रहता है और मनुष्य चिड़चिड़ा हो जाता है। दांतों से से रक्त आना क्लोरीन की कमी को प्रगट करता है। पर यदि शरीर में क्लोरीन की आवश्यकता से अधिक मात्रा बढ़ जावे तो भय और कायरता उत्पन्न होती है। यह गाजर, टमाटर, पालक, बकरी के दूध, मूली, बन्द गोभी, खजूर, नींबू, अनन्नास, नारियल और बिना छने आटे में मिलता है।

9. मैगनेशियम (Magnesium) की कमी से नाड़ियों की खराबी बेचैनी और खून में खटाई की मात्रा अधिक होती है तथा क़ब्ज़ और मरोड़ उत्पन्न होती है। शरीर के किसी भी भाग में अधिक दर्द हो तो समझो इसकी कमी है।

फासफोरस और कैलशियम के साथ मिल कर यह हड्डियों, दाँतों और खोपड़ी को बलवान बनाता है। बायोकेमिक चिकित्सा विधि में जब पेट में तीव्र पीड़ा होती है ऐंठन होती है अथवा किसी अन्य अंग में ऐंठन दर्द होता है यहां तक कि जब स्त्रियों को मासिक धर्म में कमी व ऐंठन का दर्द हो तो बायोकैमिक औषधि मगनेशिया फ़ास 3x की 5 ग्रेन दवा गरम पानी के साथ देने से तुरन्त लाभ प्रतीत होता है। यह इन चीजों में पाया जाता है:– अंजीर, पालक, अंगूर, संतरा, रसभरी, खट्टे सेब, टमाटर, आलू बुखारा, किशमिश, नींबू खजूर, बन्द गोभी, चुकन्दर, बादाम।

उपरोक्त खनिज पदार्थों के अतिरिक्त दो वस्तुओं का और उल्लेख किया जाना है जिनका भोजन से सम्बन्ध है।

1. ओषजन (Oxygen) यद्यपि यह गैस है पर भोजन से भी प्राप्त होती है। यह रक्त को साफ़ करती शरीर में गरमी और जीवन प्रदान करती है। उत्साह और उमंग को बढ़ाती है। भीतर के मैले को जला देती है। इसकी कमी से रक्त पीला पड़ जाता है और निर्बलता हो जाती है। जिनके शरीर में ओषजन कम हो जाता है उनको सुस्ती घेरे रहती है। प्रतिश्याय (जुकाम) प्रायः होता और खांसी हो जाती है और बहुत समय तक कमी रहने से क्षय रोग हो जाता है। इसी को अधिक मात्रा में प्राप्त करने के लिए रोगी पहाड़ पर अथवा समुद्र की वायु लेने को भेजे जाते हैं। पहाड़ पर चीड़ के वृक्षों में बहुत ओषजन होता है। पीपल, नीम, और युकलिपटस के वृक्षों के नीचे रहने से ओषजन बहुत मिलता है। इसी कारण प्राचीन समय से पीपल का वृक्ष पवित्र माना जाता है और हरे वृक्ष का काटना पाप बताते हैं। नियम पूर्वक हवन यज्ञ करने से ओषजन बहुत प्राप्त होता है। खुले मैदान में व्यायाम और प्राणायाम करने से भी अधिक मात्रा में हमारे शरीर में पहुँच जाता है।
2. रेडियम (Radium) आधुनिक काल में यह अभी थोड़े समय से ही ज्ञात हुआ है। इसका सब से बड़ा गुण क्षतों को भरना है। अभी तक इसके अधिक

परीक्षण नहीं हो पाए, पर यह ज्ञात हुआ है कि यह गाजर में बहुत है। खेत से उखाड़ साफ़ करके तुरन्त गाजर खाना उन लोगों को अधिक हितकर है जिनके शरीर में किसी प्रकार का क्षत है। इस प्रकार विटामिन और तत्व के आधार पर हम अपने अनुकूल हितकारी भोजन चुन कर स्वस्थ अवस्था में स्वस्थ रह सकते हैं और रोगी अवस्था में केवल भोजन सुधार से बिना विषैली औषधियों के रोग दूर कर सकते हैं। जिस से यह बात भी हमारी समझ में आ जावेगी कि रोग का उत्पन्न होना भी हमारे अज्ञानमय कर्मों का परिणाम है जो ऊटपटांग भोजन करके हम किया करते हैं।

उपदेश (10)

हमारे भोजन के विभाग

हमारे शरीर को आक्सीजन, हाइड्रोजन, कारबन और नाइट्रोजन की अधिक आवश्यकता रहती है अतः भोजन में भी इन ही पदार्थों की अधिक आवश्यकता है इनमें से आक्सीजन और हाइड्रोजन तो वायु और जल द्वारा हमारे शरीर में बहुत कुछ पहुंच जाता है। अतः भोजन में अधिकतया हमें कारबन और नाइट्रोजन की आवश्यकता रहती है। दूध और गेहूं इत्यादि नाइट्रोजनी और चावल और मिष्टान खांड इत्यादि हमारे भोजन में कारबन वाले पदार्थ विशेष रूप से हैं। किसी मनुष्य का स्वास्थ्य बिना इस प्रकार के भोजन के स्थिर नहीं रह सकता इसी कारण प्राचीनकाल से यही पदार्थ हमारे भोजन के मुख्य अंग रहे हैं पर इसके साथ ही कुछ चिकनाई कुछ प्राकृतिक नमक इत्यादि की भी आवश्यकता पड़ती है इसी कारण घी, फल, सब्जी खाने का भी रिवाज रहा है। आधुनिक विद्वान भी इस विषय में इसी निर्णय पर पहुंचे अतः उन्होंने भोजन को निम्नलिखित 5 भागों में बाँटा है–

1. प्रोटीन अर्थात मांस बनाने वाला भोजन।
2. चिकनाई घी, तेल (फैट) इत्यादि।
3. कार्बोहायड्रेट अर्थात शकर और श्वेतसार (निशास्ता) वाला भोजन।
4. नमक।
5. जल।

इनका विवरण इस प्रकार है :–

1. प्रोटीन से हमारे शरीर के रग, पट्ठे, मांस इत्यादि बनते हैं जिससे शरीर में शक्ति आती है और उसका ताप भी ठीक रहता है। यह गेहूं, मूँग, मटर, दूध,

दही इत्यादि तथा फल व सब्जी से मिलता है। दूध की प्रोटीन सर्व श्रेष्ठ होती है।

2. चिकनाई घी, तेल इत्यादि इनमें अधिक भाग कारबन का होता है। यह शरीर में गर्मी व शक्ति उत्पन्न करने के अतिरिक्त इसे मोटा भी करती है। पर शक्ति से अधिक खाने से पाचन विकार होकर दस्त आने लगते हैं। इसलिये न तो धन के लोभ में इन पदार्थों के खाने में कृपणता से काम लेना चाहिए, और न ही स्वाद के वशीभूत होकर ऐसी अधिकता करनी चाहिए कि रोग का कारण बने। आजकल तो जन साधारण को इन पदार्थों का शुद्ध रूप में प्राप्त होना दुर्लभ हो गया है इसी कारण क्षय इत्यादि रोग बढ़ रहे हैं। जिसके लिए देश में गऊ धन बढ़ाने का प्रत्येक व्यक्ति को उद्योग करना चाहिए।

3. कारबोहाइड्रेट (carbohydrates) इस प्रकार का भोजन भी शरीर में शक्ति और ताप उत्पन्न करता है। पर इसकी विशेषता यह है कि यह उपरोक्त भोजन की अपेक्षा शीघ्र पच जाता है। यह सब मीठे फलों, चावल, अखरोट इत्यादि से मिल सकता है। देशी खंडसारी शकर में यह शत प्रतिशत होता है। पर मशीन की शकर आवश्यकता से अधिक साफ़ करने के कारण और उसके विटामिन जल जाने के कारण हानिकारक हो जाती है। खंडसारी शकर तथा गुड़ में यह दोष नहीं आने पाता। गुड़ आंत को शक्ति देता है तथा रेचक है।

4. नमक – प्रकृति ने यह पदार्थ सब्जी तथा फलों में ऐसी सूक्ष्म अवस्था में रखे हैं कि यदि उस नमक से ही हमारा काम चल जाये तो हम बहुत सी व्याधियों से मुक्त रहें। प्राचीन काल में बहुत से ऋषि मुनि कंद, मूल, फल खाकर सैकड़ों वर्ष तक निरोग जीवन धारण करते थे। पर आज कल जब फल और सब्जी इतनी महंगी है और हमारा स्वाद भी बिगड़ चुका है, बिना ऊपरी नमक के हमारा काम नहीं चलता। इन नमकों में सर्व श्रेष्ठ सेंधा

नमक है। जिसे लाहौरी अथवा फलाहारी नमक भी कहते हैं। जो बड़े बड़े ढ़ेलों में बाज़ार में बिकता है। पर यह याद रखना चाहिए कि केवल ऊपरी नमक से हमारा स्वास्थ्य ठीक नहीं रह सकता उसके लिए हमें फिर भी भोजन में फल और तरकारी की आवश्यकता रहेगी अन्यथा हमारा स्वास्थ्य ठीक न रह सकेगा।

5. जल के द्‌वारा भोजन का रस, रक्त इत्यादि शरीर के हर अंग में पहुंचता है और इस से पाचन में सहायता मिलती है। शरीर के विकार इसके द्‌वारा मल मूत्र व पसीना के रूप में शरीर से बाहर निकलते हैं। यदि यह विकार शरीर से न निकलें तो हम जीवित न रह सकें। अतः हमको जल से डरना न चाहिए। किन्तु उससे लाभ उठाने के लिए शुद्‌ध जल इस विचार से पीना चाहिए कि वह हमें आरोग्य रखेगा। इस सम्बन्ध में जल सम्बन्धी उपदेश पढ़ें।

उपदेश (11)

भोजन की सूची पाचन विचार से

इस उपदेश में यह बताया जायेगा कि कौन सा भोजन सुगमता से और शीघ्र पचता है तथा कौन देर में।

1. **सब से सुगमता से पचनेवाले पदार्थ**

   संतरा, अनार, अंगूर, मुसम्मी, मीठा नीबू, कागज़ी नीबू, सेब, अनन्नास, तथा अन्य फलों का रस। रसाहार निर्वल लोगों के लिये सर्व श्रेष्ठ है।

2. **इस से कुछ कठिनता से पचने वाले पदार्थ**

   फल – नाशपाती, आलू बुखारा, लीची, आड़ू, कसेरू, आंवला, खिन्नी, रसमरी, आम, (पतले रस के), अनन्नास, स्टावरी, लुकाट, शहतूत, अमरूद, खीरा, खरबूजा इत्यादि। जिन फलों में केवल रस होता है वह बहुत सुगमता से पचते हैं जिनमें गूदा होता है पर वह गूदा मुँह में जाकर रस बन जाता है वह कुछ कठिनता से और जिनका गूदा ठोस रहता है जैसे अमरूद वह उससे कुछ अधिक कठिनता से पचते हैं। कुछ फल स्वभाव से ही कुछ कठिनता से पचते हैं जैसे केला, सिंघाड़ा, ककड़ी, तरबूज़ इत्यादि। पर अन्न की अपेक्षा सब फल सुगमता से पचते हैं और सात्विक विचार बनाते हैं।

3. **सुगमता से पचनेवाली सब्जियां**

   परवल, लौकी, पालक बथुआ, चौलाई, शलजम, गाजर, पपीता टमाटर तुरई का फूल, लसौड़ा, सिंगरी, चुकन्दर इत्यादि

4. **कठिनता से पचनेवाली सब्जियां**

   घुइया, रतालू, आलू, गोभी, सेम, सेमा, कद्दू, भिन्डी, करेला पिदारा, बूट इत्यादि

सुगमता से पचनेवाले भोजन

गेंहू का दलिया, मूंग की पतली खिचड़ी, दूध चावल, दूध, माठा, दही चावल, मधु, अरारोट, सब्जियों का रस, धान की खील, लाई की खीर, रामदाने की खीर। साधारण भोजन - दाल, रोटी, चीला, खिचड़ी, इत्यादि।

पौष्टिक भोजन जो कुछ कठिनता से पचता है पर शरद ऋतु में जब अग्नि तीव्र होती है स्वस्थ मनुष्य को खाना हितकर है। हलुवा, गाढ़ी खीर, खोया, मिठाई, पकवान, पूरी-कचौड़ी, मेवा, पाक लड्डू, तिल के पदार्थ, गाजर का हलुवा, मुरब्बा, छौंका बादाम, खरबूजे की मींग, उर्द के लड्डू इत्यादि।

भोजन सम्बन्धी आयुर्वेद का मत

आयुर्वेद के मत से आहार 6 प्रकार का होता है।

1. चूष्य - जो चूसा जाये जैसे गन्ना, अनार, संतरा, मुसम्मी, नींबू इत्यादि।
2. पेय - जो पिया जाये जैसे दूध, शरबत फलों के रस इत्यादि।
3. लेहय - गाढ़ी चीज़ जो पी व चाटी जाये जैसे सत्तू, शिकरन इत्यादि।
4. भोज्य - खाने की मुलायम चीज़ जैसे दाल चावल, पतली मुलायम खिचड़ी, लपसी इत्यादि।
5. भक्ष्य - खाने की ठोस चीज़ जैसे लड्डू, बालूशाही, मठरी इत्यादि।
6. चर्व्य - चबाने की चीज़ जैसे चना, चिवड़ा इत्यादि।

यह सब पदार्थ उत्तरोत्तर भारी होते हैं और भारी चीज़ देर में पचती है। चूष्य सब से हलका होता है और सब से शीघ्र कम समय में और आमाशय पर कम से कम भार डाले पच जाता है। उससे अधिक भारी पेय और उससे अधिक भारी लेह्य होता है।

आयुर्वेद का दूसरा सिद्धान्त यह है कि आहार में 6 रस होते हैं और प्रत्येक रस में प्रकृति के पांच तत्वों में से कोई तत्व अधिक होता है। उसी के अनुसार उस के भिन्न भिन्न गुण होते हैं। उन का विवरण इस प्रकार है। नाम रस / कौन तत्व अधिक है / सामान्य गुण

क्रमांक	**नाम रस**	**तत्व जो अधिक हैं**	**सामान्य गुण**
1	मीठा	पृथ्वी, जल	ठंडा, नेत्रों को हितकारक, वात पित्त को शान्त करनेवाला और बलकारक है। इसका अधिक प्रयोग मंदाग्नि उत्पन्न करता है।
2	नमक	अग्नि, जल	दस्त को साफ़ लानेवाला, भूख को बढ़ाने वाला, शरीर को कोमल करनेवाला, और वात रोगों को नाश करने वाला है। अधिक सेवन से आँख को हानि पहुँचती है।
3	खट्टा	पृथ्वी, अग्नि	ठंडा, पाक में गर्म, पाचक रुचि का बढ़ाने वाला और सुस्ती लाने वाला है। इसी कारण विद्यार्थियों को इसका सेवन करना मना है। अधिक सेवन से निर्बलता होती है और वीर्य का नाश होता है क्योंकि यह वीर्य को पतला करता है। आमले के भीतर जो खट्टापन है वह इस दोष से रहित है।
4	चरपरा	अग्नि, वायु	गरम, कफ़ रोगों का नाश करने वाला, पाचन शक्ति को बढ़ाने वाला रूखा

			और रुचिकारक है। अधिक सेवन से वायु के अनेक रोग उत्पन्न होते हैं।
5	कसैला	पृथ्वी, वायु	ठंडा, शरीर को पुष्ट करनेवाला दाँतों को मज़बूत करनेवाला और कब्ज़ करता है।
6	कड़वा		आकाश, वायु / ठंडा, हलका, रूखा ज्वर को हितकारक कृमि और पित्त को हटाने वाला है।

जिस वस्तु में जो रस अधिक होगा उसमें उसी रस के गुण अधिक होंगे। भोजन के लिये जितने पदार्थ भगवान ने बनाए हैं वह सबही उत्तम हैं, पर सब मनुष्यों पर उन का प्रभाव एक सा नहीं होता भिन्न भिन्न प्रकृति के मनुष्यों पर भिन्न भिन्न प्रभाव होता है। अतः अपनी प्रकृति के अनुसार भोजन करना चाहिए। ऋतु के कारण भी भोजन में परिवर्तन करना होता है। जैसे वर्षा ऋतु में अग्नि मंद हो जाती है उस समय अधिक पौष्टिक पदार्थ लड्डू, मेवा इत्यादि हानिकारक और हलकी चीज़ फल, मूंग की दाल रोटी इत्यादि लाभदायक हैं। पर शरद ऋतु में अग्नि प्रदीप्त होती है उस समय यदि पौष्टिक पदार्थ न खाकर केवल हलकी चीज़ खाई जायेगी तो अग्नि मंद हो जावेगी और मनुष्य निर्बल हो जावेगा। प्रकृति और ऋतु का वर्णन अगले उपदेशों में किया जावेगा। भोजन सम्बन्धी अन्य नियमों का वर्णन अगले उपदेश में किया जायेगा।

उपदेश (12)

भोजन सम्बन्धी फुटकर नियम

1. यह सर्वदा ध्यान में रखना चाहिए कि भोजन करने का उद्देश्य शरीर को पुष्ट बनाना और उसकी क्षति पूरी करना है; न कि केवल स्वाद प्राप्त करना अथवा नियत समय पर जब भोजन सामने आये अनिवार्य रूप से खा लेना। जब शरीर को भोजन की आवश्यकता होती है तो अवश्य ही भूख लगती है। और न खाने पर क्षण प्रति क्षण वह बढ़ती जाती है। ऐसी अवस्था में जो भी भोजन किया जाता है चाहे वह कितना ही सादा हो वह स्वादिष्ट ही लगता है स्वस्थ अवस्था में ऐसे समय भोजन न करने से हानि है, क्योंकि ऐसे समय न खाने से जठराग्नि तीव्र होकर शरीर की वसा को खाने लगती है। पर बिना भूख खाना रोग उत्पन्न करता है।

2. हर मनुष्य को अपने सुविधा के अनुसार भोजन का समय नियत कर लेना चाहिए। उस समय स्वभावतः भूख लग ही आवेगी। किसी दिन न लगे तो यह समझना चाहिए कि खाया हुआ भोजन अभी पचा नहीं अतः उस समय न खाना हितकर है। दिन का भोजन १२ बजे से पूर्व और सायंकाल का गरमी में ८ बजे और सरदी में ७ बजे तक खा लेना अच्छा है। यह हमारे देश के अनुकूल समय है। अन्य देशों की नक़ल में बालकों की भांति चार चार बार खाना देश के खाद्य पदार्थ और अपने स्वास्थ्य को नष्ट करना है। हां गऊ का धारोष्ण दूध अथवा फलों का रस इच्छानुसार किसी समय भी प्रयोग किया जा सकता है।

3. भोजन का स्थान शुद्ध, हवादार और देखने में सुन्दर हो, हरियाली सामने हो तो और भी उत्तम है। उस समय वही व्यक्ति तुम्हारे सामने होना चाहिए जिसे तुम प्यार करते हो और वह तुम्हें प्यार करता है परोसने वाला भी

ऐसा ही होना चाहिए। माता का परोसा भोजन सब से अधिक फलदायक होता है।

4. भोजन के साथ पानी अथवा कोई अन्य पतला पदार्थ अधिक मात्रा में प्रयोग नहीं करना चाहिए। थोड़े में हानि नहीं है।

5. भोजन खूब चबा चबा कर धीरे धीरे बड़ी निश्चिन्तता के साथ करना चाहिए। पांच मिनट में शीघ्रता के साथ निगल लेना ठीक नहीं। दूध, माठा, फलों के रस भी साँख बांध कर एक साथ नहीं पीना चाहिए किन्तु धीरे धीरे घूंट घूंट करके और चूसकर पीना चाहिए उस समय चित्त भी प्रसन्न होना चाहिए। बात-चीत हो तो प्रसन्नता और उपहास की, क्रोध की अवस्था में अथवा किसी गम्भीर ही विषय पर बात-चीत करते हुए भोजन करना हानिकारक है।

6. भोजन के समय ही दूध पीना है तो भोजन के 20 मिनट उपरांत पीने से शीघ्र पचता है। हां दूध चावल खाना है तो साथ खा सकते हैं।

7. भोजन बनाने का कार्य केवल सेवकों पर न छोड़ गृहणी को अपने हाथ से अथवा अपने प्रबन्ध से करना चाहिए और बनाने की शुद्धताई का पूरा ध्यान रखना चाहिए। शौचालय इत्यादि के निकट भोजन बनाने का स्थान नहीं होना चाहिए।

8. भोजन में मसालों का प्रयोग उचित मात्रा में होना चाहिए। न तो स्वादवश अति हो और न उन विदेशियों के अनुकरण में उबाल कर खाना चाहिए जो डींग तो अपने सभ्य होने की मारते हैं पर जंगलियों की भांति मांस आग पर सेंक कर नमक लगा कर खाते हैं। पाक विद्या हमारे देश की पुरानी कला है। राजा महाराजा तक इस कला में निपुण होते थे। स्त्रियों का तो यह विशेष गुण रहा है। इसे छोड़ना नहीं चाहिए। जिस चीज़ के लिये जो मसाला नियत है वह वैज्ञानिक ढंग पर है; जैसे घुइया में अजवायन और

काशीफल में मेथी अरहर की दाल में खटाई यह चीजें उन के पाचन में सहायता पहुंचाती हैं। और स्वास्थ्य ठीक रहता है। पर अति करने से जहां मसालों के स्वाद से मूल वस्तु का स्वाद नष्ट हो जाता है वहां स्वास्थ्य का भी नाश होता है। बिना मसाले के रसादार करेला खाना केवल महात्माओं का कार्य है जन साधारण को अनुकरणीय नहीं।

9. भोजन बन चुकने पर अन्न, घी और मिष्ट पदार्थ अग्नि पर होम करने से जहां अनेकों अन्य लाभ हैं वहां उसकी सुगन्धि खाते समय बड़ी उत्तम प्रतीत होती स्वास्थ्य और प्रसन्नता देने वाली होती है शास्त्र की परिभाषा में इसे बलिवैश्य देवयज्ञ कहते हैं।

10. भोजन सर्वदा हाथ पैर और मुंह धोकर खाने से शीघ्र पचता है।

11. भोजन खूब चबा कर करने के अनेकों लाभ हैं जैसे :–

(क) जितने समय तक भोजन मुंह में रहता है उस में एक रस (Saliva) जो मुंह की भीतर वाली ग्रन्थियों से रसता है मिलता रहता है। जो भोजन के पचाने में तेज़ाब जैसा कार्य करता है।

(ख) यदि भोजन खूब पिसा हुआ आमाशय में नहीं पहुंचता है तो आमाशय को उसे अधिक पीसना पड़ता है और आमाशय दांतों की भांति हड्डी का बना हुआ नहीं है किन्तु मांस का, अतः उसे जब कोई अधिक कार्य करना पड़ता है तो वह शीघ्र निर्बल हो जाता है और अपने कार्य करने के योग्य नहीं रहता।

(ग) अन्न के भीतर एक पोषण शक्ति छिपी रहती है। जो दांतों से अधिक पीसने पर अधिक उभरती जाती है। अतः इस प्रकार थोड़ा सा ही भोजन अधिक पोषण प्रदान करता है।

(घ) भोजन का स्वाद उसी समय तक प्राप्त होता है जब तक वह मुंह में रहता है। सोचने की बात है कि हम स्वादिष्ट वस्तुओं को प्राप्त करने

और बनाने में तो घंटों क्या जीवन का सारा समय ही लगा दें और जब उस स्वाद आनन्द लेने का समय आये तो पांच दस मिनट में ही चट कर जायें तो क्या लाभ। अतः बुद्धमानी इसी में है कि अधिक समय तक मुंह में रख कर स्वाद का आनन्द उठायें।

(ङ) जिस प्रकार हाथ तब ही बलवान रह सकता है जब उस से उस का काम लिया जावे। इसी प्रकार दांत भी तब ही बलवान बने रहेंगे जब उनसे उन का यथोचित कार्य लिया जावे। क्योंकि कार्य करने से रक्त अधिक मात्रा में उस अंग की ओर आता है और रक्त से ही सब अंगो का पोषण होता है। हां किसी अंग से वह काम लिया जावे जो उस का नहीं है तो वह बिगड़ जाता है। इसी कारण मांस और सुपारी चबाने वालों के दांत खराब हो जाते हैं। पर भोजन न चबाने से दांत निर्बल हो जाते हैं।

12. भोजन बहुत पेट भर कर नहीं करना चाहिए किन्तु पेट कुछ खाली रखना ही हितकर है।

13. भोजन ताज़ा अच्छा होता है बासी खाना ही नहीं चाहिए और बहुत देर का ठंडा भी कम ही पुष्टि देता है। हाँ पकवान कई दिन का भी पुष्टिकारक है।

14. सर्वदा एक ही भोजन करने से उससे अरुचि हो जाती है और अरुचि में किया भोजन पचता नहीं अतः बदल बदल कर भोजन ऐसा बनवाना चाहिए कि देख कर ही रुचि उमड़ आये। “घाटी तले की माटी” वाला सिद्धान्त बैरागियों का है। सांसारिक लोगों को तो भोजन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

15. रात को पेट भर कर भोजन करने के पश्चात तुरन्त न सोना चाहिए। क्योंकि सोते समय पाचन क्रिया धीमी होती है। भोजन करने के २ - ३ घंटा पश्चात सोना अच्छा है।

16. ग्रीष्म ऋतु में भोजन से पूर्व भी स्नान करना अच्छा है पर स्नान करके कम से कम 15 मिनट ईश्वर आराधना में व्यय करके भोजन करना चाहिए और भोजन करने के पश्चात स्नान 3-4 घंटे पश्चात करना चाहिए।

17. प्रत्येक मनुष्य को पृथक पृथक पात्र में भोजन करना चाहिये। एक पात्र में बहुत से लोगों को एक साथ भोजन करने से एक का रोग दूसरे को लग सकता है।

18. भोजन के सब पदार्थ सर्वदा ढक कर रखना चाहिए ताकि न धूल पड़े न मक्खी बैठें।

19. निम्नलिखित पदार्थ एक साथ खाने से कभी हानि हो सकती है अतः इन को साथ २ न खावें :–

    दूध के साथ अचार तथा खट्टे पदार्थ और फल विशेष रूप से खरबूज़ा, तरबूज़, ककड़ी, नींबू, जामुन इत्यादि तथा सब्जी में पालक, बथुआ, मूली, ज़मींकंद इत्यादि दूध के साथ खरबूज़ा खाने से विसूचिका तक हो सकता है।

    उरद के साथ मूली मना है। दही और मूली भी एक साथ नहीं खाये और शहद मूली भी एक साथ नहीं खाये । केला और ताड़ का फल, दूध, दही और मठा के साथ खाना मना है। चावल की खीर तथा मठा एक साथ खाना मना है। मधु और घी समान मात्रा में खाना मना है। दूध तो पृथक ही पिया जावे तो अच्छा है। भोजन के साथ पियें तो पहले पड़ताल कर लें कि कोई विरोधी भोजन तो नहीं है। दूध के साथ मुनक्का, किशमिश, खजूर, सेव, संतरा, मुसम्मी बादाम, और पकवान खाया जा सकता है।

20. बालकों और रोगियों को छोड़ कर अन्य लोगों को यथा सम्भव भोजन दो ही समय करना चाहिए। अन्य समय भूख लगे तो दूध या संतरा खा लेना चाहिए ।

21. भोजन करने के पश्चात मुँह दाँत इत्यादि खूब साफ़ कर लेना चाहिए। पान इत्यादि का रोग लगाना अच्छा नहीं। इच्छा ही हो तो भोजन के पश्चात केवल एक बार एक बीड़ा पान अथवा एक दो इलायची खाई जा सकती है।

उपदेश (13)

दूध और मांस

भोजन का विषय समाप्त करने के पूर्व हम पाठकों को एक और आवश्यक बात बता देना चाहते हैं। वह यह कि आदि सृष्टि में लेकर अब तक संसार में दो संस्कृति के मनुष्य पाए जाते हैं। एक देव प्रकृति के आर्य जिनका आचरण वेद के अनुसार होता है। दूसरे पशु प्रकृति के जड़ लोग जो वेद विरुद्ध आचरण करते हैं इन को प्राचीन काल में असुर राक्षसादि नाम से पुकारा जाता था। आर्यों का भोजन दूध, घी, फल, अन्न, और सब्जी रहा है। और इन से भिन्न लोगों का मांस मछली, अंडा, मदिरा और अन्न। अपने भोजन के प्रभाव से आर्य अहिंसक, सत्यवादी, परोपकारी, दयावान, चरित्रवान और प्राकृतिक जीवन बिताने वाले होते हैं। राक्षस, स्वार्थी, कुतर्की, व्यभिचारी, धोखेबाज़, झूठे, चमकीली चीज़ों के पुजारी अप्राकृतिक जीवन बिताने वाले और संसार में अशान्ति फैलाने वाले होते हैं। हमीं में से अपनी रुचि के अनुसार भोजन कर के देव अथवा राक्षस बन सकते हैं भगवान ने हमें विवेक बुद्धि देकर इस के लिये स्वतंत्र कर रक्खा है।

इस विवेक बुद्धि से यह सिद्ध होता है कि मांस मनुष्य का भोजन नहीं। मनुष्य के दांत, आंत, आमाशय इत्यादि कोई ऐसा नहीं बना जो मांस को स्वीकार करता हो। आधुनिक खोज से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि मांस खाने वाली माता के दूध में कोई विटामिन नहीं होते। मांस से जो रोग उत्पन्न होते हैं वह धीरे धीरे बढ़ते रहते हैं। और कभी कभी कई कई वर्ष के पश्चात् प्रगट होते हैं। जिस से मांस खाने वाला रोग का कारण मांस को नहीं समझ पाता। इस में सब से बड़ा दोष यह है कि मनुष्य का स्वभाव झगड़ालू और स्वार्थी हो जाता है जिस के कारण वह जहां दूसरों को दुःख पहुंचाता है वहां स्वयं भी दुखी रहता है। इस कारण मनुष्य की आयु कम हो जाती है और वह उच्च कोटि का मनुष्य नहीं बनता। संसार में जितने दीर्घ जीवी तथा प्रतिभा शाली मनुष्य हुए हैं उन में से

अधिक संख्या उन ही की है जो मांस नहीं खाते थे जैसे भगवान, राम, कृष्ण, शंकर, दयानन्द, बुद्ध, गांधी, रमन, हिटलर और मसौलेनी इत्यादि। मिस्टर वरनार्ड शाह जो इस समय 100 वर्ष के होते हुए भी लकड़ी चीरने और मीलों भ्रमण करने का व्यायाम करते हैं अपने भोजन के विषय में लिखते हैं "मुझे मांस से घृणा है इस का जो प्रभाव हुआ उसे जनता जानती है। मैं मदिरा नहीं पीता और तम्बाकू के सम्बन्ध में मुझ से पूछना मेरी हतक करना है ।" इसी प्रकार टर्की का जारुपाशा ने जो सन् 1934 ई० में 161 वर्ष की आयु में मरा है लोगों के पूछने पर बताया कि "मैं दीर्घ जीवन की कोई औषधि नहीं जानता, किन्तु इस में कोई शंका नहीं कि पुरुषार्थी और संयमी गृहस्थी होने के कारण ही मैंने इतनी आयु पाई है। मांस, मदिरा, तम्बाकू को मैंने छुआ तक नहीं और ताज़ा दूध, फल व हरी तरकारी मेरे भोजन की विशेषता है मैदान में भ्रमण तथा दिन में केवल दो बार खाना भी नियम में रहा है इत्यादि" मांस के अप्राकृतिक होने का सब से बड़ा प्रमाण यह है कि किसी मनुष्य को 20 वर्ष की आयु तक यदि संतरा और मांस दोनों न खिलाए तथा दिखाए जावें और फिर एक साथ दोनों पदार्थ दिए जावें तो संतरा से वह प्रेम करेगा और मांस को घृणा। क्यों कि मनुष्य की कोई इन्द्रिय उसे स्वीकार नहीं करती। आज जो भांति भांति के रोगों की भरमार है उनके कारणों में एक कारण मांस खाना भी है। अंडे में तो बीसों रोगों के कृमि रहते हैं। जिन लोगों ने अपना स्वभाव और स्वाद बिगाड़ लिया है वह ही इन घृणित चीज़ों को खा सकते हैं स्वच्छ और शुद्ध मनुष्य को तो भोजन समय इन चीज़ों को देखने से भी वमन होने की आशंका है ।

क्योंकि मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन नहीं है। अतः इसे देख कर किसी भी मनुष्य को वैसी प्रफुल्लता नहीं होती जैसी स्वाभाविक भोजन संतरा, आम को देख कर होती है कैसा ही बड़ा मांसाहारी क्यों न हो जब उस का चित्त उदास होता है और मनोरंजन तथा प्रसन्नता के लिये भ्रमण को जाना चाहता है तो कभी भी बूचड़ खाने की ओर जाने की इच्छा नहीं होती। किन्तु प्राकृतिक वृक्ष

व वाटिका को ही खोजता है और उस में लगी नारंगी और संतरा को देख देख कर प्रसन्न होता है। परीक्षण हो चुके हैं। जो मनुष्य मांस खाते है वह शक्ति, साहस और आयु में सर्वदा उन से कम होते हैं जो मांस नहीं खाते। क्योंकि मांस से जो परमाणु, शरीर का पोषण करते हैं वह अधिक समय तक शरीर में ठहर नहीं सकते। पशुओं पर दृष्टिपात करने से भी इस बात की पुष्टि होती है। एक बैल जो केवल दाना घास खाता है ग्रीष्म ऋतु की कड़ी धूप में वोझा उठा कर बीस मील जा सकता है। पर एक कुत्ता, भेड़िया या बाघ गरमी में 2 - 4 मील खाली चलने पर ही हिम्मत हार देता है। मांस खाने से अग्नि मंद होती है। क्योंकि एक साधारण परिश्रम करनेवाले मनुष्य को दो छटाँक मांस पोषक और 1.5 छटाँक अग्निवर्धक पदार्थ नित्य प्रति खाने की आवश्यकता है। तब ही उसकी अग्नि ठीक रह सकती है। पर मांस खाकर इस अनुपात का रखना सम्भव नहीं। क्योंकि यदि मनुष्य 12 छटाँक मांस ही खाले तो लगभग 2.5 छटाँक तो मांस पोषक पदार्थ मिलेगा और 2.5 छटाँक ही अग्नि वर्धक। शेष पानी अथवा व्यर्थ पदार्थ होगा। इस प्रकार अग्नि वर्धक पदार्थ कम पहुंचने से अग्नि मंद होना अनिवार्य है। और यदि मांस इस मात्रा में खाया जावे कि 1.5 छटाँक अग्नि वर्धक पदार्थ पहुंच जाये तो प्रथम तो इतनी मात्रा में खाना ही सम्भव नहीं और यदि खाले तो मांस पोषक पदार्थ इतनी मात्रा में पहुंच जावेगा कि अजीर्ण होकर दस्त आने लगेंगे। जो बढ़कर मृत्यु का कारण भी बन सकते हैं।

राष्ट्रीय दृष्टि से मांस खाना ऐसा ही है, जैसे कोई व्यक्ति अपनी वाटिका में आम और संतरे के वृक्षों को काट काट कर आग में जलाये, संतरे के एक वृक्ष की लकड़ी से वह दो चार समय का भोजन अवश्य बना लेगा। पर बीसों वर्ष उस वृक्ष पर जो संतरे जैसे उत्तम स्वास्थ्यप्रद फल लगते उससे वह व्यक्ति सदा के लिए बंचित हो गया। इस प्रकार एक गाय अथवा बकरी यदि एक नागरिक पाल कर दूध पीता है तो उसके जीवन काल में सैकड़ों मन अन्न जो दूध के स्थान पर खाता है अन्य नागरिकों के लिये छोड़ता है। तथा लगभग एक दर्जन गाय व

बैल राष्ट्र के अन्य लोगों को दे देता है। हज़ारों मन गोबर की खाद राष्ट्र को देता है पर एक मांसाहारी एक पशु को मारकर उस का मांस सौ-पचास आदमी केवल एक समय भोजन कर के देश में रोग और स्वार्थ की प्रवृत्ति बढ़ाएंगे और संसार में अशान्ति उत्पन्न होगी। मांसाहारी उतना पुरुषार्थ भी नहीं कर सकता जितना एक दूध पीने वाला कर सकता है। निद्रा भी उसे अधिक आयेगी और जो आदमी अपने स्वाद के लिये दूसरे की जान ले सकता है वह परोपकारी तो हो ही नहीं सकता। यह सब जानते हैं कि हमारे देश के परतंत्र होने के कारणों में सब से बड़ा कारण देशवासियों का स्वार्थी होना था और अब स्वतंत्र होने पर उसकी उन्नति हो सकती है तो उन्हीं व्यक्तियों के द्वारा होगी जो त्यागी और परोपकारी हैं। यह गुण मांसाहारी में आना असम्भव हैं। अतः मांसाहारी देश पर एक भार रूप ही रहेगा। इतना लिखने के पश्चात अब हम पाठकों की इच्छा पर छोड़ते हैं कि वह इस सम्बन्ध में अपने विषय में जैसा चाहें निर्णय करें। आध्यात्मिक उन्नति और ईश्वर उपासना में मांस के बाधक होने की बात यहां इस कारण नहीं छेड़ी गई कि इस पुस्तक में तो शारीरिक उन्नति का ही प्रसंग चल रहा है। राष्ट्रीय दृष्टि से मांस खाना महा पाप इसलिये भी है कि इसके खाने से हमारे राष्ट्र के लिये हानि होती है। इससे दूध की भी हानि होती है और दूध संसार का सर्व श्रेष्ठ भोजन है। इसे अमृत कहा गया है और अब यह बात आधुनिक वैज्ञानिकों को समझ में भी आ गई है। इसी कारण पाश्चात्य देशों में दूध पीने की प्रथा बढ़ रही है। और अब हमारे देश की अपेक्षा वहाँ अच्छा और सस्ता दूध मिलता है। वास्तव में दूध से भोजन की भूलों का सुधार होता है। यदि भोजन के साथ दूध हो तो भोजन की सब कमी पूरी हो जाती है। दूध आयु को बढ़ाने वाला है। मस्तिष्क को सचेत और परिष्कृत रखता है। जिन बच्चों को लड़कपन में दूध नहीं मिलता बुढ़ापे में उनका मस्तिष्क काम नहीं देता। दूध रोग दूर करने वाला है। शरीर में रोग निवारक शक्ति बढ़ाने वाला है। दूध से बच्चों का वर्धन ठीक होता है। 'चरक' ऋषि कहते हैं– "उपवास किए हुए, मार्ग से थके हुए, बहुत भाषण किए हुए, स्त्री

भोग के अनन्तर, वायु, धूप, तथा अन्य कामों से थके हुए मनुष्य को दूध पीना अमृत के समान गुणकारी है ।" भोजन से जो प्रोटीन बनती है वह भिन्न २ पदार्थों से भिन्न २ प्रकार की बनती है। जैसे गेहूं और चावल की प्रोटीन अच्छी होती है पर वह शरीर पोषण के लिये पर्याप्त नहीं होती। दाल की प्रोटीन बहुत सूक्ष्म खोल के भीतर जिसे सेलुलोज़ कहते हैं वन्द रहती है इस कारण मनुष्य को पचाने में कुछ कठिनता होती है। इसी कारण पाचन विकार के रोगियों को दाल के स्थान में सब्जी खाना अधिक हितकर है। गेहूं की प्रोटीन भी कठिनता से पचती है इसी लिये गेहूं और दाल कच्चे नहीं किन्तु उबाल कर खाने का रिवाज है। शाक तरकारी में बहुत अच्छे प्रकार की प्रोटीन होती है। पर कम मात्रा में मिलती है। बाजरा और मक्का की प्रोटीन घटिया दर्जे की होती है पर दूध की प्रोटीन सब से उत्तम होती है। उसमें प्रोटीन के सब तत्व विद्‌यमान होते हैं और वह पूरी होती है। इस कारण दूध से प्रोटीन की सारी आवश्यकता पूरी हो जाती है। प्रोटीन की आवश्यकता पूरी करने को यदि हम रोटी, चावल, दाल, तरकारी सब ही खायें तब भी हमें सब प्रकार की प्रोटीन नहीं मिलेगी और दूध का स्थान खाली ही रहेगा। अतः भोजन में दूध का होना आवश्यक है। गेहूं का जो अंश हमारे शरीर का भाग नहीं बनता दूध के साथ खाने से वह भी पच जाता है और शरीर का अंग बन जाता है। अर्थात् दूध के साथ खाने से गेहूं की शक्ति भी बढ़ जाती है। एक विशेषता और है अर्थात् मांस और अंडे की प्रोटीन पेट में अधिक पहुंचे तो वह सड़न उत्पन्न करती है जो शरीर के लिये विष के समान है। शाक वर्ग की अधिक मात्रा वैसा विष तो नहीं उत्पन्न करती पर कुछ लाभ भी नहीं करती। पर दूध की प्रोटीन यदि अधिक मात्रा में खाई जाये तो दूध सड़न नहीं उत्पन्न करता किन्तु फर्मेंट अर्थात् सन्धानित होकर लैक्टिक एसिड बनाता है जिससे रोग के कीड़े मर जाते हैं। कैसा उत्तम भोजन है दूध, क्या यह गुण संसार के किसी अन्य भोज्य पदार्थ में मिल सकता है ?

दूध की प्रोटीन शीघ्र पचती है और रक्त में मिल जाने योग्य होती है। पर यह दूध में केवल 4 प्रतिशत होती है। एक युवा पुरुष को कम से कम आधा छटाँक प्रोटीन की आवश्यकता नित्य प्रति होती है। अतः सब प्रोटीन दूध ही से प्राप्त करने को दो सेर दूध पीना चाहिए फिर किसी और प्रोटीन वाले पदार्थ की आवश्यकता नहीं है। इस से सिद्ध होता है कि भोजन के एक अंश प्रोटीन की दृष्टि से दूध सर्वोत्तम पदार्थ है। अब भोजन के दूसरे अंश

स्निग्ध (चिकनाई)

पदार्थों पर विचार कीजिये। जो लोग मोटर, इञ्जन अथवा साईकिल इत्यादि किसी भी मशीन का अनुभव रखते हैं वह जानते हैं कि किसी मशीन को चिकने पदार्थ की कितनी आवश्यकता रहती है। बिना तेल दिए साइकिल भी चलने से इनकार कर देती है। फिर भी उसे घसीटा जावे तो पुर्जे घिस कर टूट जाएगे। यही हल मनुष्य के शरीर का है। क्योंकि वह भी एक मशीन ही है। अतः वह भी स्निग्ध पदार्थ चाहता है। जिस से शक्ति, सुन्दरता प्राप्त होने के साथ आयु भी दीर्घ होती है। साथ ही भगवान ने उसके भीतर स्वाद भी रखा है ऐसा स्वाद है कि करेला जैसा कड़वा और मांस जैसी अप्राकृतिक पदार्थ भी स्निग्ध पदार्थ के सहारे मनुष्य बड़े स्वाद से खा लेता है। राक्षसी भोजन को छोड़ स्निग्ध पदार्थ हमें दूध व तेल से प्राप्त होता है। दूध में 3 से लेकर 5 प्रतिशत तक स्निग्ध पदार्थ घी व मक्खन के रूप में पाया जाता है।

जो गायें यहां सरकारी डेरी फ़ार्म में रखी जाती हैं उनको अप्राकृतिक और दिखावे के ढंग पर रखने के कारण उनके दूध में केवल 3 प्रतिशत चिकनाई मिलती है। विदेशी ढंगों के प्रशंसकों को यह बात पढ़ कर कदाचित आश्चर्य होगा, पर बात बिलकुल सत्य है। देशी गायों में अब भी 5 प्रतिशत घी मिलता है और यदि भगवान कृष्ण जैसे गऊ सेवक हम बन जावें तो यह मात्रा और बढ़ सकती है। तेल और घी में सब से बड़ा अन्तर यह है कि तेल में विटामिन "ए" का नितान्त अभाव है जबकि दूध और घी में प्रचुर मात्रा में है। इस कारण घी तथा

मक्खन आंख के लिये अत्यन्त लाभदायक हैं और तेल हानिकारक। मस्तिष्क की शक्ति के लिये चिकनाई की सब से अधिक आवश्यकता है। तेल खाने से मस्तिष्क में तामसिक विचार उत्पन्न होते हैं और मन चंचल रहता है। सूक्ष्म तथा आध्यात्मिक विचारों में उलझन उत्पन्न होती है। त्वचा का रंग भी काला पड़ता है। पर घी मक्खन पूर्णतया सात्विक भोजन है। इस से बुद्धि तीव्र होती है और मन आध्यात्मिक विचारों की ओर जाता है। पढ़ने लिखने में खूब मन लगता है और यह आयु को बढ़ाता है। स्वाद में भी तेल इसकी बराबरी नहीं कर सकता। इसी कारण तेल का पकवान और पूरी नहीं खाते हैं जो किसी लाचारी वश घी के अधिक दाम नहीं दे सकते। योगी जन भी दूध और मक्खन ही पसंद करते हैं क्योंकि प्राणायाम में इनकी अधिक आवश्यकता है। चिकनाई के विचार से भी दूध ही सर्व श्रेष्ठ भोजन है। अब भोजन के तीसरे आवश्यक अंग

कार्बोहाइड्रेट

पर विचार करना चाहिए जो हमारी शक्ति के लिये बहुत ही आवश्यक है। इसमें दो पदार्थ सम्मिलित हैं चीनी (Sugar) और माड़ी (Starch) चीनी तो हमारे शरीर में मिल जाती है पर माड़ी नहीं मिलती, यह चीनी पौधे अपने शरीर में उत्पन्न करते हैं। और जब इतनी चीनी उत्पन्न हो जाती है कि उन के शरीर में व्यय नहीं हो सकती तब वह जमा होने लगती है। चीनी के रूप में नहीं, किन्तु स्टार्च के रूप में में। जब पौधे को एकत्रित स्टार्च को व्यय करने की आवश्यकता पड़ती है तब रासायनिक परिवर्तन होकर स्टार्च चीनी में बदल दिया जाता है। गन्ने आदि की चीनी हमारे पेट के अन्दर पित्तरस के साथ मिल कर ही ग्लूकोज़ या पचने वाली चीनी में बदलती है तभी पच जाती है। यह पैत्तिक रस यकृत में बनता है। अतः जिन का यकृत रोगी होता है उनको चीनी खाने को मना किया जाता है। क्योंकि चीनी जब तक ग्लूकोज़ न बने रक्त में मिल नहीं सकती और ग्लूकोज़ बनाने को पित्तरस चाहिए। जो यकृत दूषित होने से नहीं बन पाता। मशीन की शकर आवश्यकता से अधिक साफ़ होने के कारण और भी नहीं पच

पाती और जलन उत्पन्न करती है। तथा कास्टिक का प्रभाव भी रखती है। खंडसार की चीनी जो सिन्वार से बनाई जाती है उससे बहुत उत्तम होती है क्योंकि सिन्वार में विटामिन बहुत होता है वह चीनी में आ जाता है और वह मशीन की चीनी की अपेक्षा आसानी से पच जाती है पर दूध की चीनी की बराबरी यह भी नहीं कर सकती। दूध की चीनी कम मिठास के कारण बहुत शीघ्र पच जाती है। दूध की चीनी में सब से बड़ा गुण यह है कि उसके फर्मेंट होने पर उससे लैकटिक एसिड (दुग्धाम्ल) बन जाता है जो हमारी आँतों के लिये बड़ा गुणकारी है। क्योंकि यह भूख और पाचन शक्ति बढ़ाता है और आँतों के भीतर के हानिकारक कीटाणुओं का सर्वनाश करता है। जिन बालकों की पाचन शक्ति निर्बल होती है और गाय का दूध बिना मीठा डाले नहीं पीते उनको गन्ने की चीनी न डाल कर दूध की चीनी (Sugar of Milk) डालने का आदेश डाक्टर लोग करते हैं। जिस प्रकार सब से श्रेष्ठ प्रोटीन दूध के भीतर है उसी प्रकार सब से उत्तम चीनी भी दूध के भीतर है। भोजन के पांच अंशों में से तीन आवश्यक अंश तो हो गए अब रहे दो अंश पानी व लवण। जिसमें–

पानी

के विषय में तो केवल इतना ही कहना है कि जितने भी जल संसार में मिलते हैं उनमें सब से श्रेष्ठ जल भागीरथी गंगा का है। पर दूध के भीतर जो जल मिलता है वह उससे भी श्रेष्ठ है। केवल गऊ दुग्ध का भोजन करने वाले यदि और जल न भी पीवें तब भी रोगी नहीं हो सकते। रह गए

“खनिज लवण”

वह भी कितनी उत्तमता से दूध में हैं यह हम आगे बताते हैं। इससे पूर्व बताया जा चुका है कि नमकों के बिना भी हम स्वस्थ नहीं रह सकते। जब हमारी भूल से चूना, लोह इत्यादि की शरीर में कमी हो जाती है तो डाक्टर लोग औषधि रूप में इन चीज़ों को देकर उस कमी को पूरा करते हैं। पर यह ऐसा ही है जैसे

टूटी दीवार पर सीमेन्ट कर देने से कुछ मज़बूत तो अवश्य हो जाती है पर भूचाल के एक झटके से ही दीवार गिर पड़ती है। औषधि की अपेक्षा भोजन के साथ जो चूना, लोहा और फ़ासफ़ोरस पहुंच कर हमारे अंगों को पुष्ट करेंगे वह स्थाई और वास्तविक शक्ति होगी। पहले

कैल्शियम (चूना)

को लीजिये यह गाय के दूध में 0.12 प्रतिशत होता है। क्योंकि इससे हड्डी बनती है अतः छोटे बच्चों, गर्भवती स्त्री और प्रसूता स्त्री को इसकी बड़ी आवश्यकता है। शिशु माता के दूध से भी कैल्शियम ग्रहण करता है अतः दूध पिलाने वाली स्त्री को इसकी और भी आवश्यकता है। एक युवा पुरुष को कम से कम आध सेर नित्य दूध मिलने से चूना की कमी पूरी हो सकती है। छोटे बालकों को और भी अधिक चाहिए। जिन बालकों को पूरा चूना नहीं मिलता उनकी हड्डियाँ निर्बल हो जाती हैं और चूना पहुँचाने का सर्व श्रेष्ठ साधन दूध है। इसी प्रकार–

फ़ासफ़ोरस

भी एक आवश्यक लवण है जिससे हड्डी भी बनती है और मस्तिष्क भी बनता है। यह गाय के दूध में 0.09 प्रतिशत होता है। तीसरा लवण–

लोहा

है। जिसके कारण ही हमारे रक्त में लालिमा आती है। स्त्रियों को इसकी और भी अधिक आवश्यकता है क्योंकि मासिक धर्म, गर्भ अवस्था, दूध पिलाने की अवस्था में उनको इसकी अधिक आवश्यकता पड़ती है। छोटे बालकों के कपोलों पर गुलाब की सी लालिमा तब ही दृष्टिगोचर होगी जब माता के दूध से और गर्भ काल में माता के भोजन से उसे लोहा प्राप्त होता रहेगा ! दूध का लोहा बहुत उत्तम दर्जे का और शीघ्र रक्त में मिल जाने योग्य होता है। यह लोहा दूध के औटाने पर भी बना रहता है, हां औटाने से कैल्शियम नष्ट हो जाता है। इनके अतिरिक्त पोटाश, सोडा, क्लोराइड, मगनेशिया आदि भी दूध में रहते हैं। एक

वैज्ञानिक ने परीक्षण कर के लिखा है कि दूध में ताँबा, अभ्रक, अलमूनियम, सीसा, काँसा, क्रोमियम, टिन वैनेडियम और टीटेनियम भी हैं। और माता के दूध में चाँदी का भी कुछ अंश है। इन वैज्ञानिक महाशय का जिनका शुभ नाम 'जक्विन्दन' है कहना है कि उपरोक्त धातुयें दूध में यद्यपि बहुत कम मात्रा में हैं पर इन से दूध की बल वर्धक और रोग नाशक शक्ति बहुत बढ़ जाती है। दूध में कंठमणी (थाईराइड ग्लैंड) का रस भी मिलता है। हमारे देश में प्राचीन काल में जो बड़े बड़े डील-डौल के मनुष्य होते थे उसका मुख्य कारण दूध ही था जो उस समय हर व्यक्ति को ऐसे ही मिलता था जैसे आज ठंडा पानी। दूध के विषय में जो नवीन खोज हुई है उस से पाया गया है कि जहाँ तक

विटामिन

का सम्बन्ध है सब ही विटामिन दूध में पाए जाते हैं। हां गाय अथवा बालक की माता को यदि भोजन ठीक न मिले तो दूध में कुछ विटामिन का अभाव हो जाता है। सब विटामिन प्राप्त करने के लिये माता को गऊ दुग्ध और गऊ को हरी घास मिलना आवश्यक है। धारोष्ण दूध में देर के रखे हुए दूध की अपेक्षा और कच्चे दूध में गरम किए दूध की अपेक्षा विटामिन अधिक होते हैं। डब्बे का दूध जिसे प्रायः कम अनुभवी डाक्टर केवल पुस्तकों के आधार पर बालकों के लिए बताया करते हैं विटामिन से नितान्त खाली होता है। और हानि भी करता है। गऊ पालने की कठिनाई से बचने और दूध बेचने वालों के अनुचित लाभ कमाने तथा गंदे रहने के कारण आज कल के बाबू लोग डैरी के दूध को बड़ा उत्तम समझते हैं पर डैरी का स्टेरलाइजेशन ('पूर्ण निर्वीजीकरण') द्वारा शुद्ध किया जो दूध मिलता है, उस के भी बहुत से विटामिन नष्ट हो जाते हैं। और वह प्रायः 6 घंटे से अधिक देर का दुहा हुआ मिलता है। और डैरी में पाश्चात्य देशों के कुछ ऐसे अप्राकृतिक नियमों का पालन होता है जिससे डैरी के दूध को श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता पर हमारी प्राचीन सभ्यता के आधार पर गऊ को पूज्य मान उसकी सेवा करके जो दूध प्राप्त किया जाता है वह वास्तव में अमृत है। संसार के प्रत्येक व्यक्ति को

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति की इच्छा से इस अमृत का पान करना चाहिए और इस अमृतदाता गऊ माता की पूजा प्रतिष्ठा करना चाहिए। आलस्यवश व साहबपन में गऊ सेवा से जी न चुराना चाहिए। हमारे नेता लोग जो जनता पर प्रभाव डालने के लिये ट्रेक्टर स्वयं चला कर अपने कोमल हाथों को कष्ट दे सकते हैं वह यदि भगवान कृष्ण की भांति गऊ सेवा का उदाहरण जनता के सामने उपस्थित करें तो देश का कल्याण हो जावे। क्योंकि जब तक देश के प्रत्येक नर नारी को कम से कम दस छटाँक दूध नित्यप्रति न मिलेगा देश उठ नहीं सकता। जो सज्जन कुत्ता पालते और मोटर रख सकते हैं पर गाय पालने में असुविधा का बहाना करते हैं उन को दूध के गुणों को अधिक ध्यान पूर्वक पढ़ना चाहिए ।

एक बात और

भोजन का पाठ समाप्त करने से पूर्व हम एक आधुनिक वैज्ञानिक और सरकारी आफीसर डा० के० के० गोविल M. B. B. S., D. P. H., D. Y. M., Nutrition Survey Officer, United Provinces की सम्मति भोजन विषयक यहां लिखते है उनका कहना है कि एक युवा मनुष्य का 24 घंटे में नित्यप्रति निम्नलिखित भोजन होना चाहिए–

गेहूँ चावल इत्यादि	... 7 छटाँक
दालें	... 1.5 छटाँक
हरी पत्ती वाले साग	... 2 छटाँक
बिना पत्ती वाली भाजी	... 3 छटाँक
फल	... 1.5 छटाँक
चिकनाई (घी या मक्खन)	... 1 छटाँक
दूध	... 10 छटाँक
शकर	... 1 छटाँक

इसके अनुसार भी प्रश्न वही शेष रहता है कि 10 छटाँक दूध और 1 छटाँक घी सब को नित्यप्रति कहां से मिल सकता है जब कि देश में जो दूध होता है वह 4 आउंस प्रत्येक व्यक्ति पड़ता है। जब तक देश में गऊ धन की वृद्धि नहीं की जायेगी। इस समय तो पेट को धोखा दिया जा रहा है। जब लोगों को पेट भर भोजन नहीं मिल सकता तब जनता और सरकार दोनों का ध्यान सब से पहले देश में गऊ वृद्धि की ओर होना चाहिए।

उपदेश (14)

प्रकृति अथवा स्वभाव

वात, पित्त, कफ 3 प्रकृति होती हैं। इन में से किसी मनुष्य में तो कोई एक प्रकृति प्रधान होती है और किसी किसी में कई के मिश्रित लक्षण पाए जाते हैं। जिस मनुष्य में तीनों गुण सम अवस्था में होते हैं वह स्वस्थ मनुष्य उत्तम समझा जाता है कोई भी मनुष्य रोगी तब ही होता है जब इन में से कोई एक बिगड़ जाता है और प्रकृति के स्थान पर दोष कहे जाने लगते हैं। जब तीनों दूषित हो जाते हैं तब रोगी का मृत्यु काल निकट जानो, फिर भी बुद्धिमान चिकित्सक द्वारा ऐसे कुछ रोगी कठिनता से आरोग्यता प्राप्त कर लेते हैं। यहां हम प्रकृति के लक्षण लिखते हैं ताकि पाठक अपनी प्रकृति का निर्णय कर के ऐसे उपाय काम में लायें जिन से कभी रोगी नहीं हों।

1. **वात प्रकृति वाले मनुष्य की पहचान –** जिस मनुष्य में खुश्की और सर्दी हो, शरीर के अवयव खुरदरे हों, बलवान न हो चंचल हो, नींद कम आवे, विचार बदलते हों, दुबला-पतला, सर्दी गर्मी बहुत लगे, गर्म तर चीज़ लाभदायक हो, अधिक बात करना पसन्द करता हो। बाल, त्वचा, दांत, मुंह हाथ सूखे से रहें, वह वायु पृकति का है। वायु प्रकृति वाले को चिकने, हलके और गर्मतर पदार्थ हितकर होते हैं।

2. **पित्त प्रकृति –** भूख प्यास बहुत लगे और उसे सहार न सके, शरीर और रक्त में गर्मी अधिक हो। बुद्धिमान और हिम्मत वाला हो। चालाक और होशियार हो। पित्त प्रकृति वाले को गरम पदार्थ और नमकीन रस तथा ऐसे काम जिन से गर्मी बढ़े हानिकारक हैं। तर चीज़ जैसे घी, मक्खन, मलाई, दूध तथा कड़वी और कसैली चीज़ें पित्त वाले को हितकर हैं।

3. **कफ प्रकृति के लक्षण –** शरीर नर्म, भारी, तबियत में सुस्ती अधिक हो। हौसला वाला हो। बलवान शरीर भरा हुआ गुथा हुआ और सुडौल हो। मीठे,

खट्टे पदार्थ तथा तर चीज़ें कफ वाले को हानिकारक और खुश्क कसैली, चरपरी, गर्म, कड़वी, रसीली हितकर हैं।

इन रसों के चित्र को देखकर अपनी प्रकृति के अनुसार पदार्थ चुनने चाहिए। जिन रसों में वायु अधिक है वह वायु प्रकृति वाले को हानिकारक और जिनमें अग्नि, पृथ्वी और जल अधिक है वह लाभदायक होवेंगी इत्यादि।

स्वस्थ अवस्था में कोई भी रस सर्वथा त्यागना उचित नहीं क्योंकि स्वभाव बना रहने से वस्तु अनुकूल रहती है किन्तु हितकारी रसों का अधिकता से और दूसरे रसों का न्यूनता के साथ सेवन करना चाहिए। हां, जो वस्तु स्वभाव के अनुकूल न पड़ती हो अर्थात जिसके हर बार सेवन से कष्ट हो जाता हो या जिसको चित्त न चाहे या हानि की आशंका चित्त में उत्पन्न हो जावे उसे कदापि न सेवन करना चाहिए।

उपदेश (15)

ऋतु चर्चा

बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर यह छह ऋतु हैं। जो बात एक ऋतु में हितकर है वह दूसरी में हानिकारक हो सकती है इसी प्रकार भोजन भी ऋतु के अनुसार पृथक पृथक होता है हम इस क्रम को ग्रीष्म ऋतु से प्रारम्भ करते हैं :–

ग्रीष्म ऋतु – इस ऋतु में गर्मी बहुत बढ़ जाती है सूर्य के ताप से सब प्राणियों के शरीर से जल के परमाणु पसीने आदि के रूप में निकल कर आकाश मंडल में चले जाते हैं, जिस से खुश्की उत्पन्न होती है। अतः इस ऋतु में शर्बत, कच्चा दूध, लस्सी, मक्खन इत्यादि अनुकूल पड़ते हैं। ठंडे जल से कम से कम दो बार स्नान करना और दिन में ठंडे बन्द मकान में और रात्रि को खुले में सोना हितकर है। ऋतु के फल खरबूज़ा, लोकाट, लीची इत्यादि अवश्य खाना चाहिए। इस ऋतु में तेल के बने पदार्थ, अधिक शारीरिक श्रम, बहुत चिन्ता और अधिक भोजन, स्त्री प्रसंग तथा गर्म खुश्क वस्तुयें खाना मना है।

वर्षा ऋतु – वर्षा ऋतु में अग्नि बहुत मंद हो जाती है अतः बहुत हल्का भोजन करना चाहिए। मट्ठा और गर्म दूध सब्ज़ी, रोटी, दलिया, चीला, नींबू का शर्बत इत्यादि हितकर हैं। भुने चने और चने की तरकारी भी अच्छी है। तिल के तेल से शरीर का मर्दन और व्यायाम करना चाहिए। ओस और सील से बचना चाहिए तथा नदी में स्नान नहीं करना चाहिए।

शरद ऋतु – कुँवार के महीने से आरम्भ होती है और जब तक सर्दी नहीं पड़ने लगती पित्त का कोप रहता है। जब तक पित्त अपने स्थान पर नहीं बैठ जाता उन लोगों को जिनका कोलन अर्थात मलाशय शुद्ध नहीं है ज्वर का भय रहता है। जिसे डाक्टरी में मलेरिया ज्वर कहते हैं। यद्यपि कुछ वैज्ञानिक इसकी उत्पत्ति का कारण केवल मच्छर को मानते हैं पर हमारे अनुभव में मच्छर से ज्वर उन

ही लोगों को आता है जिनके पेट में मल भरा है। अथवा जिनको दुर्गन्धित वायु में रहना पड़ता है, जो लोग पानी में नींबू निचोड़ कर पीते हैं, वस्ती कर्म द्वारा मल साफ़ करते हैं और वायु शुद्धि के लिये नित्यप्रति हवन यज्ञ करते हैं उनको ज्वर नहीं होता। गिलोय, चिरायता, नीम और तुलसी, मुंडी इत्यादि का सेवन भी हितकर है।

हेमन्त व शिशिर ऋतु – जब मुंह और नाक से भाप निकलने लगे तब समझ लो कि पित्त अपने स्थान पर बैठ गया। इन ऋतुओं में जठराग्नि बहुत तीव्र हो जाती है अतः खूब पौष्टिक भोजन मेवा मिष्ठान, खोया, हलवा, इत्यादि अपनी शक्ति के अनुसार खाया जा सकता है। हमारे देश में इस ऋतु के आगमन के प्रारम्भ में दिवाली का पर्व मनाकर जनता को बताया जाता है कि मिष्ठान जो वर्षा ऋतु में खाना वर्जित था अब से आरम्भ कर देना चाहिए। इसी कारण इस त्याहार पर परस्पर एक दूसरे के यहां मिठाई भेजने का चलन है ।

वसन्त ऋतु – सर्दी में जिस प्रकार बर्फ़ पर्वतों पर एकत्रित रहता है उसी प्रकार कफ हमारे शरीर में जाड़ों में जमा रहता है। और जैसे बर्फ़ वसन्त के आरम्भ में पिघलने लगती है, उसी प्रकार कफ शरीर से पिघल कर निकलने लगता है। अतः जो लोग पेट को साफ़ नहीं रखते उनका खांसी इत्यादि रोग इस समय हो सकते हैं। मधु का प्रयोग तथा प्रातःकाल का भ्रमण इस समय बहुत हितकर है। हैजा के पश्चात पकवान मिष्ठान इत्यादि के खाने में कमी करके फल और सब्ज़ी का अधिक प्रयोग करना चाहिए। प्रकृति इस समय बहुत से ताजे फल हमें प्रदान करती है। उनसे लाभ उठाना चाहिए।

उपदेश (16)

भोजन पर राष्ट्रीय दृष्टि

स्वास्थ्य रक्षा की पुस्तक में राष्ट्रीय दृष्टि से भोजन पर विचार करना सम्भव है कुछ लोगों को पुस्तक की सीमा से बाहर की बात प्रतीत हो, पर हमारा उद्देश्य इस पुस्तक लिखने का केवल एक है कि स्वास्थ्य विषयक जो कुछ ज्ञान हमने पिछले 40-50 वर्ष में प्राप्त किया है और इस सम्बन्ध में जो अनुभव प्राप्त हुए हैं उन से जनता को लाभ पहुंचाया जाये। और जब तक किसी बात पर आचरण न किया जावे तब तक केवल लिखने पढ़ने से कोई लाभ नहीं हो सकता। हम मानते हैं कि भोजन में जिन चीज़ों का उल्लेख हम ने किया है ,जैसे गाय का धारोष्ण दूध तथा फल, सब्जी, मेवा इत्यादि वह एक बहु संख्यक देश वासियों को प्राप्त नहीं है। और जब तक उनकी प्राप्ति के लिए घोर परिश्रम न किया जायेगा तब तक उनका प्राप्त होना न केवल कठिन किन्तु असम्भव है। सौभाग्य से आजकल हमारी अपनी जनता की सरकार है। अतः प्रत्येक देश वासी का कर्त्तव्य है कि भोजन की आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति के लिये जो कुछ वह व्यक्तिगत रूप से उद्योग कर सकता है वह स्वयं करे और जो साधन सरकार के हाथ में है उनको सरकार से करवाने के लिये जनता में आन्दोलन करें।

भगवान की कृपा से हमारे देश में न तो भूमि की कमी है, न मनुष्यों की। यह विचार कि जन-संख्या बढ़ गई है केवल बहाना मात्र है। यदि जन-संख्या बढ़ी है तो पुरुषार्थ भी तो अधिक हो सकता है। वास्तव में कमी पुरुषार्थ और इस बात की है कि हमें अँग्रेजों ने सर्वदा गुलाम बनाए रखने के लिए कुशिक्षा द्वारा जो विषपान कराया है, उसका प्रभाव हमारे मस्तिष्क से नहीं जाता और हम उसी मद में सर्वदा आकाश की ओर ताकते हैं पृथ्वी पर हमारी दृष्टि जाती ही नहीं। इसमें भय यह है कि इस कृत्य से कहीं हम ठोकर खाकर मुंह के बल ऐसे न गिरें कि फिर उठना ही कठिन हो जाये। हम दूसरे देशों की चमक दमक पर मोहित हैं, पर

यह नहीं सोचते कि यह चमक दमक ही तो संसार में बार बार महायुद्ध कराती है। अधिक विवाद में न पड़कर हम वह उपाय बताते हैं जिनसे हमारे देश में भोजन का काल न रहे और प्राचीन समय की भांति हम स्वस्थ रह कर दीर्घजीवी हो सकें। इस समय सब से अधिक आवश्यक कार्य देश में उत्तम गऊओं का बढ़ाना है। और अन्न, फल, सब्ज़ी उपजाने के कार्य को हर पढ़े लिखे आदमी को भी कुछ न कुछ समय उसी प्रकार करना चाहिए जैसे किसी समय में हम कुछ देर सूत कातते थे। खेती के लिए हमें ट्रेक्टरों** की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है और न विलायती तथा मैले का खाद की जिससे बुद्धि भ्रष्ट होती है। गऊ धन बढ़ाने से हमें गोबर का खाद पूरी मिल सकती है दूध पीने से पुरुषार्थ भी बढ़ जावेगा और बैल ट्रेक्टरों का स्थान ग्रहण कर सकते हैं। तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट और चाय का व्यवहार बन्द कर देने से जहां करोड़ों रुपया बचेगा, स्वास्थ्य बढ़ेगा वहां लाखों बीड़ी बनाने वाले मजदूर खेती के काम में लग जाएगे और देश में उन्नति हुई चाय विदेशों से करोड़ों रुपया देश को ले आवेगी।

वनस्पति घी, शकर, तेल, धान, आटे इत्यादि की मशीनें बन्द करके पुराने ढंग पर हाथों से कार्य करने से जहां बेकारी दूर होगी वहां पुरुषार्थ और स्वास्थ्य बढ़ेगा।

** संसार के बहुत बड़े वैज्ञानिक प्रो० आइन्टाइन ने कहा है हम ट्रेक्टरों से ज़मीन जोतने और रासायनिक खाद को ज़मीन में डालने से बाज़ आवें, इसका घातक नतीजा यह होगा कि भूमि सदा के लिये ऊसर बन जायेगी। इतनी ज़बरदस्त हानि होगी जिस की पूर्ति जीवन में कभी नहीं हो सकेगी। वैज्ञानिक खाद ज़मीन में क्षणिक उत्तेजना पैदा करके पहिले तो पैदावार ज़्यादा बढ़ा देती है किन्तु बाद को ज़मीन की जीवनी शक्ति सदा के लिये ठंडी पड़ जाती है।

भारत इलाहाबाद 2-7-48 पृष्ठ 4

उपदेश 17

पाचन क्रिया

यह हम पहले बता चुके हैं कि भोजन कितना ही उत्तम किया जावे केवल उसके खाने से हमें शक्ति प्राप्त नहीं हो सकती किन्तु शक्ति तब ही प्राप्त होगी जब हम उसे पचाकर शरीर का अंग बना लेंगें। यह पाचन क्रिया एक प्रकार से भोजन की याद और देखने से ही प्रारम्भ हो जाती है। क्योंकि उत्तम भोजन को सुनकर और देखकर ही मुंह की ग्रन्थियां अधिक लार उत्पन्न करना प्रारम्भ कर देती हैं। और यह लार ही पहला पाचन रस है जो भोजन को पचाता है। जितनी अधिक लार भोजन में सम्मिलित होगी उतना ही शीघ्र भोजन पचेगा। इस कारण भी भोजन मुंह में देर तक रखना हितकर है। मुंह से चलकर भोजन अन्न नली द्वारा आमाशय में जाता है, और वहां पीसा जाता है तथा यहां यकृत के रस उसमें आकर गिरते हैं जिससे वह गलकर आंतों की ओर चल देता है, जहां से शोषक ग्रन्थियां सार पदार्थ को चूस चूस कर रक्त बनने के लिये हृदय की ओर भेजती जाती हैं। और भोजन का शेष भाग जो रक्त नहीं बन सकता मल रूप में कोलन में जाकर एकत्रित हो जाता है। यहां तक कि क्रिया प्राकृतिक ढंग से हमारी इच्छा शक्ति की सहायता के बिना भी हो जाती है। पर कोलन में पहुंचा मल फेंकने के लिये हमारी इच्छा शक्ति की भी आवश्यकता है। इसी कारण शौच जैसे आवश्यक कार्य को कभी कभी हम घंटों के लिये टाल देते हैं। और यह टालना मानो रोग का बीज बोना है क्योंकि वह मल आँतों में चिपट जाता है। और सड़कर गैस उत्पन्न करता है। जो अनेकों रोगों का कारण बनती है। यह बात बहुत समय से प्रसिद्ध है कि सारे रोग पेट की खराबी से होते हैं। पाचन क्रिया का सब कार्य ऊपर से ठीक होने के बाद भी आप रोग से नहीं बच सकते यदि आप का कोलन अशुद्ध है अथवा दूसरे शब्दों में आप समय पर मल त्याग नहीं करते हैं या नहीं कर पाते हैं।

उपदेश 18

वस्ती कर्म (एनीमा)

जब शौच समय पूरा मल नहीं निकल जाता तब प्रायः ऐसा होता है कि आँत की भीतरी तह पर मल चिपटा रहता है और बीच में एक नाली-सी बन जाती है जिसके द्वारा नित्य प्रति शौच होता रहता है। ऐसी अवस्था में हम अपने को कभी स्वस्थ और कभी रोगी समझते हैं। पहले कोई रोग तो प्रतीत नहीं होता पर भूख और उत्साह कम हो जाता है। और सुस्ती छाई रहती है। डाक्टर के पास जाते हैं तो शौच के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर आप कह देते हैं कि शौच तो ठीक होता है। साधारण डाक्टर इससे बहक जाता है और आपकी सुस्ती आदि लक्षणों पर उत्तेजक औषधि दे देता है। जिससे मल और भी दब जाता है और आपके शरीर में रोगों की जड़ जम जाती है। हाँ कुछ अनुभवी डाक्टर आपके उत्तर से सन्तुष्ट न होकर अपनी शिक्षा के आधार पर आपके कोलन के साफ करने का उद्योग करता है। अर्थात् वह आपको कैलोमल इत्यादि तेज़ और विदेशी विषैली औषधियाँ खाने को देता है। जब कोलन में मल जमा है तो उसका निकालना तो अनिवार्य है पर निकालने के साधन अपना प्रभाव भिन्न भिन्न रखते हैं मल निकालने के चार साधन हैं :–

1. उपवास करे अथवा भोजन ऐसा करें जिससे मल साफ़ हो जैसे पत्ती वाले साग, फल, मधु, नीबू, संतरा, धारोष्ण दूध इत्यादि।
2. डाक्टर की तेज़ दवा कैलोमल, नक्स इत्यादि खावें।
3. सनाय की पत्ती, अमलतास, जमालघोटा इत्यादि देशी दवा खावें।
4. वस्ती कर्म द्वारा गरम अथवा ताज़े पानी से मल की नाली कोलन को धोकर साफ़ कर दें।

अब इन साधनों के हानि लाभ पर विचार कीजिये–पहला उपाय बहुत सुगम व सरल और हानि रहित है यदि इस से काम चल जावे तो किसी भी झंझट की

आवश्यकता नहीं। नवीन कब्ज़ में प्रायः इस से काम चल भी जाता है। पर अधिक जमे हुए मल को उखाड़ फेंकना इस उपाय से सम्भव नहीं है। अतः इस से निराश अथवा इसकी धीमी चाल को सहन न करने वाले जल्दबाज़ व उतावले रोगी दूसरे उपाय की शरण लेते हैं। पर–दूसरा उपाय–बड़ा ही हानिकारक है। कारण मुँह से लेकर गुदा तक एक भोजन की नाली है उस नाली में मुलायम गीली झिल्ली का अस्तर भीतर की ओर है। भगवान ने उसमें तरी इस लिये उत्पन्न की है कि भोजन की लुब्दी आगे को सरलता से खिसक सके। अब जब हम कोई तेज़ दस्तावर औषधि खाते हैं तो हमारी प्राण सत्ता उसे विजातीय द्रव्य समझ बाहर निकालने के लिए प्रयत्न करती है। अतः रक्त और उस तर झिल्ली में से जल खींच खींच कर उस विषयुक्त औषधि को जल के सहारे बहाकर कोलन में पहुँचाती है ताकि वहाँ पहुँच कर प्राकृतिक नियम के अनुसार वह बाहर निकल जावे। इसी कारण आँतों में चिपटा मल भी उस पानी के साथ मिलकर कुछ निकल जाता है जिससे हमें कुछ आराम अवश्य मिलता है। पर उस आवश्यक जल अथवा जीवन रस के निकल जाने से हमारी आँत तथा सारा शरीर निर्बल हो जाता है। यह ऐसी ही बात है कि कोई मनुष्य शौचालय की नाली साफ़ करने को इत्र की शीशियाँ प्रयोग करे। साथ ही इस ढंग से पूरी सफ़ाई भी नहीं हो पाती इसी कारण दस्त लेनेवाले को सदा एक और जुल्लाब लेने की इच्छा बनी रहती है। दूसरा कैलोमल पारे से और नक्स कुचले से तय्यार किया जाता है। अतः इन विषों का जो सूक्ष्म प्रभाव रक्त में रह जाता है वह आगे नवीन रोग बनाता है। एक और हानि इस साधन में यह है कि वैज्ञानिक बताते हैं कि किसी संक्रामक रोग का कृमी हमारे शरीर में किसी भंग त्वचा द्वारा ही प्रवेश कर सकता है। स्वस्थ त्वचा में वह प्रवेश नहीं कर सकता। दस्त की तेज़, गर्म और विषैली औषधियों के प्रभाव तथा जल खिंचने के कारण हमारी आँतों में हल्की दरारें पड़ जाती हैं अर्थात् वह भंग अवस्था में हो जाती हैं। ऐसी दशा में यदि किसी संक्रामक रोग के कीड़े से हमारी मुठभेड़ हो जाती है तो वह सुगमता से हमारे भीतर स्थान बना सकता है। इसी कारण बहुत अनुभवी चिकित्सक रोगियों के कहने पर भी दस्त की दवा देने में हिचकचाते हैं। तीसरा साधन यद्यपि ऐसा हानिकारक नहीं जैसा दूसरे, पर

सिद्धान्त रूप में वह भी वैसा ही है अतः उससे भी जहाँ तक बचत हो अच्छा है।

रहा चौथा साधन वस्ती कर्म, वह कोलन साफ़ करने को सब से अच्छा है। क्योंकि जिस प्रकार घर की नाली धोने को पानी सर्व श्रेष्ठ है उसी प्रकार कोलन के साफ़ करने को पानी प्रधान वस्तु है। प्राचीन काल में आवश्यकता पड़ने पर इसे हमारे ऋषि मुनि तक प्रयोग में लाते थे। आधुनिक वैज्ञानिक भी इस सिद्धान्त को मानते और काम में लाते हैं, अन्तर इतना है कि ऋषि लोग हठ योग की ऐसी क्रियायें कर सकते थे जिन के द्वारा बिना किसी यंत्र की सहायता के नदी में प्रवेश कर गुदा द्वारा जल कोलन में भर देते थे। पर आज कल हम लोग वस्ती यंत्र या एनीमा से काम लेते हैं ऋषियों को छोड़ वैद्य लोग उस समय भी वस्ती यंत्र ही काम में लाते थे।

वस्ती कर्म करने की विधि

बड़ी सरल है। आप किसी डाक्टर की दूकान से एनीमा, एरीगेटर, डूश देने का आला किसी भी नाम से खरीद सकते हैं। जिस व्यक्ति को वस्ती कर्म करना है वह पलंग पर सीधे करवट पर लेट जावे। और लेटने से पूर्व डब्बे में पानी भरकर दीवार पर इस प्रकार लटका दे कि रबड़ में लगा नाज़िल रोगी की गुदा तक पहुँच सके। नाज़िल में जो पेंच लगा है उसे घुमाने से पानी निकलता व बन्द होता है। पहले बन्द रक्खें जब लेट जावें, नाज़िल के सिरे पर चिकनाई लगा कर उसे एक इंच के अन्दाज़ से गुदा के भीतर प्रवेश करें और तब नाज़िल का पेंच खोल दें। पानी अपनी स्वाभाविक गति से कोलन में जाने लगेगा। जब पानी समाप्त हो जाये तब नाज़िल गुदा से निकाल दें। अपनी इच्छा शक्ति के सहारे पानी को 15-20 मिनट तक पेट में ही रोके रहें, और धीरे धीरे पेट सहराते रहें। शौच की तीव्र इच्छा होने पर शौच चले जावें और कुछ अधिक देर बैठें ताकि आँतों में प्रवेश किया हुआ पानी मल को लेकर निकल जावे। आप यह देखकर प्रसन्न होंगे कि मुद्दतों का एकत्रित मल का अधिक भाग पहले ही दिन बहुत कुछ साफ़ हो जावेगा। कभी कभी दस पाँच दिन और कभी अधिक दिन भी लगते

हैं। शौच से आने पर आप 30 मिनट तक लेटे रहें। उसके पश्चात आप सब काम कर सकते हैं। इसमें न तो जुल्लाब की तरह शौच की प्रतीक्षा करना पड़ेगी, न काम बन्द रखना होगा, न खाने में वैसा बन्धन है। खिचड़ी, रोटी, दाल, सब्जी, दूध, खीर सब खा सकते हैं। केवल भारी चीज़ और बहुत डटकर खाना मना है। यद्यपि इस साधन को प्राचीन और अर्वाचीन दोनों प्रकार के चोटी के वैज्ञानिकों का समर्थन प्राप्त है। फिर भी कुछ लोग अपनी अज्ञानता वश इसका विरोध करते हैं और जनता में भय उत्पन्न करके इस प्राकृतिक साधन से रोकते हैं। अतः इस पर कुछ अधिक प्रकाश डालना उचित प्रतीत होता है।

प्राचीन साक्षी

चरक, सुश्रुत, बाग भट्ट, अश्वनीकुमार संहिता, चक्रदत्त, माधव निदान और भाव प्रकाश जैसे प्रसिद्ध वैद्यक के ग्रन्थों में से सब में ही इस क्रिया का विधान मिलता है। न केवल पानी की वस्ती किन्तु अनेक रोगों में दूध, घी, तेल तथा अन्य भिन्न भिन्न प्रकार की औषधियों की वस्ती देने का विधान है। चरक सिद्धस्थान 10 अध्याय के श्लोक 3 में बताया गया है कि "वस्ती कर्म के समान और कोई चिकित्सा नहीं क्योंकि वस्ती द्वारा सुख के साथ शरीर शीघ्र ही साफ़, पाक और हल्का हो जाता है और किसी प्रकार की हानि नहीं होती।" चरक सिद्धस्थान अ०1 के श्लोक 30 में लिखा है कि कई एक आचार्य वस्ती कर्म को चिकित्सा का अर्ध भाग और कई आचार्य चिकित्सा का सर्वांग बतलाते हैं। वस्ती के द्वारा शरीर में पहुँचा हुआ स्नेह (चिकनाई) या औषधि बाह्य स्थान कटि (पेट) में जाकर कुल्ला को मथ दोषों को शिथिल कर, मल की गाँठों को फोड़ और शरीर को तर कर के तमाम खराबियों को मल के साथ बाहर निकाल देता है। इस लिये वस्ती कर्म श्रेष्ठ है अर्थात् इस एक ही श्लोक में निम्नलिखित 5 बातों की ओर संकेत किया है :–

1. कटि में जाकर तमाम कोलन में पहुँचना।
2. कुल्ला को मथना (खूब ओत प्रोत करना) अथवा मल को सब ओर से हिला देना।

3. दोषों को शिथिल कर बात, पित्त, कफ, के बिगड़ने से ही सब रोग होते हैं, उन सब दोषों को वस्ती कर्म शिथिल करता है।

4. मल की गाँठों को फोड़ कर जब पेट में सुड्ढे बन जाते हैं, तो कभी कभी दस्त की सब औषधियाँ निष्फल सिद्ध होती हैं और कभी रोगी ऐसी अवस्था में समाप्त हो जाता है, पर वस्ती कर्म से वह सब मल टूट फूट कर निकल जाता है।

5. शरीर को स्निग्ध करना जब तेल अथवा दूध से वस्ती कर्म किया जाता है तो शरीर में वही काम करता है जो तेल मशीन में करता है। पर यहाँ हम रोगों की चिकित्सा का वस्ती कर्म द्वारा वर्णन नहीं करेंगे। क्योंकि इस पुस्तक का उद्देश किसी रोग की चिकित्सा बताना नहीं है। किन्तु वह उपाय बताना है जिनसे रोग उत्पन्न ही न हों। यदि हम वस्ती कर्म द्वारा रोगों की चिकित्सा का वर्णन करने लगें तो लगभग 800 श्लोक तो केवल चरक में ही मिलेंगे, जिनमें इसका वर्णन किया गया है। इसके लिये पृथक पुस्तक चाहिए। यहाँ तो केवल यह दिखाना है कि चरक जैसे ऋषि का अनुमोदन वस्ती कर्म को प्राप्त है। अब अर्वाचीन खोज का उल्लेख करते हैं।

अधुनिक खोज

जैसा कि हमने पहले बताया है वस्ती कर्म का विस्तार पूर्वक वर्णन चरक सुश्रुत जैसे प्राचीन ग्रन्थों में है और यदि जड़ की खोज करें तो इसका वर्णन वेद में मिलता है। पर पाश्चात्य विद्वान तो हर बात के स्वयं आविष्कारक हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार वस्ती कर्म के नवीन आविष्कार करने का गौरव न्यूयार्क अमेरिका के डाक्टर ए० विलफोर्ड हाल पी० डी० एल० एल० डी० हैं। डाक्टर साहब ने सबसे पहले वस्ती कर्म का अनुभव अपने ऊपर ऐसी अवस्था में किया जब सब डाक्टरों ने उनका क्षय असाध्य बता दिया था। 40 वर्ष के अनुभव के पश्चात् उन्होंने इस विषय पर एक पुस्तक लिखी जो अधिक मूल्य होने पर भी हाथोंहाथ बिक गई। और इस पुस्तक के द्वारा वस्ती कर्म से लगभग 5 लाख मनुष्यों ने

लाभ प्राप्त किया। डाक्टर साहब ने लिखा है–कि 20 हज़ार स्त्री पुरुषों ने बहुत कठिन रोगों में जिनमें क्षय रोग भी है इसके द्वारा जीवन दान पाकर उसकी प्रशंसा में डाक्टर साहब को पत्र लिखे हैं। जिनमें कई प्रतिष्ठित चर्च के अधिष्ठाता पादरी लोग भी हैं। औरों की बात तो पीछे होगी स्वयं डाक्टर हाल साहब को 26 वर्ष की आयु में पहली बार मालूम हुआ कि उनका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ चुका है और क्षय जैसे घातक रोग के चुंगल में वह फँस चुके हैं। जिस दुष्ट रोग से कुछ समय पूर्व उनके भ्राता भी प्राण त्याग चुके थे। उन्होंने अपने परिवारक डाक्टर से अपने फेफड़ों का निरीक्षण कराया जिसने सच्चाई के साथ बता दिया कि उनकी अवस्था बिल्कुल उनके मृत भ्राता के समान है। जीवन की आशा बहुत कम है। अतः डाक्टर की तौर पर वह कोई आशा नहीं दिला सकता और बतौर एक मित्र के कहा कि अपना प्रबन्ध ठीक कर लो और अपने आप को अब केवल कुछ दिन का मेहमान समझो।

इसके पश्चात कुछ अन्य प्रसिद्ध डाक्टरों से भी परामर्श किया गया जब वहाँ भी कोई आशा न पाई तब डाक्टरों की कौंसिल से राय माँगी जिन्होंने पूरा निरीक्षण करने के पश्चात बताया कि एक फेफड़ा बहुत खराब हो चुका है, और दूसरा हो रहा है। पारिवारिक डाक्टर की भाँति इन लोगों ने भी कोई आशा नहीं दिलाई। कहा तो यह कहा कि यदि जलवायु परिवर्तन के साथ 2 लगातार बहुमूल्य औषधियों का प्रयोग किया जाय तो कदाचित एक वर्ष तक जीवन के दिनों को बढ़ाया जा सकता है। डाक्टर हाल ने उस समय की अपनी दुख भरी कहानी इन शब्दों में वर्णन की है–"उस समय मेरे शरीर पर मांस नहीं के बराबर था और मेरी आकृति एक ढाँचे की सी बन गई थी मुँह पर जीवन के चिह्नों का अभाव था और शरीर में इतना भी बल नहीं था कि मैं कमरे से बाहर जा सकूँ। अथवा बिना बार बार स्वाँस लिये कुछ पग भी चल सकूँ। मेरे शरीर का भार घटते घटते केवल 1.5 मन रह गया था। यह सब कुछ होते हुए भी मैंने हिम्मत नहीं हारी और मेरी आत्मा ने डाक्टरों के फ़ैसले को स्वीकार नहीं किया। हाँ यह निश्चय हो गया कि जिन औषधियों को करते करते मेरे भ्राता के प्राण गए हैं तथा डाक्टर लोग भी जिन पर भरोसा नहीं दिलाते, रहना मेरे लिये निरर्थक है"। एलोपैथी से निराश

होकर डाक्टर हाल को यह चिन्ता हुई कि कोई और प्राकृतिक बात ज्ञात हो जावे या किसी ऐसी विधि का पता चल जाये, जिसका प्रचार तो न हुआ हो पर पुराने विद्वानों ने अपनी पुस्तक में कुछ संकेत किया हो (यह सिद्ध करता है कि डाक्टर साहब ने हमारे प्राचीन ग्रन्थों में से किसी का भाष्य पढ़ा होगा जिसमें वस्ती कर्म का वर्णन होगा) यह सोचते हुए डाक्टर साहब ने सोचा कि सब से पहले किसी न किसी प्रकार रोग कीटाणुओं की रात दिन बढ़ती हुई संख्या को रोका जावे। और फिर भीतर के बर्तमान कीटाणुओं को रक्त संचालन के द्वारा बाहर निकाला जावे। क्योंकि अब जो भोजन मैं खाता हूँ उसका जो शुद्ध रस बनता है उसे भी इनका विष विषैला कर देता है और मैं शुद्ध रक्त न बनने से निर्बल होता जाता हूँ। इस सम्बन्ध में डाक्टर हाल ने सोचा कि कहा जाता है कि सब रोग पेट की खराबी से होते हैं। जिसका अर्थ यह है कि मल कोलन में सड़ता रहता है और आँतों में चिपट जाता है इससे जो गैस बनती है, वह सारे शरीर के कल पुरज़ों को मैला, गंदा और रोगी बना देती है। रोग के कीटाणु इस मल का भोजन पाकर लाखों करोड़ों की संख्या में उस समय तक बढ़ते रहते हैं जब तक वह मल कोलन से साफ़ नहीं कर दिया जाता फिर रक्त संचालन के साथ साथ शरीर के प्रत्येक भाग में फैलकर जोड़ों और ग्रन्थियों में से किसी स्थान पर विशेष रूप से अपना घर बना लेते हैं। जब फेफड़े में घर बनाते हैं तब फेफड़े का क्षय और जब आँत अथवा पेट की ग्रन्थियों में घर बनाते हैं, तब आँत का क्षय (Abdominal T. B.) हो जाता है। जब कोलन का कार्य रुक जाता है और वह अपने कार्य को ठीक प्रकार न करके सुस्ती करता है, तो सारे शरीर में सुस्ती और आलस्य सा छा जाता है। कोलन के भरे होने के कारण छोटी आँतों में भी मल भर जाता है और उनमें नवीन भोजन को लेने की माँग नहीं पैदा होती जिसे भूख न लगना कहा जाता है।

छोटी आँतें भी भरी होने के कारण अपने काम में सुस्त पड़ जाती हैं। फिर जबरदस्ती जब हम भोजन मुँह में ठूँस लेते हैं तब वह भोजन छोटी आँतों में भरे मल से मिलकर सड़ने लगता है और हमको खट्टे डकार आने लगते हैं। और आमाशय का कार्य भी सुस्त पड़ जाता है।

दूसरी ओर जो ग्रन्थियाँ आँतों में से शुद्ध भोजन का रस चूस कर रक्त बनने को हृदय की ओर भेजती थीं वह इस विष मिले भोजन से विषयुक्त रस खींचकर वैसा ही रक्त में पहुँचाती हैं, जिससे कम और अशुद्ध रक्त बनता है। इस कारण से सारे शरीर के अंगों का पालन पोषण होने के स्थान में रोग-कीटाणु ही अधिक लाभ प्राप्त करते हैं। और सब ही अंग फेफड़े, वृक्क, यकृत, तिल्ली रक्त न मिलने अथवा अशुद्ध मिलने से निर्बल और रोगी हो जाते हैं। हृदय स्वयं निर्बल होकर कभी कभी अपना काम एक दम बन्द कर देता है। क्योंकि एक ओर तो आँतों में मल भरा होने के कारण रक्त अभाव से वह निर्बल होता है उस पर तम्बाकू, चाय, मदिरा जैसे पदार्थों का सेवन करके रक्त को और भी दूषित किया जाता है। ऐसी अवस्था में यदि हृदय घबरा कर अपना काम बन्द कर देता है तो मनुष्य समाप्त हो जाता है। और डाक्टर लोग यह कह देते हैं कि हार्ट फ़ेल हो गया। इस बात पर विचार नहीं करते कि हार्ट क्यों फ़ेल हो गया। जब कोलन का प्राकृतिक मार्ग बन्द होकर अपना काम पूरा नहीं करता तो प्रकृति उद्योग करती है कि किसी प्रकार इस मल को इसी में अथवा किसी अन्य मार्ग से निकाले। अतः कभी स्वयं दस्त आ जाते हैं जिस से यह मल किसी अंश में निकल जाता है। और कभी पसीना, मूत्र इत्यादि द्वारा निकालती है। जिससे वह बहुत दुर्गन्धित हो जाते हैं। यहाँ तक कि स्वाँस में भी दुर्गन्ध आने लगती है। इन विचारों से डाक्टर हाल साहब को बड़ी सफलता की आशा होने लगी और उन्होंने यह निश्चय कर लिया कि मेरे इस घातक रोग का कारण कोलन का मवाद से भरा होना है। अतः वह स्वयं लिखते हैं–"मैंने अनुभव कर लिया कि मेरे शारीरिक कष्ट और आनेवाली अकाल मृत्यु का कारण केवल कोलन और उसमें भरे मल का न जाना है"। अतः अब डाक्टर साहब ने निश्चय कर लिया कि यदि किसी तरकीब से मैं आँतों को गरम पानी से भर दूँ क्योंकि पानी ही सब से उत्तम वस्तु साफ़ करने की है जो तहों और चक्करों में चिपटे मल को हिला दे, तो यह स्थान बड़ी उत्तमता से साफ़ हो सकता है अतः वह लिखते हैं :–

"मुझे ज्ञान नहीं था कि कितना पानी आँतों में सुगमता से ठहर सकेगा। अब मेरे लिये अपने ऊपर इसका परीक्षण करने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग

नहीं था। इस समय मेरे रोग की घातक अवस्था ने अपने शरीर को परीक्षण के लिये तय्यार कर दिया था"।

प्रारम्भ में डाक्टर साहब ने साधारण पिचकारी की सहायता से केवल एक पाइंट (लगभग ढाई पाव) पानी गुदा में पहुँचाया। कब्ज़ के कारण पुट्ठे इतने खिंचे हुए थे कि वह कार्य भी बिना कष्ट के नहीं हो सका पानी की मात्रा यद्यपि बहुत थोड़ी थी किन्तु इसके निकालने पर भी बहुत सुख का अनुभव हुआ। जो कभी किसी दस्त की औषधि से नहीं ज्ञात हुआ था क्योंकि उसके पश्चात निर्बलता और बढ़ती थी और इस प्रयोग से सारे शरीर में उत्साह बढ़ा। दूसरी बार डाक्टर साहब ने तीन पाव पानी भीतर पहुँचाया और इस बार मल के साथ उसके निकल जाने पर और भी सुख मिला। अन्त को डाक्टर साहब ने ढाई सेर तक पानी चढ़ाया। पर सवा सेर वाले वस्ती कर्म के पश्चात ही जो प्रभाव उन्हें प्रतीत हुआ वह इस प्रकार लिखते हैं–"इस बार एनीमा के पानी निकलने पर मैंने ड्यूडेनम के निकट तुरन्त आराम का अनुभव किया। ऐसा प्रतीत हुआ कि सारी आँतों से मल निकल गया है। और जब मैं प्रसन्नता से लेटा था, आध घण्टे पश्चात इतनी ज़ोर की भूख लगी कि मैं बिना खाए न रह सका" "उस समय से अब तक जिसको चालीस वर्ष का समय हुआ बराबर दूसरी या तीसरी रात इस बिना औषधि और आश्चर्य जनक प्रभाव देने वाले साधन को काम में लाता हूँ। और निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ कि इस स्मरणीय समय के पश्चात हज़ारों बार कोलन साफ़ करने और छोटी आँतों के स्थान पर बैठ जाने के पश्चात बड़ी तीव्र भूख अनुभव करता रहा हूँ। उस समय से जब प्रारम्भिक परीक्षण कर रहा था स्वास्थ्य और शरीर के भार के विचार से मैं उन्नति करता रहा हूँ। जब यह साधन प्रारम्भ किया था मेरा भार 1.5 मन था तीन चार सप्ताह में पाँच पौंड के लगभग बढ़ गया। मेरे चेहरे पर चमक आ गई। मेरी खाँसी भी शीघ्र ही कम हो गई। गुर्दों की पीड़ा बिल्कुल जाती रही। और मेरे फेफड़ों का रोग जाता रहा और मन्दाग्नि के सब चिह्न जाते रहे। और फिर कभी नहीं हुए। मेरा स्वास्थ्य, भार और शक्ति सब बढ़ गए। बारह वर्ष हुए मेरे शरीर का भार पौने तीन मन था इत्यादि डाक्टर साहब की उपरोक्त कहानी कुछ विस्तार से हमने इस कारण लिखी है कि पाठक शिक्षा ग्रहण करें कि

जब तपेदिक जैसा घातक रोग ऐसी अवस्था से जिसे एलोपैथी के सब डाक्टर असाध्य बता चुके थे, इस प्राकृतिक साधन से आरोग्य हो सकता है। तो यदि हम स्वस्थ अवस्था में थोड़ा ही मल कोलन में एकत्रित होने पर उसे साफ़ करते रहें तो निश्चय ही सब रोगों से मुक्त रहेंगे और दीर्घ जीवन प्राप्त करेंगे। बिना औषधि, बिना कष्ट, बिना अधिक व्यय और बिना पराधीनता का यह कितना अच्छा साधन है। इसकी प्रशंसा वह सब ही लोग करते हैं जो इसे प्रयोग में ला रहे हैं।

वस्ती कर्म सम्बन्धी अन्य नियम

आरम्भ करने पर एक युवा पुरुष–

1. पहले दिन तीन पाव, दूसरे दिन सवा सेर और तीसरे दिन दो सेर पानी चढ़ावे। अधिक से अधिक 2.5 सेर हो।

2. जब मल बहुत दिनों का जम कर कड़ा हो जाता है तब प्रथम 2-3 बार गरम पानी लेना चाहिए। फिर कुएँ का ताज़ा पानी जैसा होना चाहिए। बहुत ठंडा पानी कभी न लेना चाहिए। सिद्धान्त यह है कि गरम पानी मल अधिक साफ़ करता है। पर आँत की त्वचा को उसी प्रकार कुछ निर्बल करता है जैसे गरम पानी के स्नान से शरीर की त्वचा कुछ निर्बल होती है। कुएँ के ताज़े पानी से आँतों को शक्ति मिलती है। पर जमे हुए मल को छुड़ाने में गरम पानी की आवश्यकता पड़ती है। बहुत ठंडा पानी कभी कभी मरोड़ उत्पन्न करता है।

3. रोगों की चिकित्सा में वस्ती कर्म में दूध, तेल तथा सैकड़ों औषधियों के काढ़े प्रयोग होते हैं, भोजन भी रोग के अनुसार भिन्न भिन्न प्रकार का होता है। यह एक पृथक विषय है।

4. चूँकि पेट में आँतें सीधी नहीं रक्खी हैं अनेकों चक्कर हैं। अतः जब पानी पेट में पहुँचता है और जमे हुए मैल से टकरा कर उसे उखाड़ता है तो कुछ धीमी-सी पीड़ा होती है। उस से न घबराना चाहिए थोड़े ही समय में स्वतः

बन्द हो जाती है। यह भी कर सकते हैं कि ज़रा देर को नाज़िल गुदा से निकाल दें, पीड़ा बन्द होने पर फिर लगा लें।

5. पानी के भीतर पहुँचते ही शौच की इच्छा होती है। पर उसे इच्छा शक्ति से रोक रखना चाहिए ताकि पानी से मल फूल जाये। 20 मिनट में यह कार्य बहुत अच्छी तरह हो सकता है। न रोक सके तो तुरन्त शौच जा सकते हैं थोड़ा लाभ तब भी होगा।

6. कभी कभी ऐसा होता है कि कोलन का नीचे का भाग साफ़ होने, पानी कम देर रोकने, मल कड़ा होने अथवा बहुत ही कम पानी जाने के कारण पानी वैसा ही निकल जाता है। और जब कोलन बिल्कुल साफ़ हो जाता है तब भी पानी साफ़ निकलता है। इन दोनों अवस्थाओं का अन्तर जाँचने का सब से बड़ा यंत्र भूख है जो कोलन साफ़ होने पर असाधारण ढंग से लगती है।

7. यदि आप का कोलन बहुत समय से खराब है। और बार बार रेचक औषधियाँ खाकर अथवा अन्य कुचेष्टाओं से आपने अपने नाड़ी संस्थान को भी खराब कर लिया है तो पहली ही बार वस्ती करने से आपको उसके सब लाभ, कोलन की सफ़ाई, भूख, प्रफुल्लता इत्यादि नहीं प्रतीत होने लगेंगे। आप धैर्य रक्खें और बार बार किये जायें, अवश्य लाभ होगा। इसका प्रभाव औषधियों का सा नहीं है कि किसी को हो, किसी को नहीं। किन्तु जिस प्रकार पानी से नाली साफ़ होती है पर बहुत गंदी नाली देर में और कम गंदी शीघ्र, इसी प्रकार इसका प्रभाव अचूक है। शीघ्र या देर में सफ़ाई अवश्य होगी।

8. नाज़िल को चिकनाई के सहारे बहुत धीरे से गुदा में लगाना चाहिए शीघ्रता नहीं करना चाहिए। जब कब्ज़ में पुट्ठे तने होते हैं तो आरम्भ में कुछ कष्ट होता है। पर एक दो बार में कब्ज़ न रहने पर सुगमता हो जाती है।

9. कुछ लोग अज्ञान वश और कुछ चिकित्सक स्वार्थ वश प्रायः बहकाया करते हैं कि इस से हानि होती है। कोई कहेंगे कि यदि यह क्रिया की तो फिर शौच एनीमा से ही हुआ करेगा।

कोई उपहास करेंगे। पर आपको यह समझ लेना चाहिए कि आदि सृष्टि से अब तक जितने आयुर्वेद के प्रमाणिक ऋषि मुनि हुए हैं तथा महात्मा योगी हुए हैं वह सब ही इसकी बहुत प्रशंसा करते और आचरण में लाते आए हैं। आधुनिक विद्वान भी इसको हितकारी समझते और बड़े से बड़े तथा छोटे से छोटे चिकित्सालय में इसका प्रयोग होता है। यह सब होते हुए भी हमारा अपना सिद्धान्त यह है कि हम पुस्तककार किसी चीज़ को उसी समय करते हैं जब अनेकों बार परीक्षण कर लेते हैं। वस्ती कर्म को हम 45 वर्ष से उपयोग में ला रहे हैं। सैकड़ों नहीं हज़ारों बार इसके फल देख चुके हैं। अब तक किसी को भी हानि नहीं हुई न कोई उपद्रव हुआ। अतः हम तो यही समझते हैं कि आप बुद्धि और विश्वास से काम लें तो आप इसके आधार पर कभी भी रोगी न न होने का आनन्द उठा सकते हैं और स्वास्थ्य के अन्य नियमों का पालन करते हुए चिकित्सा योग्य प्रत्येक रोग को बिना विदेशी औषधियों के आरोग्य कर सकते हैं। यदि भारत सरकार करोड़ों रुपया टीका और अस्पतालों पर व्यय करने के स्थान में थोड़ा धन व्यय करके जनता में इन ही प्राकृतिक नियमों का प्रचार कराये तो जहाँ धन की बचत हो वहाँ रोगों की संख्या बहुत कम हो जाये और फिर इतने अस्पतालों की आवश्यकता ही न रहे।

उपदेश 19

ब्रह्मचर्य

स्वास्थ्य की उन्नति करने में ब्रह्मचर्य का महत्व किसी अन्य साधन से कम नहीं है। किन्तु अधिक ही है। हम कैसा ही उत्तम भोजन करें। खुली वायु में रहें। व्यायाम करें। पर वीर्य का संयम न करें तो सब व्यर्थ ही है और हम अवश्य रोगी हो जायेंगे। वास्तव में रोग कीटाणु से लड़ने की जितनी समता ब्रह्मचारी में होती है वह किसी में नहीं। ब्रह्मचारी स्वास्थ्य के अन्य नियमों की कभी अवहेलना भी कर जावे तो रोगी नहीं होगा। इसका कारण क्या है इस पर विचार करें :–

हम जो कुछ भोजन करते हैं, उसके दो भाग हो जाते हैं – स्थूल भाग तो मल रूप में बाहर निकल जाता है और दूसरा सूक्ष्म का रस बनता है। "रस" धातु पित्त की उष्णता से लाल होकर "रक्त" बनता है फिर वायु और अग्नि की उष्णता से युक्त होकर रक्त का "मांस" बनता है। उसके उपरान्त वह मांस वायु और अग्नि से मिल कर कफ़ के आश्रय से स्थिर होता है। और उस में सफ़ेदी आती है। जिस से मेद बनता है। फिर पृथ्वी, अग्नि, वायु आदि महा भूतों का समूह कफ़ से लिपटा हुआ उस मेद में कठोरता उत्पन्न करता है। जिस से अस्थि (हड्डी) बनती है। हड्डियों में वायु पोल उत्पन्न करता है। जिससे मेद उसमें भर जाता है। उस मेदोमय स्नेह को "मज्जा" कहते हैं। और अन्त को उस मज्जा का भी सार रूप जो स्नेह या स्निग्ध द्रव पदार्थ उत्पन्न होता है उसे "वीर्य" कहते हैं रस से लेकर वीर्य तक जो सात धातु हैं, उन सब का जो परम तेज है उसको "ओज" कहते हैं बल भी इसी का नाम है इसी से मांस की स्थिरता और पुष्टि, समस्त कार्यों में साहस स्वर और वर्ण की उत्तमता, एवं बाहय तथा आन्तरिक इन्द्रियों के अपने अपने अपने कार्यों में पटुता के गुण प्राप्त होते हैं। ओज, सौम्य, दुग्ध, सफ़ेद, शीत, स्थिर, मधुर, स्वच्छ, मृदु, चिकना और प्राणों का एकमात्र घर है। इस से शरीर

के अवयव व्याप्त रहते हैं। इसके नाश से मनुष्य का शरीर नष्ट होता है। मनुष्य के शरीर में जितना वीर्य अधिक सुरक्षित रहेगा उतना ही ओज अधिक उत्पन्न होगा। अतः वीर्य कितनी अमूल्य वस्तु है यह बुद्धि से विचारने से समझ में आता है। स्त्री और पुरुष दोनों के ही वीर्य बनता है और दोनों का स्वास्थ्य ब्रह्मचर्य द्वारा ठीक रहता है। इस विषय में जो अनुसन्धान हुआ है उस से ज्ञात हुआ है कि कम से कम 16 - 17 वर्ष तक लड़की को और 24-25 वर्ष तक लड़कों को अखंड ब्रह्मचर्य से रहने से स्वास्थ्य बहुत अच्छा हो जाता है और सुन्दरता भी बढ़ जाती है। पर इसका पालन तब ही होगा जब बालक उन नियमों का पालन करें जो हमारे प्राचीन शास्त्रों में बताए हैं यज्ञोपवीत व वेदारम्भ संस्कार के समय जो उपदेश बालक का पिता व आचार्य बालक को करता है, उसमें इन नियमों का वर्णन ऋषि दयानन्द जी महाराज ने संस्कार विधि में किया है। संस्कार चन्द्रिका में उसकी व्याख्या है इन दोनों ग्रन्थों का यह भाग हर बालक बालिका को पढ़कर उसी के अनुसार आचरण करना चाहिए। उसका सार यह है कि इस अवस्था तक बालकों को शौकीनी न करके सादा जीवन बिताना चाहिए। अबोध अवस्था के पश्चात गृहस्थ बनने तक भड़कीले वस्त्र न पहनें शीशें में देखकर मांग न निकालें। प्रातःकाल देर तक न सोवें। रात को देर तक न जागें। विषय सम्बन्धी स्त्री पुरुष के प्रेम की बातें न करें न ऐसे ग्रन्थ पढ़ें न सिनेमा देखें। हर समय अपना मन ज्ञान प्राप्ति और शरीर को बलवान बनाने में लगाए रखें। भोजन में चटपटे और खट्टे पदार्थ न खाकर सादा भोजन अन्न, फल, दूध, सब्जी अधिक खावें। उत्तेजक पदार्थ व औषधि का कभी सेवन न करें। युवा अवस्था के आरम्भ में बुरे लड़के व लड़कियां जब विषय सम्बन्धी बात छेड़ें तो अच्छे बालकों का कर्तव्य है कि उन से घृणा करें ऐसे बालकों के पास न बैठें और उनकी कुचेष्टा की बात उनके व अपने बड़ों को बता दें। व्यायाम करने का शौक़ बढ़ाने से वीर्य रक्षा की ओर प्रवृत्ति हो जाती है। माता पिता का भी कर्तव्य है कि इन बातों में लज्जा न कर बालकों को ब्रह्मचर्य का उपदेश करते रहें और उनकी देख

भाल भी रक्खें। विवाह हो जाने पर गृहस्थियों का जीवन भी संयम पूर्वक बिताने से बुढ़ापे में रोगों का कष्ट नहीं होता और बुढ़ापे तक उत्साह व उमंग बनी रहती है। धन पैदा करने की शक्ति भी रहती है। इससे लड़के बहुऐं सब आदर सत्कार करते रहते हैं और जो ब्रह्मचर्य न रखकर अथवा गृहस्थ आश्रम में संयम न कर के वीर्य का अधिक नाश कर देते हैं उन को बुढ़ापे में अनेकों रोग घेरते हैं तब घर वाले भी उनकी अवहेलना करते हैं क्योंकि संसार में मनुष्य का मान जब तक ही होता है जब तक वह दूसरों को सुख पहुँचाने का साधन बना रहे। इसके विपरीत होने पर अपमान होना आवश्यक है। अतः सुख और स्वास्थ्य के हितैषी को सर्वदा वीर्य को सुरक्षित रखकर अपने को शक्तिशाली बनाए रखना चाहिए। ब्रह्मचर्य विषयक उपदेश इस विषय के बड़े ग्रन्थों से पढ़ते रहना चाहिए। जो बिगड़ चुके हैं वह भी हिम्मत हार कर न बैठ जायें। वह भी अपना सुधार बहुत कुछ कर सकते हैं उसके साधन वैद्य लोग बतायेंगे। शक्ति की दवाओं के चक्कर में न पड़ जायें किन्तु प्राकृतिक साधनों से बहुत कुछ सुधार हो सकता है। इस पुस्तक का यह विषय नहीं है। हम तो यही कहेंगे कि ऐसी अवस्था ही न आने दो कि तुम्हें किसी वैद्य डाक्टर के पास जाना पड़े। इसके लिये सब से बड़ा साधन ब्रह्मचर्य है और साथ ही वह प्राकृतिक नियम हैं जो इस पुस्तक में बताए गए हैं।

उपदेश 20

नींद व विश्राम

स्वास्थ्य के लिये जैसे परिश्रम और व्यायाम आवश्यक है उसी प्रकार थके हुए अंगों को आराम देने और नष्ट हुई शक्ति को पुनः लौटाने के लिये उचित मात्रा में नींद व विश्राम की आवश्यकता है जब काम करते करते शरीर और मस्तिष्क थक जाये, उस समय कई घंटे निद्रा देवी की गोद में जाने से मस्तिष्क और सारा शरीर फिर से नवीन हो जाता है। इसका कारण यह है कि जाग्रत समय शरीर के सारे अंग अपना कार्य करते रहते हैं जिस से उनकी थोड़ी थोड़ी शक्ति कम होती रहती है। फिर सोने से इसका प्रतिकार इस प्रकार होता है कि उस समय हृदय तथा फुफ्फुस के अतिरिक्त सारे अंग आराम करते हैं। अर्थात् उनमें रक्त द्वारा नवीन कोष तो पहुंचते हैं और कार्य न करने के कारण उनके अपने पहले कोष सुरक्षित रहते हैं। जिससे उनकी खोई हुई शक्ति लौटने के पश्चात कुछ अधिक वृद्धि भी एक विशेष अवस्था तक हो जाती है। इसीलिये बालकों को युवकों की अपेक्षा और युवकों को वृद्धों की अपेक्षा नींद की अधिक आवश्यकता है। और इस से यह बात भी ध्यान में रखना चाहिए कि हमें पुरुषार्थ उसी कार्य में लगाना चाहिए जो काम ज्ञानयुक्त हो। व्यर्थ और हानिकारक कामों में अपने शरीर की क्षति नहीं करना चाहिए। नींद से जो लाभ हैं वह तभी प्राप्त होते हैं जब उसे उचित मात्रा में लिया जायें। छोटे बालकों को तो नींद के लिये शिक्षा देने की आवश्यकता नहीं क्योंकि वह स्वाभाविक ही ठीक मात्रा में नींद ले लेते हैं। न सोते हों तो समझो कोई रोग है। युवा अवस्था में 6 से 8 घंटे तक सोना उचित है 6 से कम और 8 से अधिक सोना स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को, स्वस्थ पुरुष की अपेक्षा रोगी को, बेकार बैठे रहने वाले की अपेक्षा शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम करने वालों को नींद की अधिक आवश्यकता होती है। छोटे बालकों, रोगी और जिसकी प्रतिष्ठा आप करते हैं उसे

सोते से न जगावें। जाड़ों में रात्री के १० बजे से प्रातः ६ बजे और गरमी में रात्री के ९ बजे से प्रातः ५ बजे के बीच में सोना अच्छा है। जब अत्यन्त गरमी पड़ती हो तो दिन में मध्यान के भोजन के उपरान्त थोड़े समय सोना लाभदायक है। अन्य ऋतु में हानिकारक है। हां बालक, रोगी, रात्रि में जागे हुए तथा किसी परिश्रम से अत्यन्त थके हुए, अन्य ऋतु में भी सो सकते हैं। यह याद रखना चाहिए कि बालकों को छोड़कर अन्य लोगों की आंख को दिन में सोने से कुछ हानि अवश्य होती है, तथा ब्रह्मचर्य अवस्था में भी बाधा पड़ने का भय है अतः यथा सम्भव दिन को न सोना ही अच्छा है ।

शौचालय, स्टाक रूम, भोजनालय, रोगीशाला इत्यादि सोने के स्थान से दूर होना चाहिए। और नीचे की अपेक्षा छत पर सोना अच्छा है। जहां की वायु सील युक्त (damp climate) हो वहां तो अवश्य ही छत के मकान में सोना हितकर है। वर्षा ऋतु में ओस से बचना चाहिए। जाड़ों में बन्द कमरा अच्छा है पर उसमें रोशनदान व खिड़की खुली रखें। केवल ठंडी वायु के तेज़ झोंके नंगे शरीर पर नहीं लगना चाहिए। यों ताज़ी वायु सर्वदा लाभदायक है।

अच्छी नींद लेने के उपाय

पलंग की अदवायन खूब खिंची हुई हो। सोने के कुछ समय पूर्व चित्त को चिन्ताओं से मुक्त कर लो। पलंग पर जाने से पूर्व गरमी में ठंडे तथा सरदी में गरम जल से मुंह हाथ धो पोछ कर लेटें। पलंग पर जाकर थोड़ी देर उस परमपिता परमात्मा को धन्यवाद दो जिसकी अनुग्रह से यह सब सुख साधन हमें मिलते हैं और आज का दिन कुशल पूर्वक बीता है। फिर उसी का ध्यान करते हुए सो जाओ। इस से नींद अच्छी आती है और बुरे स्वप्न भी नहीं दिखाई देते। अधिकतया सीधे करवट और भोजन के पश्चात बायें करवट लेटना चाहिए। अधिक चित्त लेटना अच्छा नहीं क्योंकि भोजन का पेट की रगों पर दबाव पड़ता है और रक्त संचालन में बाधा पड़ती है। जिस से बुरे स्वप्न दिखाई देते हैं और नींद उचट जाती है। सोते समय पैर फैलाए रखना चाहिए सकोड़ कर व कमर मोड़ कर सोना अच्छा

नहीं। यदि नींद उचट गई हो तो थोड़ी देर टहल कर हाथ मुंह धोकर चित्त लेट दो चार लम्बी गहरी स्वांस लो और फिर करवट लेकर सो जाओ। इतने पर भी नींद न आवे तो गरम पानी से स्नान करने से अवश्य नींद आ जाती है। यदि नित्य ही नींद न आवे तो कारण की खोज करके उसे दूर करना चाहिए। कब्ज़, वायु की अधिकता, चिंता, मस्तिष्क का बहुत ही थक जाना इत्यादि कारणों से प्रायः नींद में बाधा पड़ती है। सोते समय गरम दूध पीना तथा हाथ पैर दबवाना, सिर पर तेल मलवाना भी नींद में सहायक होता है। नींद लाने के लिये बालकों को अफ़ीम अथवा उस से बनी हुई कोई औषधि कदापि न देना चाहिए। इस से भयानक रोग उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार एलोपैथिक औषधि मारफ़िया इत्यादि उस समय तो नींद ले आती है पर कब्ज़, खुश्की इत्यादि अनेक रोगों को उपजाती तथा आंतों को ख़राब करती हैं। कालिज से ताज़े निकले नवयुवक डाक्टर प्रायः ऐसी औषधियों द्वारा अपनी योग्यता की धाक बिठाने का उद्योग किया करते हैं। इस से उनको तो धन का लाभ अवश्य होता है पर रोगी की तथा राष्ट्र की हानि ही होती है। अतः ऐसी औषधियां त्याज्य हैं।

उपदेश 21

॥ उपसंहार ॥

1. जिस प्रकार शरीर शुद्ध करने को स्नान, व्यायाम, बस्ती कर्म इत्यादि आवश्यक हैं, उसी प्रकार मकान, वस्त्र, सड़क, गली, नगर इत्यादि सब चीज़ों को शुद्ध पवित्र रखने से ही स्वास्थ्य ठीक रहेगा। रोग का कारण मल और आरोग्यता का कारण पवित्रता है। अतः प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि पवित्रता का प्रसार और अशुद्धि का निराकरण करे।

2. कितनी ही अधिक आय हो व्यय सर्वदा कुछ मितव्ययता से करना चाहिए। क्योंकि आय से अधिक व्यय करने वाला स्वस्थ नहीं रह सकता। भोजन में पोषण तत्व पर ध्यान रखो और वस्त्रों में दिखावा और दूसरे का अनुकरण छोड़, शुद्धताई और अपनी आय के अनुसार अपनी आवश्यकता पर ध्यान देकर और विवाह आदि उत्सव में देश की निर्धनता पर विचार करके व्यय करने से स्वास्थ्य अच्छा रह सकता है। आजकल कपड़ों के सम्बन्ध में बड़े बड़े हानिकारक फ़ैशन चल पड़े हैं इस में नहीं फंसना चाहिए। गरमी में कुर्ता धोती अथवा नेकर कमीज़ से काम चल सकता है। कोट किसी विशेष अवसर पर ही आवश्यक हो सकता है। सरदी में भी रुई की मिंज़ई अथवा एक दो ऊनी कपड़े पर्याप्त हैं बहुत न लादें। स्त्रियों को भी बहुत बहुमूल्य वस्त्र न पहनना चाहिए। थोड़ी चटक मटक तो उनके स्वभाव में है उसकी पूर्ति तो कर दो पर अपनी आय का सर्वदा ध्यान रखने से ही स्वास्थ्य ठीक रह सकता है। चिन्ता और ऋण स्वास्थ्य के शत्रु हैं इन से बचो।

3. ईषा, द्वेष, काम, क्रोध, अहंकार, हिंसा, झूठ, पर स्त्री गमन, चोरी, रिशवत, चोर बाज़ारी, देश द्रोह, राज द्रोह, अनावश्यक मुक़दमाबाज़ी, असन्तोष, चिड़चिड़ा स्वभाव, ऐंठ, कटुवचन इत्यादि सब स्वास्थ्य के शत्रु हैं इस से सर्वदा बचना चाहिए। आप कहेंगे कि इन बातों से स्वास्थ्य का क्या सम्बन्ध, पर यह

आपकी भूल है। इनमें से प्रत्येक बात का स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए क्रोध को ही लीजिये। आपने देखा होगा कि क्रोध में आंखें लाल हो जाती हैं और श्वांस शीघ्र शीघ्र आता है। इसका कारण यह है कि क्रोध से रक्त में एक उबाल आता है जिस से वह दूषित होकर आंख लाल कर देता है। उसकी शुद्धि करने के लिए अधिक ओषजन (oxygen) की आवश्यकता होती है। इसी कारण क्रोध में श्वांस शीघ्र शीघ आता है। फिर भी उसकी पूरी सफ़ाई नहीं हो पाती और रक्त दूषित होकर अनेक रोगों का कारण होता बनता है। बुखार, दस्त तो साधारण रोग हैं क्रोध से तपेदिक और पागलपन तक हो सकते हैं। हां जिस प्रकार किसी कार्य में संलग्न रहने और चिन्ता करने में अन्तर है इसी प्रकार क्रोध और मन्यु का अन्तर भी जान लेना चाहिए। यदि एक गुण्डा किसी अबला को असहाय पाकर उसे छेड़ने की कुचेष्टा करता है। अथवा कोई विदेशी शत्रु हमारे देश पर आक्रमण करता है। ऐसे समय हम शान्त और मौन रहें और उत्तेजित न हों तो यह हमारी भीरुता है ऐसी बात पर जो उत्तेजना उत्पन्न होती है वह क्रोध नहीं किन्तु मन्यु कहलाता है। जिसका न उत्पन्न होना हमारे वीर्य हीन और रोगी होने का चिह्न है। पर रास्ता चलते भूल से किसी भले मनुष्य की छड़ी हमारे कपड़ों से छू गई अथवा किसी निर्बल ने अज्ञान वश कोई ऐसा अपशब्द कह दिया जो हमारी शान के विरुद्ध है अथवा हमारे बालक व स्त्री से कोई भूल हो गई उस पर आपे से बाहर होकर हम आवेश में आयें यह क्रोध के लक्षण हैं जिसे त्यागना चाहिए। मन्यु की प्राप्ति की और क्रोध के दूर करने की वेद मंत्रों में प्रार्थना की गई है। और काम क्रोध हमारे शत्रु हैं ऐसा सब शास्त्र बताते हैं। इसी प्रकार ईषा द्वेष इत्यादि सब ही मानसिक व्याधियां हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती हैं। अतः इन सब से बचना चाहिए ।

अब अन्त में हम भगवान से प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभू हमारे नव स्वतंत्रता प्राप्त भारत देश के प्रत्येक नागरिक को ऐसी सदबुद्धि प्रदान करें कि वह ऋषि मुनियों के बताए वेद मार्ग पर चलकर स्वस्थ, बलवान और ज्ञानवान बनकर देश को फिर से प्राचीन काल की भांति समृद्धिशाली बनावें। और इस विषय में हम अपने पूर्वज भगवान राम, कृष्णा, भीम और अर्जुन का अनुकरण करें। जिससे संसार की वर्तमान अशान्ति जो वेद मार्ग छोड़ने से उत्पन्न हुई है दूर होकर संसार का कल्याण हो। यही कामना करते हुए हम आप से विदा होते हैं भगवान ने समय, स्वास्थ्य, शक्ति, और अवसर प्रदान किया और जनता ने हमारे इस 46 वर्ष के अनुभव से कुछ लाभ उठाया तो फिर किसी पुस्तक द्वारा पाठकों से भेंट करेंगे।

॥ ओ३म् शम ॥

रोगियों को स्वास्थ्य का संदेश

'यज्ञ-चिकित्सा' के आविष्कारक, सरकार द्वारा अनेकानेक बार पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त स्वर्गीय पूज्य डा० फुन्दनलाल जी अग्निहोत्री एम० डी०, डी० एस०, एम० आर० ए० एस० (लंदन) इत्यादि, मेडिकल आफ़िसर टी० बी० सेनेटोरियम की देश के विद्वानों तथा समाचार पत्रों द्वारा मुक्तकंठ और एक-स्वर से प्रशंसित पुस्तकें तथा कुछ दवायें।

हमारे प्रकाशन

(स्वर्गीय) डॉ. फुन्दनलाल अग्निहोत्री

एम.डी.,डी.एस.,एल.एम.आर.ए.एस.(लन्दन) द्वारा लिखित अन्य पुस्तकें :

डॉ. साहब की उपलब्ध पुस्तकों की कागज़ी प्रति (हार्ड कॉपी) से डॉ धुरेन्द्र शास्त्री अग्निहोत्री ने सॉफ्ट कॉपी तैयार की है। यह सभी पुस्तकें वेबसाइट पर निशुल्क Free download के लिए उपलब्ध हैं।

यज्ञ चिकित्सा (क्षय रोग की प्राकृतिक अचूक चिकित्सा)

यह पुस्तक डॉ. फुन्दन लाल जी द्वारा 1940 के लगभग T.B. पर किए गये शोध कार्य पर आधारित है। यह पुस्तक 1949 में छपी थी। उस समय T.B. उतनी ही गम्भीर व्याधि थी जितनी 1960 के दशक में कैंसर थी। उनके इस शोध कार्य पर ब्रिटिश सरकार ने डॉक्टर साहब को पुरुस्कृत करने के साथ जबलपुर में टी. बी.सेनिटोरियम का अध्यक्ष भी नियुक्त किया। सेनिटोरियम में उनकी शोध आधारित चिकित्सा की सफलता का परिणाम 80% पाया गया जबकि शेष 20% भी वह रोगी थे जो सेनिटोरियम में जगह न होने के कारण आस पास किराये की जगह ले कर चिकित्सा करा रहे थे और उसका व्यय वहन न कर पाने के कारण बीच में ही चिकित्सा छोड़ कर चले गये थे।

उनकी चिकित्सा में गाय का दूध, घी, छाछ आदि पदार्थ भी उपयोग होते थे और इन पदार्थों की आपूर्ति के लिए सेनिटोरियम में ब्रिटिश सरकार से स्वीकृत एक गौशाला भी थी ताकि गायों और गौशाला की स्वच्छता और उचित भोजन से इन पदार्थों की अनुकूल गुणवत्ता बनी रहे।

आज़ादी के बाद भारतीय सरकार को सेनिटोरियम में गौशाला होने से भयंकर आपात्ति थी और वह इसे हटाने पर अडिग थी। उस समय के प. रवि शंकर शुक्ला, मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद (यूनियन मिनिस्टर) डॉ राजेंद्र प्रसाद (संविधान सभा के अध्यक्ष, भारत के पहले राष्ट्रपति) आदि जैसे दिग्गज नेताओं को अज्ञात कारणों से यह बात समझने में नहीं आ सकी कि गाय, और गौ शाला की स्वच्छता और उसके भोजन आदि से उसके दूध की गुणवत्ता में भी कुछ फर्क आ सकता है और सारी की सारी सरकारी मशीनरी इस बात पर अडिग रही कि गौशाला हटा कर इन उत्पादों को आउटसोर्स किया जाये। डॉक्टर साहब ने इस बात पर समझौता करना उचित नहीं समझा और सेनिटोरियम के अध्यक्ष पद से त्यागपत्र दे कर अपनी निजी प्रैक्टिस करने का निर्णय लिया और जबलपुर से स्थान परिवर्तन करके उत्तर प्रदेश के बरेली शहर में बापस आ गए और अनेक वर्षों तक अपनी निज़ी प्रैक्टिस की। 15 दिसम्बर 1962 , सायं 4 बजे 82 वर्ष की आयु में उनका निधन हुआ ।

देवयज्ञ

1941 में प्रकाशित इस पुस्तक में डॉक्टर साहब ने न केवल हवन यज्ञ की वैज्ञानिक विवेचना से उसके कृमि नाशक गुणों पर प्रकाश डाला है बल्कि यह गुण किस प्रकार और कैसे आते हैं, आदि सभी बातों की चर्चा करते हुए संक्रामक रोगों में यज्ञ की भूमिका और उसके महत्व, दैनिक यज्ञ से रोगों से वचाब आदि की भी चर्चा करके हुए यह भी बताया है कि किस रोग की हवन सामग्री में कौन कौन सी जड़ी बूटियां तथा अन्य पदार्थों का किस मात्रा में किस प्रकार से सम्मिश्रण किया जाना चाहिए। इस प्रकार विभिन्न रोगों की हवं सामिग्री के नुस्खे और

ऋतुओं के अनुसार रोग रक्षक हवन सामग्री के नुस्खे इस पुस्तक की विशेषता हैं। साथ ही यह पुस्तक उन भ्रान्तियों को भी दूर करने में सक्षम है जो लकड़ी जलाने से संभावित हानि के विषय में फैलाई गई हैं और किस प्रकार से हवन करने से उन हानियों को लाभ में परिवर्तित किया जा सकता है। अर्थात हवन यज्ञ करने की सही और वैज्ञानिक और लाभकारी विधि जो धार्मिक रिवाजों पर आधारित न होकर पूर्णतया विज्ञान सम्मत बातों पर आधारित है।

आयुर्वेदिक प्राकृतिक चिकित्सा

यह पुस्तक कुछ देर से 1955 में छपी थी। कुछ देरी से छपने का कारण यह था कि पुस्तक लिखी जाने के बाद डॉक्टर साहब ने तत्कालीन लोकसभा अध्यक्ष श्री गणेश वासुदेव मावलणकर जी से पुस्तक का आमुख लिखने का अनुरोध किया। मावलणकर जी ने आमुख लिखने की एक शर्त रखी कि वह पूरी पुस्तक स्वयं पढ़े बिना आमुख नहीं लिखेंगे और व्यस्तता , समयाभाव आदि के कारण वह यह नहीं बता सकते की उन्हें इस कार्य में कितना समय लगेगा। वास्तव में उन्होंने पूरी पुस्तक पढ़ कर ही अपने विचार उदागर किए और इस कार्य में उन्हें अप्रत्याशित समय लगा क्योंकि उन्होंने अपने व्यस्त कार्यक्रमों के बीच थोड़ा थोड़ा समय निकाल कर इसे शुरू से अंत तक धीरे धीरे पढ़ा। अपने आमुख में एक जगह उन्होंने लिखा " उन्होंने हरेक चीज़ वेदों में थी ऐसा प्रस्थापित करने का जो प्रयास किया है उसमें मुझे तो शास्त्रीय पद्दति से ज्यादातर उनका वेदों पर प्रेम और भक्ति मालूम होती है। जो उन्होंने कहा है वह सव वेदों में हो या न हो लेकिन वह सत्य है और उनकी बात को स्वीकार करने में ही भारत जैसे गरीब देश में बिना खर्च या बहुत थोड़े खर्च से जनता के आरोग्य का और बीमारियों के उपचार करने का सवाल आसानी से और ऊंचे ढंग से और शास्त्रीय रीति से हल हो सकता है ऐसा दिखाई पड़ता है।

इस पुस्तक में डॉक्टर साहब ने जहाँ सप्रमाण यह प्रस्थाप्रित किया है सब ही प्रचलित चिकित्सा विधियों का जन्मदाता आयुर्वेद है और एक सफल चिकित्सक

को सब ही चिकित्सा विधियों का ज्ञान होना भी आवश्यक है। केवल धन कमाने के उद्देश्य से दवा वेचना और किसी एक चिकित्सा विधि का ज्ञान प्राप्त कर हर प्रकार और हर प्रकृति के रोगी पर एक ही चिकित्सा विधि का प्रयोग करते रहना और दूसरी सब विधियों का विरोध करना मनुष्य धर्म के विरुद्ध है वहां अपने 50 वर्षीय अनुभव के आधार पर चिकित्सा के उन साधनों का भी वर्णन किया है जो रोगों के उपचार और उन्मूलन में अपना महत्व रखते हैं।

पुस्तक में प्रचलित चिकित्सा के सम्बन्ध में उसके ही विद्द्वानों की सम्मति , प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास और वर्णन कि उसके लाभ देख कर किस प्रकार बड़े बड़े प्रसिद्ध ऐलोपैथिक डॉक्टरों ने उसे अपनाया, वैदिक जल चिकित्सा, अमेरिका का न्यू हाइजीन ट्रीटमेंट, रोग का वास्तविक कारण, भोजन, उपवास, आदि विषयों की विवेचना के साथ साथ अनेक रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा का भी वर्णन किया गया है ।

नोट : यह सभी पुस्तकें इस वेबसाइट पर Free Download के लिए उपलब्ध हैं।

डॉ. धुरेन्द्र शास्त्री अग्निहोत्री बी.एम.एस.,एम.डी.(ए.एम.),एम.डी.(नेचुरोपैथी), ए.आई.ए.सी.एच. (ग्रीस) द्वारा विचाराधीन पुस्तकें :

क्योंकि डॉ. धुरेन्द्र के पूज्य पिता डॉ. श्री फुन्दन लाल जी का देहांत उनकी किशोरावस्था में ही हो गया था जिस कारण उन्हें अपने पिता से चिकित्सा सम्बन्धी विशिष्ठ ज्ञान प्राप्त करने का अवसर तो नहीं मिल सका. तथापि उतने समय के सानिध्य से जितना कुछ भी समझ सके थे, उसके आधार पर उन्होंने होम्योपैथी में ज्ञान प्राप्त करने का निर्णय लिया और होम्योपैथी में बैचलर ऑफ़ मेडिसिन एंड सर्जरी (B.M.S.) की उपाधि प्राप्त की। जब वह इस पाठ्यक्रम के अंतिम बर्ष में थे, उनकी पूज्य माता को कैंसर हुआ और वह यह देख कर गहरा सदमा और आश्चर्य हुआ कि जिस चिकित्सा विधि को वह सर्वोपरि समझ रहे थे उसमें अत्यंत निपुण एवं अनुभवी ऐसे डॉक्टर जिनके पास लगभग 100 रोगी नित्य आया करते थे, उनके मार्गदर्शन में पूरी तन्मयता से चिकित्सा करने के

बाद भी उनकी माता बच न सकीं। इस घटना ने उन्हें यह सोचने पर मजबूर किया कि कहीं न कहीं होम्योपैथी में कुछ कमी तो है और वह उसे ढूंढने में लग गये। उन्होंने पाया कि होम्योपैथी के भी प्राचीन ग्रंथों में गम्भीर रोगों की चिकित्सा में औषधियों के साथ अनेक उपसाधनों का भी जिक्र है जो नेचुरोपैथी पर आधारित थे। साथ ही उन्होंने अपने पूज्य पिताजी की उन पुस्तकों का भी दुबारा अध्ययन किया जिन्हें उन्होंने बचपन में आधी अधूरी समझ के साथ पढ़ा था। साथ ही उन्होंने अपने पूज्य पिताजी की एक ऐसी पुस्तक “आहार चिकित्सा” जिसका प्रकाशन नहीं हो सका था लेकिन उसकी हस्त लिखित प्रतिलिपि कुछ जीर्ण क्षीर्ण अवस्था में उपलब्ध थी, उसे भी पढ़ा। इस सब से उन्हें यह समझ में आया कि त्वरित (एक्यूट) बीमारियों में तो होम्योपैथी अपने आप में बहुत कारगर है लेकिन क्रोनिक और गंभीर रोगों के सफल, सम्पूर्ण और स्थायी उपचार के लिए उसके साथ साथ नेचुरोपैथी को भी अपनाना आवश्यक है और इस सबमें भोजन तो सर्वोपरि है जिसे ठीक किए बिना अच्छी से अच्छी दवा भी अपना काम नहीं कर सकती। अतः इन विधियों को भी अपनी चिकित्सा में शामिल करने के लिए उन्होंने M.D.(A.M.) और M.D.(Nat.) की शिक्षा भी ली। साथ ही अपने होम्योपैथी के ज्ञान को और पुख्ता करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण पुरुस्कार the **Right Livelihood Award** (also known as the "Alternative Nobel Prize") के साथ साथ अन्य कई पुरूस्कार प्राप्त Shree George Vithoulkas ग्रीस द्वारा प्रस्थापित इंटरनेशनल एकेडेमी ऑफ़ क्लासिकल होम्योपैथी से होम्योपैथी के एडवांस शिक्षा भी प्राप्त की।

उन्होंने सभी गम्भीर रोगों की अपनी चिकित्सा पद्धति में होम्योपैथी के साथ, घर पर ही की जा सकने योग्य नेचुरोपैथी, भोजन सुधार , योग, एक्यूप्रेशर और हेर्बलिस्म का समन्वय करके गम्भीर रोगों से जूझ रहे अनेक रोगियों का सफल उपचार किया। यद्दपि बहुत देर से, लेकिन अब 79 वर्ष की आयु में परमपिता परमात्मा ने उनके मन में विचार उत्पन्न किया कि इस समन्वित

चिकित्सा विधि द्वारा गम्भीर रोगों की सफल चिकित्सा के विस्तृत विवरण को पुस्तकों का रूप दे दिया जाये जिससे उनके जीवनोपरान्त भी यह ज्ञान इच्छुक चिकित्सकों और रोगियों का मार्गदर्शन करता रहे ।

हांलाकि यह लेखन कार्य अभी अपनी विल्कुल प्रारम्भिक अवस्था में है, फिर भी यहां इसकी चर्चा केवल इस उद्देश्य से करना प्रासंगिक लगा ताकि यह डॉ. धुरेन्द्र का संकल्प बन कर उन्हें इस कार्य को जल्द से जल्द अपने अंजाम तक पहूंचाने की प्रेरणा देता रहे।

क्योंकि स्वस्थ बने रहने और रोगोपचार दोनों में ही उचित आहार का महत्वपूर्ण योगदान है और भोजन सुधार के बिना किसी भी चिकित्सा विधि से गम्भीर रोग कदापि ठीक नहीं किए जा सकते इसलिए हम सर्वप्रथम इस विषय पर पुस्तक उपलब्ध करने का विचार रखते हैं। उसके बाद दूसरे आवश्यक साधन योग, प्राणायाम आदि पर और उसके बाद ओबेसिटी (मोटापा) जो अपने आप में एक गम्भीर समस्या होने के साथ अनेक दूसरी गम्भीर बीमारियों का जन्मदाता भी है। उसके बाद एक एक करके क्रमशः दूसरी गम्भीर बीमारियों के सफल और स्थायी उपचार से सम्बंधित। प्रभु हमें इस कार्य की शीघ्र पूर्ण करने की शक्ति और सामर्थ्य प्रदान करें ऐसी प्रार्थना है।

विचाराधीन पुस्तकों की सूची

1. भोजन और स्वास्थ्य : (स्वास्थ्य और उपचार में भोजन का महत्व)
2. व्यापक योग
3. मोटापा कारण और निवारण
4. कैंसर कारण और निवारण
5. हृदय रोग कारण और निवारण
6. डायबिटीज कारण और निवारण

7. वात रोग कारण और निवारण
8. श्वसन रोग कारण और निवारण
9. पाचन रोग कारण और निवारण
10. यकृत के रोग कारण और निवारण
11. किडनी के रोग कारण और निवारण
12. महिलाओं के रोग कारण और निवारण

हमारे हर्बल उत्पाद

सामान्यतया हर्बलिज्म का मतलब आयुर्वेदिक समझ लिया जाता है जबकि दोनों में थोड़ा अन्तर है। जड़ी बूटियों का उनके प्राकृतिक रूप में उपयोग हर्बलिज्म में आता है जब कि आयुर्वेदिक दवाओं में जड़ी बूटियों को कच्चे मॉल की तरह उपयोग करके उनका प्रसंस्करण किया जाता है। जड़ी बूटियों के प्राकृतिक रूप में उनका रस, छायादार धूप में सुखा लेना, उनका पाउडर ही सम्मिलित है जो बिना किसी प्रसंस्करण के किया जाता है. उदाहरण के रूप में हम कह सकते हैं कि प्राकृतिक सब्जियों, सलाद, उबली हुई सब्ज़ी, मसाले दार सब्ज़ी और पनीर की सब्ज़ी, या दूध और मावा, दूध से बनी मिठाइयां आदि में जो अंतर है कुछ वैसा ही अंतर हर्बलिज्म और आयुर्वेदिक दवाओं में है. जिस प्रकार किसी रोग स्थिति में कुछ सब्जियां, फल आदि लाभप्रद और कुछ हानिकारक हो सकती हैं; उसी तरह रोग अवस्था में कुछ जड़ी बूटियां उस रोग के उपचार में अत्यंत सहायक होती हैं और उनके उपयोग में उन व्यक्तियों को भी कोई हानि नहीं होती है जिन्हें आयुर्वेदिक दवाओं से असुविधा होती है।

स्वास्थ्य भण्डार के सभी उत्पात अत्यंत विशिष्ट हैं और केवल हमारे पास ही उपलब्ध हैं। हमने जानबूझ कर इनके व्यापक मार्केटिंग का प्रयास नहीं किया है क्योंकि ऐसा करने से:

1. इनकी कीमत कई गुना बढ़ जाएगी। और
2. इसके लिए हमें बाज़ार में अपनी स्थिति मज़बूत बनाने के लिए व्यावसायिक रणनीतियों को भी अपनाना पड़ेगा, जिससे हमारे उत्पादों की प्रभावशीलता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

हमारे सभी उत्पाद बिल्कुल प्राकृतिक हैं और इनमें किसी भी प्रकार के प्रिजर्वेटिव, एडिटिव, रंग, गंध आदि का उपयोग नहीं किया गया है।

हमारे हर्बल उत्पादों की सूची

A. सामान्य चूर्ण (पाउडर)

SR. NO.	नाम	कोड	उपयोग
1	**अश्वगंधा**	101	किसी भी प्रकार की व्यग्रता, उत्कंठा , तनाव आदि में राहत देकर आरामदायक, प्राकृतिक नींद देने और संज्ञानात्मक कार्यप्रणाली को सक्षम बनाने में मददगार।
2	**आमला**	102	विटामिन सी का अदभुत शक्ति श्रोत, एक शक्ति शाली रोग प्रतिरोधक क्षमता और श्वेत रक्त कोशिकाओं को बढ़ाने वाला, एंटी ऑक्सीडेंट्स, फाइटोकेमिकल्स से भरपूर, ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस और सूजन को कम करने में सक्षम जो कई गम्भीर बीमारियों का कारण बनती है। शरीर से प्राकृतिक रूप से विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने और मस्तिष्क की कार्य क्षमता बढ़ाने में समर्थ।

3	**अर्जुन**	103	एक अच्छा एंटीऑक्सीडेंट, टैनिंस और ग्लाइकोसाइड्स युक्त, फ्री रेडिकल्स से लड़ने में सक्षम, हार्ट की मांसपेशियों और रक्त वाहिकाओं का रक्षक, धमनियों को चौड़ा करने और धमनियों में जमे द्रव्यों को गलाने, पिघलाने में सक्षम।
4	**ब्राह्मी**	104	एक शक्ति शाली एंटी ऑक्सीडेंट्स, सूजन कम करने और मस्तिष्क की कार्य क्षमता को बढ़ाने में सक्षम। इसमें मौजूद बाकोसाइड्स मस्तिष्क की कोशिकाओं में समन्वय बनाने, याददाश्त, ध्यान, और नए ज्ञान को लम्बे समय तक याद रखने की क्षमता को बढ़ाने में सक्षम। कोर्टिसोल को संतुलित करके शारीरिक और भावनात्मक तनाव को कम करने में सक्षम। इसका नियमित उपयोग शांति और संतुलन को बढ़ा कर एकाग्रता, मानसिक सहन शक्ति, और सूचना प्रसंस्करण गति में सुधार करता है जिससे बच्चों और व्यस्कों में ए डी एच डी के लक्षणों को प्रतिबंधित करने में मदद करता है। इसके शांत और शामक गुण मानसिक बक बक को कम करने और बेहतर नींद की गुणवत्ता को बढ़ावा देने में मदद करते हैं।
5	**हरीतकी**	105	इम्यूनिटी वर्धक, पाचक रसों का उत्पादन और अवशोषण बढ़ाकर पाचन सुधार में सक्षम। इसमें मौजूद टैनिंस और फ्लेवोनॉयड्स शरीर से विषहरण करके उसकी सफाई में सहायक। लिवर, खून और गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल ट्रैक्ट से टॉक्सिन और व्यर्थ पदार्थों

			को बाहर निकाल कर शरीर की प्राकृतिक सफाई में सहायक।
6	**पिप्पली**	106	इम्यूनिटी और चयापचय बढ़ाने, टॉक्सिंस निकालने, पाचन और अवशोषण में सहायक। वायु मार्ग से बलगम को साफ़ करने में मदद करता है और अस्थमा ब्रोंकाइटिस आदि जैसी स्थितियों के प्रबंधन में सहायक।
7	**पुनर्नवा**	107	शरीर को उत्कृष्ट रूप से फिर से जीवंत करता है। वात, पित्त और विशेष रूप से कफ़ को शांत करता है। पाचन तंत्र को उत्तेजित करता है। यकृत, गुर्दे, हृदय और जोड़ों के लिए एक प्रसिद्ध टॉनिक। फेफड़ों और श्वसन पथ में अतिरिक्त कफ़ को भी पिघलाने में सक्षम।
8	**सफ़ेद मुसली**	108	एक भारतीय वियाग्रा, एक प्राकृतिक प्रजनन समाधान, स्वस्थ शुक्राणुओं की मात्रा बढ़ाने में सक्षम, हार्मोनल संतुलन के सुधार में सक्षम, थायराइड और अनियमित मासिक धर्म की समस्याओं के नियंत्रण में सहायक, रक्त शर्करा के नियंत्रण और इंसुलिन संवेदनशीलता के सुधार में सहायक, साथ ही गठिया, चिंता और अवसाद में भी सहायक।
9	**शतावरी**	109	सैपोनिन और, रेसमोफुरन से समृद्ध, एंटीऑक्सिडेंट, सूजन निरोधी, मूत्रवर्धक, क्षमताओं से भरपूर; प्रतिरक्षा को बढ़ावा देने, निर्जलीकरण और इलेक्ट्रोलाइट असंतुलन का प्रबंधन करने में सक्षम;

			गैस्ट्रिक अल्सर, गुर्दे की पथरी के इलाज़ में अत्यंत सहायक, कोलेजन टूटने को रोकने, इंसुलिन उत्पादन में सुधार करने में भी सक्षम।
10	**शंखपुष्पी**	110	संज्ञानात्मक बूस्टर - स्मृति, फोकस और समस्या को सुलझाने के कौशल को बढ़ाने में सक्षम। अवसादग्रस्तता-विरोधी, चिंता-विरोधी, शांति और मानसिक स्पष्टता प्रदान करने में सक्षम। न्यूरोप्रोटेक्टिव गुणों के साथ एक शक्तिशाली मस्तिष्क टॉनिक के रूप में कार्य करने में सक्षम।
11	**सितोपलादि**	111	श्वसन संबंधी विकारों का एक प्राचीन अच्छी तरह से सिद्ध समाधान - ब्रोंकाइटिस, अस्थमा, सीओपीडी, तपेदिक, खांसी, साइनासाइटिस, एलर्जिक राइनाइटिस, हथेलियों और पैरों में जलन आदि में प्राचीन काल से उपयोग में। इसके प्रमुख गुणों में कफ निस्सारक, सूजन निरोधी, और प्रतिरक्षा - संशोधक होना शामिल है। यह फेफड़ों और वायुमार्ग से कफ और बलगम को ढीला करने और बाहर निकालने में मदद करने के लिए एक कफ निस्सारक के रूप में कार्य करने और सांस लेना आसान करने के लिए वर्षों से जाना जाता है।
12	**त्रिफ़ला 1:2:4**	112	इसमें विटामिन सी, फ्लेवोनोइड्स, पॉलीफेनोल्स, टैनिन, सैपोनिन और अन्य शक्तिशाली पौधीय यौगिक होते हैं। एंटीऑक्सिडेंट, डिटॉक्सिफायर, रेडियोप्रोटेक्टिव, केमोप्रोटेक्टिव में उच्च, आहार, प्रतिरक्षा, चयापचय, पाचन को बढ़ावा देने, हृदय

			रोग, कुछ कैंसर, मधुमेह और समय से पहले उम्र बढ़ने के जोखिम को कम करने में सक्षम।
13	**त्रिफ़ला 1:2:4 (केवल छोटे टुकड़ों में तोड़ा हुआ)**	113	इसमें विटामिन सी, फ्लेवोनोइड्स, पॉलीफेनोल्स, टैनिन, सैपोनिन और अन्य शक्तिशाली पौधीय यौगिक होते हैं। एंटीऑक्सिडेंट, डिटॉक्सिफायर, रेडियोप्रोटेक्टिव, केमोप्रोटेक्टिव में उच्च, आहार, प्रतिरक्षा, चयापचय, पाचन को बढ़ावा देने, हृदय रोग, कुछ कैंसर, मधुमेह और समय से पहले उम्र बढ़ने के जोखिम को कम करने में सक्षम। आंखों की दृष्टि रक्षा, कई रोग और दृष्टी वर्धन में सक्षम। साबुत होने के कारण इसे भिगोए हुए पानी से आँखें धोने के लिए भी उपयुक्त।

B. हमारी विशिष्ट उपयोगों की हर्बल चाय

1	**हर्बल टी - रेगुलर**	201	सीटीसी या ग्रीन टी का एक स्वस्थ विकल्प। एंटीऑक्सिडेंट, और एडाप्टोजेन से समृद्ध (एडाप्टोजेन्स अर्थात् ऐसे गैर-विषाक्त - पौधे, जड़ी-बूटियाँ जो शरीर को शारीरिक, मानसिक और रासायनिक तनावों का बेहतर ढंग से सामना करने में मदद करते हैं, शरीर को एक स्थिर अवस्था में लाने में मदद करते हैं, सहनशक्ति, ध्यान और मानसिक कार्यक्षमता को बेहतर बनाने में सहायक होते हैं। प्रतिरक्षा और चयापचय को बढ़ावा देते हैं।

2	**हर्बल टी - स्रोतास**	202	धमनियों के अवरोधों को दूर करने, बी पी और हृदय की अन्य समस्याओं को ठीक करने में मदद करती है। सीटीसी और/या ग्रीन टी के बदले नियमित रूप से सेवन करने पर हृदय की समस्याओं और कैंसर के लिए एक निवारक के रूप में भी कार्य करती है। हृदय की समस्याओं में सर्वोत्तम परिणामों के लिए हृदयामृत के साथ उपयोग करें। इस प्रकार की समस्याओं में आहार और जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण उपचार के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
3	**हर्बल टी - अंग स्थिरा**	203	रुमेटिक रोगों, जोड़ों के दर्द, गठिया, और अन्य सभी वात रोगों के उपचार में सहायक। इस प्रकार की समस्याओं में आहार और जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण उपचार के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
4	**हर्बल टी - प्राण**	204	अस्थमा, सीओपीडी, क्रोनिक ब्रोंकाइटिस आदि पुरानी श्वसन समस्याओं के उपचार में सहायक। इस प्रकार की समस्याओं में आहार और जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण उपचार के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
5	**हर्बल टी - नियंत्रा**	205	मधुमेह के उपचार में सहायक, इसे अपने नियमित सीटीसी या ग्रीन टी के विकल्प के रूप में उपयोग करें। मधुमेह में आहार और जीवन शैली सम्बन्धी

			दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण निवारण के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
6	**हर्बल टी - परिजात**	206	एक प्राकृतिक एनाल्जेसिक, सूजन निरोधी यौगिकों, फ्लेवोनोइड्स और ग्लाइकोसाइड से भरपूर। गठिया आदि जैसी स्थितियों के उपचार में उल्लेखनीय मदद मिलती है। शरीर के पुराने दर्द को कम करती है, रक्त परिसंचरण को बढ़ाकर सूजन और दर्द को कम करती है।
7	**हर्बल टी - आम पत्र**	207	फ्लेवोनोइड्स और एंटीऑक्सिडेंट, विटामिन सी, पॉलीफेनोल्स, मैंगिफेरिन से भरपूर। रक्त शर्करा, रक्तचाप, एसिड रिफ्लेक्स, गैस्ट्रिक अल्सर, तनाव और चिंता को नियंत्रित करने में मदद करती है। यकृत और गुर्दे के कार्य का भी समर्थन करती है।
8	**हर्बल टी - अमरूद पत्र**	208	एंटी-इंफ्लेमेटरी, एंटी-माइक्रोबियल , एंटीऑक्सिडेंट, विटामिन ए और सी से भरपूर पाचन स्वास्थ्य का समर्थन करती है। बी पी और कोलेस्ट्रॉल, एल डी एल को नियंत्रित करती है।, इंसुलिन संवेदनशीलता में सुधार करती है। मुक्त कणों से लड़ने में भी सक्षम।
9	**हर्बल टी - शीतहारी**	209	खांसी और जुकाम से तेजी से राहत दिलाने में मदद करती है। खांसी और सर्दी के कारण होने वाली बेचैनी, संताप और असहजता से शीघ्र राहत प्रदान करती है। ज्यादा अच्छे परिणामों के लिए इसके साथ साथ शीतहारी चूर्ण का भी सेवन करें।

C. हमारे प्राकृतिक मधुरक (स्वीटनर्स)

1	**रॉ शहद**	301	हिमालय की बहुत ऊंचाई वाली घाटियों से इकठ्ठा किया गया, सरकारी मान्यता प्राप्त लैब में जांचा, परखा, कच्चा जैविक प्राकृतिक 100% शुद्ध शहद।
2	**स्टीविया की सूखी पत्तियां**	302	शून्य कैलोरी, शून्य कार्बोहाइड्रेट और खनिजों के एक बंडल से युक्त, रिफाइंड चीनी का बिल्कुल हानिरहित और स्वस्थ विकल्प। सूरज की छायादार धूप में सुखाई गई स्टीविया की सूखी पत्तियां। बिल्कुल असंसाधित और किसी योजक या परिरक्षक के प्रयोग के बिना। आयरन, प्रोटीन, फाइबर, पोटैशियम, विटामिन ए और विटामिन सी जैसे पोषक तत्वों से भरपूर। रक्तचाप को नियंत्रित करने और हृदय रोगों के जोखिम को कम करने में, रक्त शर्करा के अवशोषण को कम करने में, और वजन घटाने में सहायक। अधिक मीठा खाने की इच्छा को कम करने में भी सहायक।
3	**स्टीविया का पाउडर**	303	ऊपर वर्णित सूरज की छायादार धूप में सुखाई गई स्टीविया की सूखी पत्तियों का पाउडर। बिल्कुल असंसाधित और किसी योजक या परिरक्षक के प्रयोग के बिना। उपरोक्त सभी गुणों से युक्त, केवल उपयोग में आसान कर देने के लिए पीसी गई स्टीविया की पत्तियों का पाउडर।

D. हमारे अपने फॉर्मूलेशन्स (प्राकृतिक जड़ी बूटियों का मिश्रण)

OUR PROPRIETARY FORMULATIONS

1	**शीतहारी चूर्ण**	401	सर्दी, खांसी, जुकाम आदि में तेज़ी से राहत दिलाने में सक्षम। इस प्रकार की समस्याओं से होने वाली बेचैनी, आकुलता, व्याकुलता, व्यग्रता आदि से शीघ्र राहत देने में अत्यन्त लाभकारी। सर्वोत्तम परिणामों के लिए सौम्य शीतहारी चाय के साथ उपयोग करें।
2.	**हृदयामृत**	402	धमनियों के ब्लाकेज आदि सहित हृदय के समस्त रोगों के लिए एक आदर्श हर्बल उत्पाद। सर्वोत्तम परिणामों के लिए हर्बल टी - स्रोतास के साथ उपयोग करें। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित आहार, जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
3	**हृदय - वासासान्तक**	403	कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड्स को कम करने के लिए एक आदर्श और प्रभावी हर्बल उत्पाद। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित आहार, जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
4	**संधि - वातान्तक**	404	जोड़ों के दर्द, आर्थराइटिस, गठिया, और सभी आमवाती समस्याओं के लिए एक आदर्श और प्रभावी हर्बल उत्पाद। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित आहार, जीवन शैली सम्बन्धी

			दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
5	**दमनान्तक चूर्ण**	405	पुरानी श्वसन समस्याओं जैसे अस्थमा, सी ओ पी डी, क्रोनिक ब्रोंकाइटिस आदि के लिए एक प्रभावी हर्बल उत्पाद। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित आहार, जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
6	**मधुहारी**	406	मधुमेह (डायबिटीज) के लिए एक प्रभावी हर्बल उत्पाद। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित आहार, जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
7	**LIV - SB**	407	लिवर को डिटॉक्सीफाई करने और फैटी लीवर, पीलिया, हेपेटाइटिस, जलोदर, सिरोसिस आदि जैसी लिवर संबंधित समस्याओं को ठीक करने के लिए एक प्रभावी हर्बल उत्पाद। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित आहार, और जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
8	**वात-सोनीतान्तक**	408	यूरिक एसिड को कम करने के लिए एक प्रभावी हर्बल उत्पाद। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित आहार, जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।

9	**रक्तचापान्तक**	409	उच्च रक्तचाप को कम करने के लिए एक प्रभावी हर्बल उत्पाद। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित आहार, जीवन शैली सम्बन्धी दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
10	**मूत्रघटान्तक**	410	मूत्र ट्रैक में संक्रमण (UTI) के लिए एक प्रभावी हर्बल उत्पाद। इस प्रकार के रोगों में वांच्छित दिशानिर्देशों और सम्पूर्ण चिकित्सा के लिए हमारी वेबसाइट देखें।
11	**मेध्या**	411	मस्तिष्क की कार्य क्षमता को बढ़ाने, मानसिक सहन शक्ति, शांति और संतुलन बनाने, स्मृति, फोकस और समस्या सुलझाने के कौशल को बढ़ाने, एकाग्रता, ध्यान, याददाश्त और नए ज्ञान को लम्बे समय तक याद रखने की क्षमता को बढ़ाने में अद्वितीय। कोर्टिसोल को संतुलित करके शारीरिक और भावनात्मक तनाव को कम करने में सक्षम। विद्यार्थियों, मस्तिष्क सम्बन्धी कार्य करने वालों और तनाव पूर्ण परिस्थितियों में कार्य करने वालों के लिए अत्यन्त लाभकारी और अवश्य सेवनीय शक्तिशाली मस्तिष्क टॉनिक।
12	**पाचक रसायन**	412	पाचन तंत्र में प्राकृतिक रूप से सुधार करता है।
13	**टेस्टोजाइम**	413	पेट की समस्याओं जैसे अपच, मंदाग्नि, एसिडिटी, गैस, भूख या स्वाद की कमी, अफरा, आदि को ठीक करने के लिए एक प्रभावी उत्पाद।

14	**नितान्त**	414	हर तरह के कब्ज जैसी समस्याओं का प्राकृतिक समाधान।
15	**निशान्त**	415	दस्त, पेचिश, आई बी एस, कोलाइटिस आदि का प्रभावी समाधान।

E. आसवन प्रक्रिया से बनाए गए कुछ प्राचीन प्राकृतिक अर्क :

1	**तुलसी अर्क**	501	फाइटोकेमिकल्स, एंटीऑक्सिडेंट और आवश्यक तेलों से समृद्ध। एक प्राकृतिक प्रतिरक्षा बूस्टर, सामान्य सर्दी, खांसी और बुखार को दूर रखता है। अस्थमा, सी ओ पी डी और ब्रोंकाइटिस जैसे सभी श्वसन विकारों में सबसे उपयोगी। अल्सर, कब्ज आदि में भी लाभकारी।
2	**पुदीना अर्क**	502	पाचन सम्बन्धी समस्याओं, अपच, पेट में बेचैनी, भारीपन, पेट फूलना, मतली, उल्टी, पेट दर्द, सूजन आदि में उपयोगी। पेट के स्तर पर पित्त और वात को संतुलित करता है।
3	**नीम अर्क**	503	रोगाणुरोधी, सूजनरोधी और एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर। एक प्रतिरक्षा बूस्टर, रक्त शोधक, संक्रमण, सूजन और कैंसर कोशिकाओं से लड़ने में सक्षम। श्वसन, पाचन, दंत और त्वचा रोगों में भी उपयोगी।

F. हमारे नेत्र रक्षा सम्बन्धी उत्पाद

1	**गुलाब जल आई ड्रॉप्स**	601	आसवन प्रक्रिया के साथ बनाया गया 100% शुद्ध गुलाब जल। कई नेत्र रोगों का एक प्रभावी समाधान।
2	**नेत्रामृत**	602	इसके नियमित उपयोग से चश्मा दूर रहेगा। आंखों के कई रोगों को ठीक करता है। कंप्यूटर, मोबाइल जैसी स्क्रीन पर अधिक काम करने वालों के लिए वरदान स्वरुप। आंखों की रोशनी और आंखों की बीमारियों के लिए प्रभावी होने के कारण, कुछ सेकंड के लिए आंखों में थोड़ी उत्तेजना होती है जो कुछ सैकड़ों में ही धीरे धीरे ठीक हो जाती है।
3.	**मोतियाबिंद नाशक** **Cataract cure**	603	कच्चे मोतियाबिंद को बिना सर्जरी के ही गला कर समाप्त करने में सक्षम, लेकिन मोतियाबिंद पक जाने पर कोई भी लाभ नहीं कर सकता। एक 100 % धर्मार्थ उत्पाद। हमारे क्लीनिक से कोई भी व्यक्ति निःशुल्क प्राप्त कर सकता है। दूर दराज़ के लोग भी केवल कोरियर शुल्क दे कर निसंकोच ले सकते हैं।

G. हमारे विशिष्ट उपयोग के तेल

1.	**न्यूरोशांतक**	701	हर तरह के जोड़ों के दर्द, स्पोर्ट्स इंजरी, मांसपेशियों के दर्द आदि में तुरन्त आराम देने में सक्षम। यह तुरन्त आराम देने के लिए एक दर्द निवारक (पेन किलर) के रूप में काम करता है।

2.	**रुहमा ऑयल**	702	सभी प्रकार के जोड़ों के दर्द, अर्थराइटिस, गठिया, स्पोर्ट्स इंजरी आदि सभी वात रोगों के दीर्घकालिक उपचार में सहायक। धीरे धीरे लगातार स्थाई आराम देने में सक्षम।
3.	**पक्षाघातान्तक ऑयल**	703	पक्षाघात (पैरालिसिस) के उपचार में और उसके स्थाई उपचार में अत्यंत सहायक।
4.	**लौंग का तेल**		दांत दर्द, मसूड़ों की समस्याओं, जोड़ या मांसपेशियों के दर्द और फंगल इन्फेक्शन आदि में तेज़ी से राहत देने में सक्षम।
5.	**नीम का तेल**	704	दांतों की देखभाल के लिए अद्‌वितीय रूप से अत्यंत उपयोगी। दांतों की सड़न और मसूड़ों की बीमारियों को रोकने में अद्‌वितीय। नियमित रूप से अपने टूथ ब्रश पर थोड़ा सा टूथ पेस्ट फैला कर उसके ऊपर दो बूंद नीम का तेल डाल कर ब्रश करने से कैबिटी सहित दांतों के समस्त रोगों से लम्बे समय तक सुरक्षित रखने में अत्यधिक सक्षम।

H. हमारे ट्रॉमा केयर उत्पाद

1.	**दाह - हरु**	801	जल जाने की स्थिति में उपयोगी। जली हुई त्वचा को जल्दी ठीक करने में उपयोगी। जल जाने पर ज़ल्दी ही लगा लेने पर छाले न पड़ने ने में भी सक्षम।

I. हमारे सिर और बाल सम्बन्धी उत्पाद

1	**रूक्षतामृत**	901	सिर की रूसी, बाल झड़ना, कैनाइटिस (समय से पहले बालों का सफ़ेद होना) आदि में अत्यन्त उपयोगी। किसी भी प्रकार के केमीकल से रहित एक बिल्कुल प्राकृतिक क्लींजर और कंडीशनर, बालों का स्वास्थ्य रक्षक, रूसी, बालों का झड़ना और पहले ही सफैद होने आदि का प्रभावी उपचारक।
2.	**केश तरंग**	902	बालों का प्राकृतिक रक्षक, बालों को लंबा और काला करने और लम्बे समय तक उनके स्वास्थ्य की रक्षा करने में पूर्णतया सक्षम। चूर्ण के रूप में एक प्रकार का प्रभावी सारकृत (कंसंट्रेट) शैम्पू और कंडीशनर जिसे प्रयोग के पहले कुछ घंटों तक पानी में भिगो कर तरल (लिक्विड) रूप में उपयोग करना होता है।

J. हमारे सामान्य स्वास्थ्य रक्षक उत्पाद

1.	**शिलाजीत**	1101	फुल्विक एसिड और 84 आवश्यक खनिजों से समृद्ध एक प्राकृतिक स्वास्थ्य पूरक। स्वाभाविक रूप से ऊर्जा और सहनशक्ति को बढ़ाता है, संज्ञानात्मक कार्य में सुधार करता है, प्रतिरक्षा को मजबूत करता है, हृदय स्वास्थ्य का समर्थन करता है, हार्मोन को संतुलित करता है, प्रजनन क्षमता में सुधार करता है, हड्डियों को मजबूत करता है और नींद की गुणवत्ता में सुधार करता है।

2.	**तुलसी के पत्ते**	1102	फाइटोकेमिकल्स, एंटीऑक्सिडेंट और आवश्यक तेलों से समृद्ध। प्राकृतिक छायादार धूप में सुखाए गए तुलसी के पत्ते। प्रतिरक्षा प्रणाली, तंत्रिका तंत्र, हृदय, श्वसन संबंधी समस्याओं, खांसी, जुकाम, बुखार, संक्रमण आदि में उपयोगी।
3.	**नीम कैप्सूल**	1103	छायादार धूप में सुखाए गए नीम के पत्तों का चूर्ण कैप्सूल में। शक्तिशाली सूजनरोधी, रोगाणुरोधी और एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर। मलेरिया, डेंगू, चिकनगुनिया, टाइफाइड और वायरल बुखार जिसमें पोलियोवायरस, एचआईवी, कॉक्ससैकी बी ग्रुप वायरस आदि शामिल हैं, के इलाज में लाभकारी। हृदय, रक्त वाहिकाओं, यकृत, गुर्दे, गैस्ट्रिक अल्सर, मधुमेह, आंतों के कीड़े, कुष्ठ रोग, यूटीआई, मसूड़ों के रोग, नेत्र विकार, अस्थमा, सीओपीडी, कम शुक्राणुओं की संख्या, बवासीर और यहां तक कि कैंसर जैसी समस्याओं में भी लाभकारी।
4.	**हर्बल टूथ पेस्ट**	1104	सामान्यतया बाजार में उपलब्ध ब्रांडेड हर्बल टूथ पेस्ट में भी केवल 10-15% जड़ी-बूटियाँ और शेष रसायन होते हैं; जबकि इस पेस्ट में 67% जड़ी-बूटियाँ होती हैं, उनमें से कुछ उपयोग किए जाने वाले रसायनों के प्रभाव को काफी कम करने में भी सक्षम हैं। टूथ ब्रश पर थोड़ा सा पेस्ट फैलाएं, हमारे नीम के तेल की दो बूंदें डालें। कैविटी और दांत और मसूड़ों की अन्य समस्याओं को दूर रखने के लिए नियमित रूप से उपयोग करें।

5.	**हवन धूप**	1105	सिंथेटिक सुगंध मुक्त, लेकिन उत्तम क्वालिटी की शुद्ध जड़ी बूटियों की प्राकृतिक सुगन्ध से भरपूर शुद्ध धूप। व्यस्त जीवन शैली के कारण दैनिक हवन करने जैसी संस्कृति के पालन की असमर्थता का बिल्कुल सरल विकल्प। रोजाना बस एक धूप जलाएं और पूजा के साथ साथ कम से कम अपने घर की हवा और पर्यावरण को शुद्ध करके प्रदूषण को दूर करें। बदले में बैक्टीरिया, वायरस आदि को मार कर अनेक बीमारियों से बचें। इसमें मौजूद जड़ी बूटियां अनेक प्रकार के बैक्टीरिया, वायरस जैसे कीटाणुओं का नाश करने और उनके संक्रमण के कारण होने वाली बीमारियों से बचाने में अत्यन्त सक्षम हैं। साथ ही फेफड़े, श्वसन तंत्र सम्बन्धी अनेक बीमारियों के उपचार में सहायक भी हैं।
6	**हवन सामग्री**		सभी रोगों के उपचार हेतु रोगनुसार तथा स्वस्थ्य अवस्था में किए जाने वाले यज्ञ की ऋतुओं के अनुसार कम से कम 5 किलो के आर्डर पर उपलब्ध